 ੧ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

भादों-आश्विन, संवत् नानकशाही ५४०

सितंबर **2008** वर्ष २ अंक १

संपादक — सिमरजीत सिंह, *एम. ए, एम. एम. सी.*

सहायक संपादक — सुरिंदर सिंह निमाणा, *एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बीएड.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव

धर्म प्रचार कमेटी

(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59



एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग **303**

संपादन विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

यदि आपको 'गुरमति ज्ञान' नहीं मिला या आप चंदे सम्बंधी कोई जानकारी लेना चाहते हैं या अपना पता बदलवाना चाहते हैं या कोई और जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं तो मो: नं: ०९८१४८-९८००१ पर संपर्क करें।

विषय सूची

गुरबाणी विचार

असुनि आउ पिरा . . .

असुनि आउ पिरा सा धन झूरि मुई ॥
त मिलीऐ प्रभ मेले दूजै भाइ खुई ॥
झूठि विगुती ता पिर मुती कुकह काह सि फुले ॥
आगै घाम पिछै रुति जाडा देखि चलत मनु डोले ॥
दह दिसि साख हरी हरीआवल सहजि पकै सो मीठा ॥
नानक असुनि मिलहु पिआरे सतिगुर भए बसीठा ॥ *(पन्ना ११०८-०९)*

पहले पातशाह श्री गुरु नानक देव जी बारहमाहा तुखारी में अंकित इस पावन पउड़ी में आश्विन मास के मौसम, प्राकृतिक वातावरण एवं वनस्पति चित्रण के माध्यम से जीव-स्त्री की प्रभु से बिछोड़े की मनोस्थिति की ओर संकेत करते हुए निर्मल, आध्यात्मिक व रूहानी गुणों का संचार करने द्वारा प्रभु-मिलन के गुरमति मार्गदर्शन का महान परोपकार करते हैं।

प्रभु से बिछुड़ी जीव-स्त्री की ओर से गुरु जी फरमान करते हैं कि आश्विन का महीना आ गया है। हे मेरे प्रियतम! अब तो मेरे हृदय-घर में आ बसो, क्योंकि सांसारिक व्यवसायों एवं विकारों में उलझ कर मेरी स्थिति मृत्यु के समान हुई पड़ी है। हे प्रभु! यदि आप अपनी कृपा-दृष्टि करें तभी आप अपना मिलन बख्शिश करते हो वरना दूसरे प्यार अथवा सांसारिक लगाव की अधिकता की स्थिति में बेचारी जीव-स्त्री अपने प्रियतम को नहीं मिल सकती, वह तो अनावश्यक सांसारिक झंझटों के चक्र में ही खो जाती है।

जो संसार अस्थाई है, कूड़ है, उसमें उलझकर तो जीव-स्त्री दुख ही भोगती है। आश्विन मास में दरियाओं के किनारे जो पिलछी एवं कांस फूली हुई है, हे स्वामी! उसे देखकर मैं निमाणी जीव-स्त्री को अपनी तीव्र गति से आ रही वृद्धावस्था का ख्याल सताता है। जो ऊष्णता का समय व्यतीत हुआ है (गर्मी के गुजर चुके मौसम में) वह ऊर्जा से भरपूर था, मन एवं तन शक्तिशाली थे, परंतु आगे तो शीत ऋतु आती दिखाई दे रही है, उसका ख्याल करके मन डूबता है, डगमगाता है।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि आश्विन मास की इस ऋतु का गुण भी तो है। दसों दिशाओं में वनस्पति हरी-भरी है। इस हरियाली को देखकर तसल्ली एवं धैर्य भी हो रहा है कि यदि मैं जीव-स्त्री सहज गुरमति मार्ग को अपना लूं तो मीठा फल आगामी समय में मिल जाएगा। हे प्रियतम! आश्विन के महीने में तू मुझ जीव-स्त्री को गुरु के द्वारा आ मिल, तभी मेरा आश्विन का समय सौभाग्यशाली हो सकेगा।





श्री गुरु ग्रंथ साहिब की गुरगद्दी दिवस की तीसरी शताब्दी मनाने का सुअवसर

विश्व धर्म-ग्रंथों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब बहुपक्षीय गुणों सहित अपना विलक्षण रूपाकार एवं आधार रखते हैं। धर्म-ग्रंथ की रचना प्राय: किसी भी धर्म में उसकी स्थापना के तत्काल पश्चात होना संभव नहीं है जबकि सूक्ष्म रूप में उस धर्म के संस्थापक की एवं उसके प्रवर्त्तकों की मूल शिक्षाएं तथा निर्मल उपदेश उस धर्म के धर्म-ग्रंथ की सृजन-प्रक्रिया को उसकी स्थापना के समय ही गतिमान कर देते हैं। इस प्रसंग में हम निश्चय के साथ कह सकते हैं कि सिख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक देव जी द्वारा बख्शिश किये निर्मल उपदेश जो आप जी ने देश-विदेशों में जनसाधारण को समय-समय पर दिये, वही कालांतर में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के गुरगद्दी काल में श्री आदि ग्रंथ साहिब जी के रूप में संकलित हुए और उन्हीं की आधारशिला पर श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी और श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने-अपने गुरगद्दी काल में पावन बाणी उच्चारण करने का निरंतर प्रवाह जारी रखा।

सभी गुरु साहिबान ने पावन बाणी को लिखने तथा संभालने के प्रसंग में हरेक संभव प्रयास किया। इसी प्रकार श्री गुरु नानक देव जी महाराज से ही भक्त साहिबान द्वारा रचित पावन बाणी को एकत्रित करने का कार्य भी आरंभ हो चुका था और यह कार्य श्री गुरु अरजन देव जी के समय तक निरंतर चलता रहा। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उदासियों के दौरान पावन बाणी के लिखित स्वरूप वाली पोथी का भाई गुरदास जी द्वारा रचित वारों में उल्लेख मिलता है। गुरु जी द्वारा पाकपटन जाकर शेख फरीद शकरगंज के उतराधिकारी से उनकी पावन बाणी लेकर आने का उल्लेख सिख इतिहास में आता है। इससे स्पष्ट संकेत मिलता है कि एक सर्वसांझे विलक्षण धर्म-ग्रंथ की सृजना करने की योजना मूल रूप में गुरु नानक पातशाह की ही थी जिसे पंचम पातशाह ने अद्वितीय सूझ एवं क्षमता से सन् १६०४ ई में श्री अमृतसर में स्थित श्री रामसर के पावन रमणीय स्थान पर भाई गुरदास जी के हाथों लिखवाकर मूर्तिमान किया और इसको पूर्ण सत्कार के साथ एक भव्य नगर-कीर्तन के रूप में श्री रामसर के स्थान से लाकर श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में स्थापित किया। यह एक प्रकार से सिख पंथ को धार्मिक, नैतिक, रूहानी अगुआई लेने हेतु पूर्ण धर्म-ग्रंथ के रूप में सौंपे जाना स्वीकार किया जा सकता है। इस पावन ग्रंथ को पढ़कर संगतों को बाणी श्रवण कराने की महान सेवा गुरु-घर में विद्यमान आदरणीय व्यक्तित्व बाबा बुड्ढा जी को प्राप्त हुई। आदि श्री ग्रंथ साहिब का विशेष सत्कार करने की निर्मल परंपरा श्री गुरु अरजन देव जी ने स्वयं निज उदाहरण प्रस्तुत करते हुए स्थापित की। बाणी का विशेष सत्कार करने की उदाहरणों से हमारा गुर-इतिहास/सिख-इतिहास परिपूर्ण है।

सन् १७०६ में तख्त श्री दमदमा साहिब तलवंडी साबो की पावन धरती पर दशम पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री आदि ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप को भाई मनी सिंघ जी से पुन: लिखवाते हुए इसमें नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर जी की पावन बाणी को रागों के

अनुसार शामिल किया। इस प्रकार इस पावन स्थान पर श्री आदि ग्रंथ साहिब को सम्पूर्णता प्राप्त हुई।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ज्योति जोति समाने के पूर्व श्री आदि ग्रंथ साहिब को, परिक्रमा करके, शीश झुकाकर एवं माथा टेक गुरगद्दी प्रदान करके सिख पंथ को श्री गुरु ग्रंथ साहिब का दामन स्थाई रूप से पकड़ाकर जागत ज्योति 'गुरु' के अधीन किया। यह महान अद्वितीय कारनामा सन् १७०८ में तख्त सचखंड श्री हजूर अबिचल नगर साहिब, नांदेड़ में हुआ। तब से सिख पंथ केवल तथा केवल शबद-गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के निर्मल नेतृत्व में जीवन-यापन करता आ रहा है। एक सच्चे सिख की परिभाषा ही यह है कि—"जो स्त्री या पुरुष एक अकाल पुरख, दस सिख गुरु साहिबान (श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ साहिब तक), श्री गुरु ग्रंथ साहिब और दस गुरु साहिबान की बाणी तथा शिक्षा और दशमेश जी के अमृत पर निश्चय रखता है और किसी अन्य धर्म को नहीं मानता, वह सिख है।"

हम बहुत सौभाग्यशाली हैं कि हमारे जीवन-काल में श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरगद्दी प्राप्त होने की तीसरी शताब्दी का सुअवसर आ रहा है। इस सुअवसर को पंथक जाहो-जलाल से मनाने की तैयारियां सिख पंथ के विभिन्न संगठनों एवं जत्थेबंदियों के द्वारा व्यापक स्तर पर हर्षोल्लास, उत्साह एवं चाव के साथ विभिन्न रूपों-विधियों से जारी हैं जो कि अच्छी व संतोषजनक बात है। गत वर्ष से श्री हजूर साहिब से शुरू हुई 'जागृति यात्रा' श्री गुरु ग्रंथ साहिब का निर्मल संदेश देश भर में पहुंचाने के उद्देश्य से जारी है। यूं 'पीऊ दादे' के इस अपूर्व खजाने के दुर्लभ मानक-मोती-हीरे-जवाहरात रूपी निर्मल विचार-भाव जहां सिख पंथ पढ़, सुन, समझ, अपनाकर गुरु-बख्शी सिखी जीवन-युक्ति को सुदृढ़ कर रहा है वहां कुल दुनिया भी इस धर्म-ग्रंथ को विश्व धर्म के रूप में अपनाने के लिए अपनी जिज्ञासा दर्शाने लगी है। दुनिया भर के जाने-माने विभिन्न देशों तथा भाषाओं से संबंधित विद्वान समस्त विश्व को इसकी विलक्षण रूहानी, नैतिक और सर्वसांझी विचारधारा का सत्य बताने की दिशा में कार्यरत हैं। ऐसे प्रयास स्पष्ट संकेत दे रहे हैं कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब आने वाले समय में समस्त मानवता के आदर्शतम पथ-प्रदर्शक के रूप में स्वीकृत होंगे। यह नानक नाम-लेवा सिख पंथ के लिए अत्यंत गौरव महसूस करने योग्य बात है। परंतु साथ ही सिख पंथ के लिए जबकि समस्त दुनिया शबद गुरु की तरफ रूहानी और नैतिक अगुआई के लिए ताक रही है, यह आत्म-विश्लेषण और गहन-चिंतन करने का अवसर है कि हम स्वयं अपने इस धर्म-ग्रंथ की शिक्षाओं तथा निर्मल उपदेशों को किस सीमा तक सुन, समझ और अपना सके हैं और दुनिया को इसके बारे में बता सकने की हम कितनी क्षमता प्राप्त कर चुके हैं। सिख अपने शबद-गुरु अनुसारी जीवन-यापन के माध्यम से एक धर्म-प्रचारक है। मूल-मंत्र से लेकर 'अठारह दस बीस' तक इस पावन ग्रंथ की प्रत्येक पावन बाणी चाहे वह गुरु साहिबान की उच्चारण की है या भक्त साहिबान की या भट्ट साहिबान की या गुरु-घर के निकटवर्ती सिखों की, हमें प्रभु-नाम जपने, किरत करने, बांट कर खाने, मिल-जुल कर प्यार के साथ रहने, सरबत्त का भला चाहने एवं सत्यवादी आचरण करने जैसे निर्मल संदेश व उपदेश प्रदान करती है। इसकी प्रत्येक पावन पंक्ति और प्रत्येक शब्द/अक्षर निर्मल जीवन-यापन का संदेश मनुष्य-मात्र को दे रहा है। अत: श्री गुरु ग्रंथ साहिब की तीसरी गुरगद्दी दिवस की शताब्दी मनाते हुए आवश्यकता है इस पावन धर्म-ग्रंथ की निर्मल अगुआई में हमारी ओर से आत्म-समर्पण की, जिसमें हमारी और समस्त विश्व की सभी वर्तमान समस्याओं का समाधान विद्यमान है। 

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के बाणीकार

-*श्रीमती शैल वर्मा**

१) श्री गुरु नानक देव जी (१४६९ ई से १५३९ ई): आपकी बाणी के कुल शबद ९७३ हैं जो १९ रागों में हैं। आपके द्वारा उच्चारण की गयी बाणियां इस प्रकार हैं— जपु जी साहिब, सिध गोसटि, दखणी ओंकार, पटी, तीन वारें, बारह माह तुखारी, बाबर बाणी, वणजारे, सोदरु, आरती, फुटकल शब्द, पहरे, अष्टपदियां, सोलहे, छंद, श्लोक आदि।

२) श्री गुरु अंगद देव जी (१५०४ ई से १५५२ ई): आपकी बाणी ६३ श्लोकों में है। श्री गुरु अंगद देव जी को १५३९ ई में गुरगद्दी पर बैठने का गौरव प्राप्त हुआ।

३) श्री गुरु अमरदास जी (सन् १४७९ ई से १५७४ ई) : आपकी बाणी के ८९१ शब्द हैं। ये १७ रागों में संग्रहीत हैं। आपका जन्म अमृतसर के निकट गांव बासरके में हुआ। १५५२ ई में गुरगद्दी पर बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

४) श्री गुरु रामदास जी (सन् १५३४ ई से १५८१ ई) : श्री गुरु रामदास जी सिख मत के चौथे गुरु थे। आप ने ६४४ शबदों की रचना की जो ३० रागों में उपलब्ध हैं। आपका जन्म लाहौर में हुआ था। आपका विवाह श्री गुरु अमरदास जी की सपुत्री बीबी भानी जी से सम्पन्न हुआ। आप जी द्वारा उच्चारण की गई प्रमुख बाणियां— चउपदे, अष्टपदियां, छंद, सोलहे, अठवारां (सिरीरागु तथा गउड़ी राग में श्लोक, पहरे, वणजारे करहले, घोड़ियां आदि)।

५) श्री गुरु अरजन देव जी (१५६३ ई से १६०६ ई) : आप सिख मत के पांचवें गुरु हुये। आपका जन्म गोइंदवाल साहिब में श्री गुरु रामदास जी के घर हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपके कुल पद २३१३ हैं जो ३० रागों में निबद्ध हैं। आपकी प्रमुख बाणियां— सुखमनी साहिब, बावन अखरी, बारामाह (राग माझ), गाथा, सहसकृति, फुटकल फुनहे, पहरे, शबद, छंत डखणे, अष्टपदियां, श्लोक आदि। आप सिख धर्म के प्रथम शहीद हैं और प्रथम सम्पादक भी। श्री गुरु ग्रंथ साहिब श्री गुरु अरजन देव जी के अथक प्रयास का परिणाम हैं। पाखंडियों को दरकिनार कर सच्ची बाणी को एकत्रित करना तत्कालीन परिस्थिति में एक मुश्किल एवं चुनौतिपूर्ण कार्य था, किन्तु गुरु जी ने कर दिखाया। आपने सिखी के उसूलों की रक्षा हेतु शहीद होना स्वीकार किया। लाहौर में जहांगीर का मकबरा और श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी का स्थान पास-पास स्थित है। गुरु जी के शहीदी स्थान पर सभी धर्मों से सम्बंधित श्रद्धालुओं की भीड़ लगी रहती है और जहांगीर जैसे सम्राट के मकबरे में अंधेरा छाया रहता है।

६) श्री गुरु तेग बहादर जी (१६२१ ई से १६७५ ई) : आपके श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कुल शबद ११६ हैं जो १५ रागों में रचित हैं। आपका जन्म अमृतसर में हुआ। आप १६६४ से १६७५ तक गुरगद्दी पर सुशोभित रहे। केवल श्री गुरु तेग बहादर जी ने राग जैजावंती का

**४८ सागर सदन (पुलिस चौकी के पीछे) गांधी नगर, बस्ती (उ. प्र.)-२७२००१*

प्रयोग किया। आपने कुल १५ रागों में बाणी की रचना की, जो इस प्रकार है— गउड़ी, आसा, देवगंधारी, बिलावल, बिहागड़ा, सोरठि, धनासरी, जैतसरी, टोडी, तिलंग, रामकली, मारू, बसंत, सारंग और जैजावंती।

ये तो हो गये बाणी रचयिता गुरु साहिबान। दूसरे क्रम पर हैं भारत के संत-भक्त एवं सूफी फकीर, तीसरे क्रम पर गुरु-घर के निकटवर्ती गुरसिख एवं सिख कीर्तनकार तथा भट्ट बाणीकार। भक्त साहिबान का विवरण इस प्रकार है :

१) शेख फरीद जी : आप जी के कुल ११६ शब्द और श्लोक दो रागों—राग आसा और राग सूही में हैं। शेख फरीद जी एक सूफी संत थे। आपका जन्म ११७३ ई में हुआ। आपके व्यक्तित्व- निर्माण में माता का प्रमुख हाथ रहा। परम धार्मिक बुद्धि के मालिक शेख फरीद जी १६ वर्ष की आयु में माता-पिता के साथ हज करने को मक्का गये। शेख फरीद जी ने गृहस्थी जीवन-यापन किया। आपके पांच पुत्र और तीन पुत्रियां थीं। आपका देहावसान १२६६ ई में हुआ। शेख फरीद जी के बाद पाकपट्टन स्थित दरगाह में उनकी गद्दी स्थापित की गयी जो आज तक चल रही है। शेख फरीद जी के देहावसान के तीन सौ वर्ष बाद श्री गुरु नानक देव जी, उनके गद्दी के बारहवें उत्तराधिकारी शेख इब्राहम के पास गये, उनके साथ ज्ञान-चर्चा करके शेख फरीद जी की बाणी ले आये। बाद में श्री गुरु अरजन देव जी ने इस बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित किया। शेख फरीद जी की कुछ पावन बाणी को और स्पष्ट रूप देने के लिये श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी और श्री गुरु अरजन देव जी के कुछ श्लोक टिप्पणियों के रूप में हैं।

२) भक्त जैदेव जी : भक्त जैदेव जी का जन्म १२०१ ई को बंगाल में वीर भूमि जिले के केंदली गांव में हुआ माना जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त जैदेव जी के दो शबद संकलित हैं—एक राग गूजरी में और दूसरा राग मारू में है।

३) भक्त त्रिलोचन जी : भक्त त्रिलोचन जी का जन्म १२६८ ई में गांव बारसी जिला सोलापुर (महाराष्ट्र) में इक ब्राह्मण परिवार में हुआ। आपके कुल चार शबद श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित हैं—एक सिरीरागु में, एक धनासरी राग में तथा दो शबद गूजरी राग में हैं।

४) भक्त नामदेव जी (१२७१ ई से १३५१ ई) : आपका जन्म महाराष्ट्र के जिला सतारा के नरसी बामणी नामक गांव में हुआ। आपके पिता का नाम दामखेती, माता का नाम गोना बाई था। भक्त नामदेव जी के चार पुत्र, एक कन्या थी। भक्त नामदेव जी एक महान आत्मज्ञानी भक्त हुये। जीवन का अधिकांश भाग उन्होंने जिला शोभा पट के ग्राम पिंडरपुर में व्यतीत किया। आप वृद्ध अवस्था में तीर्थ-यात्रा के सिलसिले में पंडित ज्ञानदेव के साथ पंजाब के जिला गुरदासपुर के घुमाण ग्राम में पहुंचे। भक्त जी काफी लंबा समय यहां रहे और लोगों में प्रभु-भक्ति हेतु चेतना व संवदेना जागृत की। इसी ग्राम में उनका देहांत हुआ। इस गांव में माघ के द्वितीय को भक्त नामदेव जी की याद में मेला लगता है। नामदेव गाथा मराठी भाषा में उपलब्ध है दोहे के रूप में। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त नामदेव जी के ६१ पद, १८ रागों में संकलित हैं। भक्त नामदेव जी कहते हैं कि सच्चे गुरु की संगत से व्यक्ति की

चिंताओं का निवारण हो जाता है।

५) भक्त रविदास जी (१३७६ ई) : भक्त रविदास जी का जन्म बनारस के आसपास हुआ। भक्त रविदास जी चर्मकार के व्यवसाय से रोजी-रोटी कमाते थे। परिश्रम करके खाने में गौरव महसूस करते थे। कर्मकांडी लोग विशेषकर काशी के, उन्हें पसंद नहीं करते थे। छोटी जाति के लोगों को कथा सुनने का अधिकार नहीं था। उन्होंने गिरी हुई सामाजिक व्यवस्था को अपनी पावन बाणी में स्वर दिया, सच्ची मानवता को प्रमुखता दी। जूते बनाने का कार्य करते हुये उन्होंने अद्वितीय रचनायें समाज को दीं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपके १६ रागों में ४० शब्द दर्ज हैं, जिनके अलग-अलग विषय हैं।

६) भक्त रामानंद जी (१३६६ ई से १४६७ ई) : आपका जन्म प्रयाग के कान्य कुब्ज ब्राह्मण परिवार में १३६६ ई में हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपके केवल एक श्लोक दर्ज है जो कि राग बसंत में है।

७) भक्त बेणी जी (१५वीं सदी) : आपका जन्म बिहार में हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपके तीन शबद हैं—सिरीरागु, रामकली और प्रभाती राग में।

८) भक्त सधना जी (१२वीं सदी) : आपका जन्म सिंध के सिखा गांव में हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपका केवल एक शबद राग बिलावल में संकलित है। आप कसाई कहे जाने वाले वर्ग से सम्बंधित थे। श्री गुरु अरजन देव जी ने आपकी बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्थान देकर सम्मानयोग्य बना दिया।

९) भक्त सैण जी (१३९० ई से १४४० ई): आप रीवां के राजाराम के यहां शाही नाई थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राग धनासरी में आपका केवल एक शबद संकलित है।

१०) भक्त धंना जी (१४१६ ई) : आप जाति के जाट थे। राजस्थान के धुआन नगर में किसान परिवार में पैदा हुये। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आप जी के ३ शबद संकलित हैं। ये राग आसा और धनासरी में हैं।

११) भक्त पीपा जी (१४२६ ई) : आपका जन्म गुजरात की एक रियासत गगरीनगढ़ के शाही खानदान में हुआ। भक्त पीपा जी का राग धनासरी में एक शबद है। आपका यह पद भी आरती के रूप में है।

१२) भक्त भीखण जी (सन् १४८० ई से १५७४ ई) : भक्त भीखण जी एक सूफी फकीर थे। आपका जन्म लखनऊ के काकोरी गांव में हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपके केवल दो पद संकलित हैं जो राग सोरठि में हैं।

१३) भक्त कबीर जी (सन् १३९८ ई से १५१८ ई) : भक्त कबीर जी का जन्म-स्थान काशी प्रसिद्ध है। भक्त कबीर जी ने समाधि-स्थल मगहर चुना। मगहर का शाब्दिक अर्थ मग=रास्ता, हर=ब्रह्म अर्थात् भगवान की राह। ध्यान रहे आबादी में रिहायशी जगह में भरसक कोई समाधि नहीं लेता और नदी के किनारे पंद्रहवीं शताब्दी में घर नहीं बनाये जाते थे। भक्त कबीर जी जहां रहते थे वह स्थान 'बड़गहन' के नाम से जाना जाता है। समाधि-स्थान मगहर में आज भी है। आसपास 'बड़गहन' भी है। बनारस में कबीर चौराहा है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भक्त साहिबान में से सबसे अधिक बाणी भक्त कबीर जी की है। आपके १६ रागों में ५३७ शबद श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित हैं। सच्ची बाणी के माध्यम से धर्म के नाम पर पाखंड का आवरण हटाने का कार्य भक्त कबीर जी ने किया। भक्त कबीर जी

जैसा अध्यात्म का ज्ञान विरले ही पाते हैं।

१४) भक्त परमानंद जी (१४८३ ई से १५९३ ई) : श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राग सारंग में आपका केवल एक ही शबद संकलित है।

१५) भक्त सूरदास जी (१५२९ ई) : भक्त सूरदास जी का केवल एक पद मिलता है जोराग सारंग में है।

चार गुरसिख :

१-२) भाई राय बलवंड और भाई सत्ता जी: आप दोनों साथी थे। श्री गुरु अरजन देव जी के समय के होने के कारण आपका जन्म १६वीं सदी में माना जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में रामकली राग में आपकी एक 'वार' लिखी हुयी है। ५ पउड़ियां राय वलवंड जी की और ३ पउड़ियां भाई सत्ता जी की हैं।

३) भाई मरदाना जी : आपका जन्म श्री गुरु नानक देव जी के जन्म-स्थान तलवंडी, जिला शेखूपुरा में हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपके नाम पर तीन श्लोक प्राप्त हैं, जो कि श्री गुरु नानक देव जी ने आपको संबोधित किए हैं। भाई मरदाना जी गुरु नानक देव जी के बचपन के साथी रहे, जीवन भर साथ निभाया।

४) बाबा सुंदर जी (१५६० ई से १६०३ ई): बाबा सुंदर जी श्री गुरु अमरदास जी के पड़पौत्र थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आपके रामकली राग में कुल ६ पदे हैं।

११ भट्ट बाणीकार एवं उनकी बाणी : १) भट्ट कल सहार जी के ५४ सवैये (२) भट्ट मथरा जी के १४ सवैये (३) भट्ट गयंद जी के १३ सवैये (४) भट्ट नल जी के १६ सवैये (५) भट्ट कीरत जी के ८ सवैये (६) भट्ट जालप जी के ५ सवैये (७) भट्ट बल जी के ५ सवैये (८) भट्ट सल जी के ३ सवैये (९) भट्ट भिखा जी के २ सवैये (१०) भट्ट हरिबंस जी के २ सवैये (११) भट्ट भल जी का १ सवैया।

उपसंहार : श्री गुरु ग्रंथ साहिब अनेक विलक्षणतापूर्ण विशेषतायों से भरा है। जहां इसमें आध्यात्मिक और दार्शनिक विचारों को व्यक्त किया गया है वहां यह एक महान साहित्यिक ग्रंथ भी है, जिसमें कई काव्य रूपों का प्रकगटावा है। सिख धर्म के इस पवित्र ग्रंथ में कई भाषाओं की शब्दावली उपलब्ध है, जिसने विश्व-बंधुत्व को उजागर किया है। उसकी आवश्यकता आज भी है।

सहायक पुस्तकें :

१) 'पंजाब सौरभ' पत्रिका।
२) 'गुरमति ज्ञान' पत्रिका।
३) 'कल्याण' पत्रिका का भक्त चरित्रांक।
४) 'हिंदी साहित्य का इतिहास' आचार्य रामचंद्र शुक्ल।
५) विभिन्न पत्रिकाओं के भक्त कबीर विशेषांक।



इका बाणी इकु गुरु इको सबदु वीचारि ॥
सचा सउदा हटु सचु रतनी भरे भंडार ॥

(पन्ना ६४६)

धुर की बाणी के प्रथम बाणीकार : श्री गुरु नानक देव जी

-डॉ. मनजीत कौर*

धुर की बाणी अर्थात् ईश्वर-प्रदत्त बाणी के प्रथम बाणीकार, सिख धर्म के प्रवर्त्तक श्री गुरु नानक देव जी (१४६९-१५३९ ई) द्वारा प्रणीत बाणी को 'गुरबाणी' की संज्ञा से अभिहित किया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु नानक देव जी की बाणी १९ रागों में 'महला पहला' प्रकरण से संकलित है। गुरदेव की सम्पूर्ण बाणी को विद्वानों ने कई भागों में विभक्त किया है। डॉ. रतन सिंघ (जग्गी) ने श्री गुरु नानक देव जी की बाणी को चार प्रमुख भागों में विभक्त किया है :

१. वृद्धाकार कृतियां
२. लघवाकार कृतियां
३. वार काव्य
४. फुटकल पद्य, श्लोक आदि।

वृद्धाकार अर्थात् बड़े आकार की बाणियों में जपु जी साहिब, सिध गोसटि, ओंकार, पटी, बारामाह तथा मलार, वार माझ, अलाहणीआ, कुचजी, सुचजी आदि प्रमुख पावन बाणियां हैं।

"*धुर की बाणी आई ॥ तिनि सगली चिंत मिटाई ॥*" अर्थात् इस इलाही बाणी के गायन तथा चिंतन से समस्त चिन्ताओं से मुक्ति सम्भव है, पर शर्त मात्र यह है कि वह हृदय से, अंतरात्मा से गाए।

श्री गुरु नानक देव जी ने पूरी तन्मयता एवं समग्रता के साथ ऐसा गाया कि गीत ही गुरु हो गया, गीत ही पारब्रहम परमेश्वर हो गया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की प्रारम्भता श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उच्चारित 'मूल-मंत्र' से होती है और जो सिख धर्म की बुनियाद है इसका उच्चारण गुरु साहिब ने सुल्तानपुर रहते हुए किया। गुरु जी नित्य 'वेईं' नदी में स्नान करने जाते। एक बार नदी में स्नान करने उतरे तो तीन दिन तक आलोप रहे। लोगों ने समझा कि श्री गुरु नानक देव जी नदी में डूब गए हैं, लेकिन समूची मानवता को वहमों-भ्रमों की दलदल से निकालने वाले खुद नदी में कैसे डूब सकते थे? इस बीच गुरु जी अकाल पुरख से साक्षात्कार कर 'न हिंदू न मुसलमान' का उच्चारण करते हुए नदी से बाहर निकले। लोगों के उस समय के मनोभावों को गुरदेव ने अपनी बाणी में स्पष्ट किया है :

कोई आखै भूतना को कहै बेताला ॥
कोई आखै आदमी नानकु वेचारा ॥

(पन्ना ९९१)

यही वह पावन स्थान था जहां श्री गुरु नानक देव जी ने 'मूल-मंत्र' का उच्चारण किया :

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

ੴ—ईश्वर एक है।
सति नामु—उसका नाम सत्य है।
करता पुरख—वह सम्पूर्ण सृष्टि का सृजनकर्त्ता है।
निरभउ—वह भय से रहित है।
निरवैरु—वह वैर-भाव से रहित है।

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-४*

अकाल मूरति—उसका अस्तित्व समय के प्रभाव से मुक्त है।
अजूनी—वह जन्म से रहित है।
सैभं—वह स्वयं से प्रकाशमान है।
गुर प्रसादि—उसे गुरु की कृपा से जप कर पाया जा सकता है।

पूर्ण गुरु की रहमत से ही उस ईश्वर की अनुभूति होती है। जपु जी साहिब जो कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी का निष्कर्ष है, के अनुसार श्री गुरु नानक देव जी से जब सिद्धों ने सवाल किया कि हमारी जाति 'आई' है, तुम्हारी जाति कौन सी है? गुरदेव का कितना संतोषजनक जवाब था :

आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु ॥
(पन्ना ६)

अर्थात् सबको अपनी ही जमात का समझना, किसी को छोटा या बड़ा न समझना ही हमारा पंथ (जाति) है। श्री गुरु नानक देव जी ने संस्कारों एवं रूढ़ियों को नए अर्थों में ग्रहण कर उच्च मानवीय मूल्यों की स्थापना की और *"मनि जीतै जगु जीतु"* का सिद्धांत प्रस्तुत किया। यह सिद्धांत था मन पर कंट्रोल पाने का, क्योंकि मन पर विजय पाकर ही सारी दुनिया पर विजय पाई जा सकती है। यह जीत तीर-तलवार या बम के गोलों की न होकर सिद्धांतों की जीत है और इस जीत के उपरांत मनुष्य जीवन रूपी बाजी जीत कर ही जाता है।

९ वर्ष की अवस्था में जनेऊ की रस्म अदा करने हेतु घर में एक समारोह का आयोजन किया गया। पंडित हरदयाल ने विधिवत पूजा के बाद बाल नानक देव जी को गले में जनेऊ डालने को हाथ बढ़ाया तो श्री गुरु नानक देव जी ने पंडित का हाथ पकड़ कर उन्हीं से सवाल कर दिया कि मुझे इस तरह का जनेऊ पहनाओ जिसमें 'दया' की कपास, 'संतोष' का सूत, 'जत' की गांठ तथा 'सत' का ऐंठन हो। उसमें ऊंचे एवं निर्मल किरदार का मालिक बनाने की सामर्थ्य हो। जो न कभी टूटे, न मैला हो, न जले और जिसे पहन कर पहनने वाला धन्य हो जाए। बाणी का प्रमाण है :

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु ॥
एहु जनेऊ जीअ का हई त पाडे घतु ॥
ना एहु तुटै न मलु लगै ना एहु जलै न जाइ ॥
धंनु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ ॥
(पन्ना ४७१)

यही नहीं जब गुरदेव से प्रश्न किया गया कि आपकी नजर में हिंदू बड़ा है या मुसलमान? सुंदर और सटीक जवाब था कि शुभ कर्मों के बिना दोनों ही व्यर्थ हैं। खुदा के दर पर वही कबूल है जो ऊंचे आचरण वाला हो, जिसके कर्म नेक हों। इस सन्दर्भ में हुए वार्तालाप का जिक्र भाई गुरदास जी ने अपनी पहली वार में किया है :

पुछनि गल ईमान दी काजी मुलां इकठे होई।
वडा सांग वरताइआ लखि न सकै कुदरति कोई।
पुछनि फोलि किताब नो हिंदू वडा कि मुसलमानोई?
बाबा आखे हाजीआ सुभि अमला बाझहु दोनो रोई। *(पउड़ी ३३)*

कर्मकांडों की तुलना गुरबाणी में बंजर भूमि से की गई है, जैसे बंजर भूमि में बोये गए बीज तथा उस पर की गई सारी मेहनत व्यर्थ जाती है। गुरदेव ने निर्मल उपदेश द्वारा करनी और कथनी की समानता पर बल देते हुए लोकाचार एवं व्यर्थ के आडंबरों से दूर रह कर 'नाम जपो, किरत करो, वंड छको' का संदेश दिया। मानवतावादी दृष्टिकोण की पुष्टि श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में सर्वत्र होती है। मानव-समाज में दलित वर्गों के प्रति उनकी

करुणा, न्यायपूर्ण समाज के लिए उनका समर्थन है तथा नीच एवं अछूत समझे जाने वालों को गले लगाकर उन्होंने ऐलान कर दिया:

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥
जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥ *(पन्ना १५)*

गुरु पातशाह इस शब्द में स्पष्ट कर देते हैं कि नीच या शूद्र कहे जाने वाले लोग ही तो मेरे मित्र हैं। मायाधारियों से तो मेरा कोई वास्ता ही नहीं, क्योंकि गुरदेव को ईश्वर की रहमतें वहां बरसती दिखाई देती हैं जहां गरीबों, असहायों की सार-सम्भाल होती है। यही नहीं, मीठे वचनों एवं विनम्रता को समस्त गुणों का सार-तत्व बताते हुए प्रमुख रचना 'आसा की वार' में सिम्बल वृक्ष का उदाहरण देकर बहुत सुंदर दृष्टांत प्रस्तुत किया है :

सिंमल रुखु सराइरा अति दीरघ अति मुचु ॥
ओइ जि आवहि आस करि जाहि निरासे कितु ॥
फल फिके फुल बकबके कंमि न आवहि पत ॥
मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥
सभु को निवै आप कउ पर कउ निवै न कोइ ॥
धरि ताराजू तोलीऐ निवै सु गउरा होइ ॥
अपराधी दूणा निवै जो हंता मिरगाहि ॥
सीसि निवाइऐ किआ थीऐ जा रिदै कुसुधे जाहि ॥ *(पन्ना ४७०)*

गुरदेव ने स्पष्ट किया कि सिम्बल (सिंमल) का पेड़ बहुत लंबा, घना होता है लेकिन उस पर आकर बैठने वाले पक्षी निराश हो जाते हैं, क्योंकि इस वृक्ष के फल फीके (नीरस) तथा फूल भी बेस्वादी होते हैं। अक्सर वृक्षों के पत्ते काम आते हैं लेकिन इस वृक्ष के पत्ते भी किसी काम नहीं आते। गुरदेव के चिन्तनानुसार विनम्रता में मिठास है और सभी गुणों का सार-तत्व विद्यमान है। दुनिया में सभी अपने स्वार्थ के लिए झुकते हैं, परोपकार के लिए नहीं। परन्तु यह बात पक्की है कि तराजू का जो पलड़ा झुकता है वही भारी होता है। जैसे कि आम धारणा है कि फलों वाले वृक्ष झुक जाते हैं। यहां श्री गुरु नानक देव जी बड़े पते की बात बता रहे हैं कि अपराधी ज्यादा झुकता है। जैसे हिरन को मारने वाला शिकारी जब निशाना साधता है तो यूं प्रतीत होता है मानो किसी को अष्टांग प्रणाम कर रहा हो, लेकिन उसका मन्तव्य तो हिरन को मारना ही होता है। गुरदेव स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि मात्र सिर झुकाने से क्या होगा जब हृदय अशुद्ध हो! कहने से अभिप्राय, दिखावे की विनम्रता से कुछ भी संवरने वाला नहीं क्योंकि वह ईश्वर तो अंतरयामी है। हमारे हृदय में क्या चल रहा है, वह सब कुछ जानता है। स्पष्ट है कि दुनिया में आकर कोई बड़ा नाम रखवा ले, बहुत धनवान हो जाए, दौलत से सुखों के अनेक साधन भी जुटा ले, अगर उसके हृदय में परोपकार की भावना और विनम्रता नहीं तो उसकी जिन्दगी बर्बाद ही समझो। गुरबाणी का प्रमाण है :

जे को नाउ धराए वडा साद रहे मनि भाणे ॥
खसमै नदरी कीड़ा आवै जेते चुगै दाणे ॥
मरि मरि जीवै ता किछु पाए नानक नामु वखाणे ॥ *(पन्ना ३६०)*

यही नहीं श्री गुरु नानक देव जी के एक शब्द ने सज्जन ठग जैसों को, जो सज्जनता का ढोंग करके भोली-भाली मानवता को लूट रहे थे, वास्तव में 'सज्जन' बना दिया। वली कंधारी जैसे जो अपनी प्राप्तियों का अंहकार कर इंसान को इंसान नहीं समझते थे, उन्हें इंसानियत का

पाठ पढ़ा दिया। काजी-मुल्लां, पीर-फकीर, सिद्धों-नाथों, योगियों, पंडितों सबको विनम्रता का पाठ पढ़ा कर उस वाहिगुरु, अल्ला, खुदा, रहीम, करीम, ईश्वर, अकाल पुरख, जिस नाम से भी जानो, उससे जोड़ दिया। भाई गुरदास जी इस सन्दर्भ में बहुत सुंदर लिखते हैं :

गड़ बगदादु निवाइ कै मका मदीना सभे निवाइआ। (वार १:३७)

श्री गुरु नानक देव जी ने समता, एकता, भ्रातृ-भावना को दृढ़ करने के लिए संगत व पंगत की प्रारंभता की। यही नहीं स्त्री-पुरुष समन्वय-भाव को भी दृढ़ करने हेतु स्त्री के हक में बुलन्द नारा लगाया तथा सम्पूर्ण स्त्री जाति को गौरव व मान-सम्मान से जीने की अधिकारणी बना दिया। 'आसा की वार' बाणी में गुरु साहिब ने स्पष्ट कर दिया कि स्त्री को निम्न समझना, यह सिद्धांत मूल से ही गलत है। उनका पावन शब्द है :

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ॥
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ॥
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥
(पन्ना ४७३)

अर्थात् स्त्री से ही मनुष्य जन्म लेता है, स्त्री से ही सगाई तथा विवाह होता है, स्त्री द्वारा ही जगत में विकास का क्रम चलता है। यदि किसी स्त्री की मृत्यु हो जाए तो दूसरी स्त्री ढूंढी जाती है। स्त्री द्वारा ही घर-परिवार चलता है तथा एक समाज दूसरे से जुड़ता है। श्री गुरु नानक देव जी का पावन फरमान है कि उस स्त्री को मंदा क्यों कहा जाए जो वास्तव में पीरों, फकीरों, महापुरुषों, ऋषियों-मुनियों तथा राजाओं की जननी है?

अपने कर्मों को इन समस्त भेदभावों से ऊंचा कर सुधारने की हिदायत गुरबाणी में सर्वत्र दृष्टिगत होती है, जैसा कि श्री गुरु नानक देव जी जपु जी साहिब में जीव को सुचेत करते हैं:

करमी करमी होइ वीचारु ॥
सचा आपि सचा दरबारु ॥ (पन्ना ७)

गुरु पातशाह का पावन फरमान है :

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥
(पन्ना ८)

उस ईश्वर का नाम जपने वाले, हृदय में बसाने वाले अपनी जीवन रूपी कमाई सफल कर जाते हैं। ऐसे ही जीवों का मुख उज्जवल है इस लोक में तथा ईश्वर की दरगाह में भी। यही नहीं, ऐसे जीव केवल अपना ही उद्धार नहीं करते बल्कि अन्य अनेकों का भी उनके साथ उद्धार हो जाता है। आओ! वाहिगुरु के चरणों में अरदास करें जिससे हम गुरु नानक पातशाह की पावन बाणी को पढ़-सुन कर, हृदय में बसा कर अपना अमूल्य जीवन सफल कर सकें।



लोगु जानै इहु गीतु है इहु तउ ब्रहम बीचार ॥
(पन्ना ३३५)
सतिगुर बचन बचन है सतिगुर पाधरु मुकति जनावैगो ॥
(पन्ना १३०९)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का आधार : जपु जी साहिब

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जपु जी साहिब प्रथम बाणी है। इस बाणी की बहुत महानता है। इसको श्री गुरु ग्रंथ साहिब का आधार कह कर सम्मान दिया जाता है। इस बाणी पर चाहे "महल्ला" शब्द अंकित नहीं परंतु सभी विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि यह श्री गुरु नानक देव जी की रचना है। यह बाणी-रचना श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना १ से ८ तक अंकित है। इस बाणी की मनुष्य-जीवन के सभी पक्षों से महानता है। आध्यात्मिक पक्ष से यह अति रूहानी मंजिलों पर रूह को सफर करवाती है, यहां पर जाकर मनुष्य की बुद्धि और सभी चतुराई फेल हो जाती है। यह निरोल आध्यात्मिक क्षेत्र की केवल उच्तम रचना ही नहीं, बल्कि इसको पढ़ने, सुनने और विचार करने वाला इस लोक और परलोक दोनों जहानों में शोभा का पात्र बन जाता है। इतना ही नहीं, जपु जी साहिब की बाणी का हर रोज पाठ-पठन और गहन विचार मनुष्य को गुरु के साथ अभेद कर देता है। सिख धर्म में नित्तनेम की पांच बाणियों में से जपु जी साहिब प्रथम बाणी है। इसका हर रोज नित्तनेम करने का विधान है। केवल एक बार ही नहीं इसको हर रोज जितनी बार भी ज्यादा से ज्यादा पढ़ा, सुना और विचारा जाए, यह उतनी बार ही और ज्यादा आनंद प्रदान करती है। हर सिख-घर में अमृत समय इसका पाठ जरूरी तौर पर किया जाता है। इस बाणी का पाठ करने वाले को किसी प्रकार की भी चिंता नहीं रहती। यूं तो समूची गुरबाणी ही सभी प्रकार की चिंताएं दूर करने वाली है परन्तु जपु जी साहिब नित्तनेम की बाणियों में पहली बाणी और श्री गुरु ग्रंथ साहिब का आधार होने के कारण इस बाणी की विशेष महानता है। इस पर प्यार, सत्कार और विश्वास रखने वाले व्यक्ति को किसी दुनियावी वस्तु की चाह नहीं रह जाती है।

जपु जी साहिब की संरचना : जपु जी साहिब को किसी राग में अंकित नहीं किया गया। इसकी कुल ३८ पउड़ियां हैं। इसके प्रारंभ में मंगलाचरण का एक शब्द भी है और अंत में एक श्लोक। इस रचना का आरंभ "मूल-मंत्र" से होता है। यह मूल-मंत्र अकाल पुरख की, संक्षिप्त में विशेषताएं हैं। प्रभु एक है, उसका नाम सच्चा है, वो सारी सृष्टि का सृजक है, उसको किसी का डर नहीं, उसका किसी से वैर भी नहीं, उसको मृत्यु भी नहीं आती अर्थात व न तो जन्मता और न ही मरता है, वो योनियों में नहीं आता, वो अपने आप से ही हुआ है अर्थात वो किसी का पैदा किया हुआ नहीं है। ऐसे सर्वशक्तिवान और सरब कला समरथ अकाल पुरख की प्राप्ति, केवल गुरु की कृपा द्वारा ही होती है। मूल-मंत्र का पाठ इस प्रकार है :

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥ (पन्ना १)

मूल-मंत्र के पश्चात "जपु" बाणी का प्रारंभ होता है। "जपु" का अर्थ है : सुमिरन अथवा प्रभु का नाम-सुमिरन। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की समूची गुरबाणी का आधार भी नाम-सुमिरन ही है। सारी बाणी नाम-सुमिरन की ही व्याख्या है।

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केंद्र, गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५१८*

मंगलाचरण : मंगलाचरण के रूप में श्री गुरु नानक देव जी ने प्रभु को सृष्टि के आरंभ, मध्य और अंत में "सत्य" कहा है। वो स्थिर है, कभी भी बढ़ता और घटता नहीं है। वो सदीवी सत्य है और सत्य ही रहेगा :

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ (पन्ना १)

अति विशाल और सर्वकला समरथ प्रभु को न तो शौच-स्नान करने से, न ही चुप रहने से और न ही चतुराइयों से प्राप्त किया जा सकता है। प्रभु को केवल आंतरिक और बाहरी सचिआर जीवन से ही प्राप्त किया जा सकता है।

सचिआर : सचिआर क्या है और सचिआर कैसे बनें? सांसारिक झूठ के परदे से ऊपर कैसे उठा जाए?

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
(पन्ना १)

इसका उत्तर भी गुरु जी ने खुद ही अगली पंक्ति में दे दिया है कि उसके हुक्म (भाणे) में जीवन व्यतीत करने से सचिआर पद की प्राप्ति की जा सकती है :

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥
(पन्ना १)

"सचिआर" का अर्थ है जिसके हृदय में और बाहर सच हो। वो सच-आचारी जीवन व्यतीत करता है, सदैव प्रभु-हुक्म में रहता है। इस प्रकार सचिआर का अर्थ है—"सम्पूर्ण मनुष्य"।

कुछ विद्वानों ने जपु जी साहिब का केंद्रीय भाव *"किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि"* को माना है। गुरबाणी का मूल-मंतव्य मनुष्य को "सम्पूर्ण मनुष्य" बनाना है और जपु जी साहिब की बाणी भी इसी विचार पर केंद्रित है। सचिआर मनुष्य वो है जिसने सारे विकारों काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या आदि पर नियंत्रण कर लिया है और वो पर-निंदा, पर-धन, पर-तन आदि से रहित, सभी सद्गुणों से भरपूर है, वो सचिआर है। जपु जी साहिब की बाणी में 'सचिआर' पद तीन बार प्रयोग हुआ है :

१. किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
(पन्ना १)
२. नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ॥
(पन्ना २)
३. जे को बुझै होवै सचिआरु ॥ (पन्ना ३)

जपु जी का विषय-वस्तु : जपु जी साहिब की बाणी अति सूक्ष्म है और इसका विषय-वस्तु भी अति विशाल है। इसमें मानवी जीवन के सांसारिक और आध्यात्मिक पक्ष से, उच्च रूहानी अदृश्य मंडलों के बारे में सूझ उत्पन्न करवाने के साथ-साथ "सचखंड" जैसी सर्वोच्च रहस्यवादी अवस्था की अति सूक्ष्मता का ज्ञान प्रदान किया गया है। संक्षेप में जपु जी साहिब का विषय-क्षेत्र निम्न अनुसार है :

(१). प्रभु-हुक्म (२.) प्रभु-महिमा (३.) अमृत वेला (४.) नाम सुनने की महानता (५.) हुक्म मानने की महानता (६.) पंच-जन (७.) असंख्य लोग गुरमुख हैं (८.) असंख्य लोग मूर्ख हैं (९.) प्रभु के नाम और स्थान अनगिनत हैं। (१०.) मैला मन नाम के रंग से साफ होता है। (११.) सृष्टि का आरंभ (१२.) प्रभु की बेअंतता (१३.) प्रभु को सदा आदेश करो (१४.) रूहानियत के पांच खण्ड (१५.) संसार कर्म-भूमि है।

सार : जपु जी साहिब की बाणी का प्रारंभ "नाम" (जपु) से होता है और अंत भी "नाम" की महिमा से ही होता है। अकाल पुरख का नाम जपने वालों के प्रभु-दरबार में उनके मुख उजले होते हैं अर्थात वे सतकारे जाते हैं तथा उनके अनगणित संगी, साथी भी, भवजल सागर से पार हो जाते हैं :

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥
(पन्ना ८)

श्री गुरु रामदास जी : जीवन और बाणी

*-डॉ. जगजीत कौर**

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा चलाए गए निर्मल पंथ के चतुर्थ गुरु श्री गुरु रामदास जी का जीवन, कृतित्व एवं बाणी अपने आप में बेमिसाल है। सिख धर्म परम्परा के चतुर्थ गुरु श्री गुरु रामदास जी एक ऐसे शक्तिशाली स्तंभ हैं जिन्होंने मानवता के आध्यात्मिक और सामाजिक लोक-परलोक जीवन को संवारने, सुधारने और सजाने में अपनी संपूर्ण आयु समर्पित कर दी। इसीलिए भाई गुरदास जी ने कहा *"दीन दुनी दा थंमु हुइ भारु अथरबण थंम्हि खलोता।"* समग्र मानवता के दीन और दुनी से सम्बंधित जीवन को सुंदर आदर्श बनाने का दायित्त्व इन्होंने अपने कंधों पर एक शक्तिशाली स्तंभ की भांति उठा लिया। दीन के साथ दुनी को संवारने की प्रवृत्ति के कारण ही भट्ट साहिबान ने इनकी तुलना राजा जनक से की है—*"इहु जनक राजु गुर रामदास तुझ ही बणि आवै ॥"* केवल उपदेश ही नहीं अपने व्यवहारिक जीवन के माध्यम से इस राज-योगी ने सिद्ध कर दिया कि कैसे विपरीत परिस्थितियों के मध्य जूझता, घाल-कमाई करता, कठिन कर्मरत रह कठोर संघर्षशील प्राणी, जीवन में सर्वोच्च सम्मान व प्रेम-पूरित पद और प्रतिष्ठा को प्राप्त कर सकता है। गुरदेव जी की प्रेम विह्वलता, विरह विषाद की गहन अनुभूति सम्पन्न, अपने प्रिय इष्टदेव अकाल पुरख जी से मिलन की तीव्र उत्कण्ठा, अभिलाषा, आकांक्षा से पूर्ण गुरु के प्रति प्रेम और समर्पित भक्तिभावपूर्ण बाणी जहां आध्यात्मिक ऊंचाइयों के स्पर्श की प्रेरणा प्रदान करती है वहीं उनका व्यवहारिक जीवन प्रत्येक वर्ग के नर-नारी, आबालवृद्ध और युवा वर्ग के लिए विशेष तौर से प्रेरणादायक है। जीवन में कठिनाइयों का सामना करते हुए ईमानदारी और सत्य का संबल लेकर मनुष्य कैसे अपनी मंजिल तक पहुंच सकता है।

श्री गुरु रामदास जी का जन्म लाहौर (पाकिस्तान) निवासी भाई हरिदास सोढी खत्री के गृह २५ आश्विन, सं. १५९१ तद्नुसार २४ सितंबर सन् १५३४ ई में माता दया कौर जी की कोख से हुआ। नाम रखा गया 'रामदास'। दो साल के अंतराल में एक भाई हरदयाल और छोटी बहन रामदासी हुए।

माता-पिता तथा आसपास के सभी लोग बालक रामदास जी को बहुत प्यार करते। भाई-बहन से बड़े होने के कारण प्यार से इन्हें "जेठा" कहा जाता और प्रसिद्ध नाम "भाई जेठा जी" हो गया। भाई जेठा जी अति सुंदर, सुशील और हंसमुख थे। रंग गोरा, नैन-नक्श तीखे, मुख चौड़ा, सुंदर सुडौल व स्वस्थ शरीर थे। माता-पिता ने पालन-पोषण अति प्रेम व बहुत लाड़-प्यार से किया, परन्तु यह लाड़-प्यार बहुत समय तक नहीं रहा। सात साल के थे कि पहले माता गुजर गईं, कुछ दिनों के अंतराल से पिता के प्यार का साया भी उठ गया। रिश्तेदारी में सगे-सम्बंधी कोई भी बालकों को संभालने वाला नहीं था। बालक अनाथ रह गए। पिता हरिदास जी की चूना मण्डी में साधारण सी दुकान थी। चूना मण्डी इसका नाम इसलिए था कि यहां

**१८०१-सी, मिशन कम्पाउण्ड, निकट सेंट मेरीज़ अकादमी, सहारनपुर (यू. पी.)-२४७००१*

हीरे-मोतियों की कटाई होती थी और कतरनों की छोटी-मोटी कई दुकानें थीं। भाई हरिदास जी का साधारण काम घर का गुजारा मात्र था, पर पिता के गुजर जाने पर वह भी ठप्प पड़ गया। भाई जेठा जी केवल सात साल के थे, दुकान नहीं चला सकते थे, अत: काम बंद हो गया। भाई जेठा जी की एक वृद्ध नानी थी जो गांव बासरके की रहने वाली थी। वो ही बालकों के पास आई। रोटी-पानी चलाने के लिए भाई जेठा जी ने घुंघनियां बेचना शुरू किया। नानी चने उबाल कर घुंघनी बना देती, भाई जेठा जी सिर पर छाबा रखकर गलियों में घूम-घूम कर बेचते। कई बार उदारदिल दानी स्वभाव भाई जेठा जी, साधुओं, संतों, फकीरों, भूखे छोटे बालकों को मुफ्त ही बांट आते, कोई पैसा न कमाते। घर का गुजारा अति तंगी से चलता। इसी बीच विधि का विधान, दोनों छोटे भाई-बहन एक-एक करके गुजर गए। भाई जेठा जी अकेले उदास आश्रयहीन रह गए। पैतृक घर, दुकान को ताला लगा नानी अनाथ बालक जेठा जी को अपने घर बासरके ले आई। सारी शरीका-बिरादरी एक-एक कर अफसोस करने आती, सुंदर सुशील बालक जेठा जी को देख कर ठण्डी आहें भरती—"बेचारा अनाथ बालक!"

तृतीय गुरु श्री गुरु अमरदास जी भी गांव बासरके के रहने वाले थे और खत्री भल्ला बिरादरी के थे। वे भी बालक को देखने, नानी को ढांढस बंधाने आये। वे बालक के हंसमुख खिले चेहरे को देख कर इतने प्रभावित हुए कि उसे अपने निकट बुला कर उसके सिर पर प्यार से हाथ फेरा। सिर पर गुरदेव जी का हाथ पड़ते ही बालक का जैसे सारा कष्ट दूर हो गया। उसे ऐसा लगा मानों पिता का प्यार और सुरक्षा भरा हाथ उसे मिल गया है। उसने अपने अंदर खुशी की लहर उठती महसूस की। लगा अब वह अनाथ नहीं है, सनाथ हो गया है, उसे स्नेहपूरित पिता का वत्सल स्वरूप प्राप्त हो गया है। गुरदेव जी ने बालक को बहुत प्यार किया और नानी को बालक के लिए कुछ करने और आर्थिक सहायता का भी आश्वासन दिया। श्री गुरु अमरदास जी अधिकांशत: खडूर साहिब श्री गुरु अंगद देव जी की सेवा में रहते थे परन्तु जब भी आठवें-दसवें दिन बासरके आते बालक जेठा जी को जरूर मिलने आते। भाई जेठा जी भी गुरु जी से मिलने को उतावले रहते और मिलकर अति प्रसन्न होते। उन्हें श्री गुरु अमरदास जी के प्यार में पिता-प्रेम की गर्माहट महसूस होती। उनकी सारी मायूसी दूर हो चुकी थी। अब वे बड़े उत्साह से घुंघनियां बेचने जाते, अब पहले से अच्छी कमाई होने लगी।

इसी बीच श्री गुरु अंगद देव जी ने श्री गुरु अमरदास जी को गोइंदवाल नगर बसाने का आदेश दिया। सन् १५४९ ई में नगर बसाया गया। यह नगरी गुरु-घर के परम श्रद्धालु प्रेमी भाई गोंदे मरवाहा की प्रार्थना पर उसकी जमीन पर ही बसायी गयी। श्री गुरु अमरदास जी अपने अनेक सगे-सम्बंधियों, भाइयों के परिवारों को साथ लाए। वे भाई जेठा जी और उनकी वृद्धा नानी को भी ले आये। भाई जेठा जी इस समय १२ वर्ष की आयु के थे। यहां बाउली साहिब का निर्माण हो रहा था। कार सेवा, लंगर सेवा व अन्य सेवा-कार्यों में संगत की गहमागहमी रहती थी। भाई जेठा जी यहां बाउली साहिब के द्वार पर घुंघनियों का छाबा लगाते, अच्छी बिक्री होती। शाम तक सारी घुंघनियां बिक जातीं। तब वे बाउली साहिब की कार सेवा में लगे रहते, सायं काल स्नान आदि कर सो दरु रहरासि की संगत में शामिल होते। श्री गुरु अमरदास जी ने गुरगद्दी पर आसीन होने के पश्चात भी सिखी-प्रचार-केन्द्र गोइंदवाल

को ही बनाया। गुरु साहिब प्रवचन करते, भाई जेठा जी ध्यान से सुनते। इस प्रकार उनकी दिनचर्या इसी तरह बन चुकी थी। प्रातः-सायं सारा दिन घुंघनियां बेचते, रात्रि बहुत देर तक लंगर की सेवा करते, संगत के जूठे बर्तन मांजते, दूसरे दिन के लिए लंगर की लकड़ियों की सेवा और अन्य प्रबंधों में हाथ बंटा कर जब गुरु जी विश्राम करने चले जाते तो वे विश्राम को जाते। भाई जेठा जी आयु की ओर भी बढ़ रहे थे, विचारों में परिपक्वता आ रही थी; फिर वातावरण भी ऐसा ही मिल रहा था। श्री गुरु अमरदास जी लगभग प्रतिदिन अपने गुरदेव श्री गुरु अंगद देव जी के दर्शन करने खडूर साहिब जाते थे। भाई जेठा जी भी उनके साथ जाते। वहां दो महान आध्यात्मिक रूहानी शख्सियतों के बीच की आध्यात्मिक चर्चा, वार्तालाप वे ध्यान से सुनते। उनके अंदर तत्त्व ज्ञान का प्रकाश धीरे-धीरे हो रहा था, आध्यात्म चिंतन की प्रवृत्ति उभर रही थी। वे गुरु नानक पंथ की मूल विचारधारा को समझने लगे थे। धर्म प्रचार, कथा-कीर्तन आदि धार्मिक क्रियाओं और जीवन-युक्ति को वे बारीकी से समझने लगे थे। इसी तरह वे अब १८ वर्ष के भर जवान गभरू हो गए थे।

श्री गुरु अमरदास जी की चार संतानें थीं। दो पुत्र बाबा मोहन जी और बाबा मोहरी जी, दो बेटियां बीबी दानी जी (इन्हें इतिहास में निधानी व सुलक्खणी भी लिखा गया है) और छोटी बीबी भानी जी। बीबी दानी जी का विवाह भाई रामा जी से हो चुका था। बीबी भानी जी के लिए वर की तलाश थी। एक दिन माता मनसा देवी जी पति श्री गुरु अमरदास जी के पास आईं और प्रार्थना की, "भानी ब्याहने योग्य हो चुकी है इसके लिए कोई वर देखें!" गुरु साहिब ने कहा, "वर कैसा हो? कितनी आयु का हो और कद-बुत कैसा हो?" माता जी की निगाह अचानक ही द्वार पर सेवा में खड़े भाई जेठा जी पर गई और कहा, "वर ऐसा होना चाहिए। कितना सुंदर, स्वस्थ, सुडौल गभरू है।"

श्री गुरु रामदास जी का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली हो उभरा था। गोरा-चिट्टा रंग, उभरे आकर्षक नैन-नक्श, जो भी देखता खिचा चला जाता। श्री गुरु अमरदास जी के मन में तो प्रारंभ से ही यह विचार था। सात साल की अवस्था से वे इसको अपनी निगाहों में रखे थे। हर कोण से इन्हें परख रहे थे, बोले, "इस जैसा तो यही है, अन्य कोई इस जैसा नहीं हो सकता है। ठीक है भानी के लिए यही वर ठीक है।"

गुरदेव जी ने भाई जेठा जी को निकट बुलाया और कहा, "अपनी नानी को लेकर आओ।" नानी जी के आने पर गुरदेव जी ने भाई जेठा जी को मांग लिया। नानी जी की प्रसन्नता का तो पारावार नहीं था। भाई जेठा जी कुछ संकोच कर रहे थे, कहां गुरदेव और कहां वह एक गरीब, अनाथ! गुरु जी ने नानी को विवाह की तैयारियां करने को कहा। बिरादरी आ गई। शगुन की रस्म हुई। शादी तय हुई। बहुत धूमधाम से विवाह की तैयारियां हुईं। श्री गुरु अमरदास जी ने पूरा मान-सम्मान देकर भाई जेठा जी को दामाद के रूप में स्वीकार किया। बाबा मोहन जी और बाब मोहरी जी ने बारात की खूब आव-भगत की। सन् १५५३ ई में पूर्ण गुरमति वातावरण में विधिवत अनंद कारज हुआ।

बिदाई का समय आया। पंजाब की रीति-रिवाज के अनुसार बिदाई के समय दूल्हे से नगदी जेवर या अन्य कोई विशेष वस्तु मांगने को कहा जाता है। श्री गुरु अमरदास जी ने भाई जेठा जी को प्यार से कुछ मांगने को कहा, पर यहां तो भरी बिरादरी के सामने एक अति

आश्चर्यजनक और विस्मादजनक दृश्य उपस्थित हुआ। भाई जेठा जी ने श्री गुरु अमरदास जी के चरण पकड़ लिए। चरणों पर गिर कर अश्रु-जल से पिता-तुल्य गुरदेव जी के चरण धो डाले, मुख से स्पष्ट शब्द नहीं निकल रहे थे, संयत हो गद्‌गद् कंठ कहा, "हे पिता गुरदेव जी! मैं तो अत्यंत दीन-हीन, तुच्छ कृमि जन्तु था, आपने अपनी कृपा-दृष्टि से मुझ दीन-हीन को यह मान-मर्यादा व सत्कार दिया। मैं किस योग्य हूं, यह आप भली-भांति जानते हो।"

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥
धंनु धंनु गुरू नानक जन केरा जितु मिलिऐ चूके सभि सोग संतापे ॥ (पन्ना १६७)

"मुझे किसी सांसारिक धन-पदार्थ की इच्छा नहीं है। गुरदेव अपनी कृपा-दृष्टि बनाए रखें, नाम का दान दें, नाम-धन की बख्शिश करें, जो पूंजी मेरी आत्मा के साथ रहेगी। प्रभु कीर्ति-यश का धन-दान करें।"

मेरे मीत गुरदेव मो कउ राम नामु परगासि ॥
गुरमति नामु मेरा प्रान सखाई हरि कीरति हमरी रहरासि ॥ (पन्ना ४९२)

अत्यन्त सुखमय मंगलकारी वातावरण में बीबी भानी जी की बिदाई हुई। बाद में गुरु जी और बीबी भानी जी दोनों श्री गुरु अमरदास जी के पास उनकी सेवा में ही रहे। बीबी भानी जी सिख इतिहास की एक अति प्रतिभावान, बुद्धिमान, सूझ-बूझ सम्पन्न, प्रखर व्यक्तित्व रही हैं। आप तप, त्याग, सेवा और सुमिरन की मूरत थीं। बाल्यकाल से ही ये अपने पिता की सेवा अति प्रेमभाव से लड़कों से भी अधिक तन्मयता से करती थीं। पिता को स्नान कराने की सेवा इनके ही जिम्मे थी। इनकी लगन, प्यार और विनम्र-भाव से की गई सेवा की इतिहास में कई साखियां आती हैं। सेवा के कारण ही इन्हें पिता से अनेक वरदान और आशीषें मिलीं। बीबी भानी जी पंथ पर आई मुश्किलों को अत्यन्न सूझ-बूझ से शान्तिपूर्वक सुलझाती थीं।

विवाह के बाद भी भाई जेठा जी के सेवा-कार्यों में कोई तबदीली नहीं आई। वे उसी प्रकार बाउली साहिब की कार सेवा, लंगर की सेवा में लगे रहे। बताया जाता है कि इन्होंने छः साल सिर मुंढ़ासा ही बांधे रखा और मिट्‌टी, गारे, कीचड़, ईंटों की टोकरियां ढोते रहे, बल्कि एक बार इनकी बिरादरी के कुछ लोग बाउली साहिब के दर्शन करने आए और इन्हें मिट्‌टी-गारे की टोकरी ढोते देख आग-बबूला हो अवा-तवा बोलने लगे। उनमें से एक मंगला नामक व्यक्ति श्री गुरु अमरदास जी के पास जाकर बोला, "क्या आपके घरों में दामाद की यही इज्जत होती है? इसे टोकरी ढोने वाला चाकर बना रखा है? इसने तो हमारी नाक कटवा दी है, कुल को कलंक लगा दिया है।"

गुरु साहिब चुप रहे। इन्हीं बातों के दौरान भाई जेठा जी ने वहां पहुंच गए और गुरदेव जी के चरण पकड़ बिरादरी की ओर से माफी मांगी, प्रार्थना की, "गुरदेव! ये साधारण लोग आपकी महिमा को नहीं जानते, इन्हें क्षमा करें। आज बोलने आए हैं बिरादरी वाले बन कर, तब कहां थे जब मैं बेसहारा, मारा-मारा फिरता था? इसी गुरु-घर ने मुझे शरण दी, सहारा दिया। इस गुरु-घर की सेवा मैं अंतिम सांसों तक करूंगा, यही मेरा जीवन-उद्देश्य है।" बिरादरी वाले बहुत शर्मिन्दा हुए। कवि संतोख सिंघ जी इस घटना का वर्णन "गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" में करते हैं :

राम दास कर जोरि उचारा।

'पतित उधारन बिरद तुमारा ॥६६॥
गुर महिमा की ग्यात न पाई।
क्या इन के बसि, जग उरझाई।'

(रासि १, अंसू ५२)

तब श्री गुरु अमरदास जी ने प्रसन्नचित्त हो कहा, "तुम कहते तो, मिट्टी-गारा ढोकर कुल की इज्जत डुबो दी है, यह मिट्टी-गारा तो गुलाल है, यह टोकरी दीन-दुनी का छत्र है। धन्य हो तुम! तुम्हारी कुल को तो इसने तार दिया है। तुम तो प्रेम-भक्ति से हीन हो। इसने तुम्हें नरक-भोग से बचाया है :

उर प्रसंन ह्वै भनति बचन को।
'सभि जग छत्र दीनि मैं इनको।
माटी परि है सीस तुमारे।
गुर अभगति, तुम प्रेम न धारे ॥६५॥
जे इह बंस जनम नहिं धारे।
गिरति नरक महिं पितर तुमारे।'

(गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, रास १, अंसू ५१)

इसके बाद भाई जेठा जी गुरु-सेवा में और भी अधिक तत्पर हो गए, और भी बहुत सी सेवाएं उन्होंने अपने जिम्मे ले लीं। श्री गुरु अमरदास जी भी इन्हें विश्वसनीय मानकर इन पर दायित्व डालते थे।

एक बार जब कुछ ईर्ष्यालु विरोधियों ने बादशाह अकबर के कान भरे और बादशाह ने श्री गुरु अमरदास जी को दिल्ली दरबार बुलवा भेजा तो श्री गुरु अमरदास जी ने भाई जेठा जी को ही भेजा। अकबर बादशाह के दरबार में भाई जेठा जी ने नानक मत की विचारधारा, एक ही परमात्मा को सर्वत्र मौजूद देखना, समग्र मानवता को एक ही परमात्मा की संतान मान कर ऊंच-नीच, जाति, वर्ण, वर्ग-भेद से दूर रहना, प्रेम, भ्रातृ-भाव की भावना का प्रचार, लंगर-संगत का संकल्प रखा तो जाति-अभिमानी तथा कर्मकांडी पंडितों की संकीर्ण विचारधारा का पाज उघड़ा। बादशाह भाई जेठा जी के विचारों से बहुत प्रसन्न हुआ। उसने ऐसे महान मुक्तिदाता श्री गुरु अमरदास जी के दर्शनों की इच्छा भी जाहिर की। कहा, दिल्ली जाते हुए वे गुरु-दर्शनों को आएंगे। पंडित ब्राह्मण बहुत शर्मिन्दा हुए। अपना-सा मुंह लेकर वहां से खिसकते बने। अकबर बादशाह बाद में श्री गुरु अमरदास जी के दर्शन करने आया। पंगत में बैठ कर उसने लंगर प्रशाद पाया, अति प्रसन्न हुआ।

श्री गुरु अमरदास जी के बड़े दामाद भाई रामा जी भी सेवा तो करते थे परन्तु भाई जेठा जी जैसी समर्पित भावना एवं प्रेम से की गई सेवा-भावना उनमें नहीं थी। श्री गुरु अमरदास जी ने कई अवसरों पर कई प्रकार से इन्हें परखा भी। अन्तिम परख में एक दिन श्री गुरु अमरदास जी ने दोनों को एक-एक थड़ा बनाने को कहा, नाप भी बताया। बनने पर तुड़वा दिया कि ठीक नहीं बना है। इसी तरह जब तीन-चार बार बनवाया और तुड़वाया तो रामा जी खीझ उठे पर भाई जेठा जी ने हाथ जोड़ प्रार्थना की, "गुरदेव! हम तुच्छ बुद्धि हैं। आपकी बुद्धि की पहुंच हम में नहीं है, कृपा-दृष्टि करो, सेवा के योग्य हो सकें।" तब गुरु जी के आदेशानुसार भाई जेठा जी ने थड़ा बनाया। संगत के मन में भी शंका थी गुरु-पद किसे मिलेगा। एक बार प्रश्न भी किया तो गुरु साहिब जी ने कहा कि रामा नेमी है, जेठा प्रेमी है :

'इसकी सेवा मो मन भावहि।
आपा कबहुं न करहिं जनावनि।
निस दिन प्रेम भगति महि पावनि ॥५०॥ . . .'
'रामदास है पुरख महांने।'

प्रो. पूरन सिंघ जी अपनी पुस्तक "ए बुक ऑफ टैन मास्टर्स" में बताते हैं कि श्री गुरु

अमरदास जी ने भाई जेठा जी की सेवा से प्रसन्न होकर उन्हें अनेक आशीर्वाद दिए और तब एक दिन अमृत-वेला में समाधि लगाए अकाल पुरख जी से लिव-लीनता की अवस्था में उन्होंने अपना अंतिम समय निकट देखा। प्रात: वे उठ कर सीधे बाउली साहिब की ओर गए, वहां कार सेवा में लगे भाई जेठा जी को अपने निकट बुलाया, उन्हें स्नान करने को कहा। बाबा बुड्ढा जी से उनके सिर पर से कार-सेवा की टोकरी उतरवाई, मुंढ़ासा उतारने को कहा, स्वच्छ वस्त्र पहनने को कहा। बाबा बुड्ढा जी को हुक्म दिया, उन्हें संगत में लेकर आएं और गुरुता बख्शें। भाई जेठा जी ने बहुत कहा कि वे इस योग्य नहीं हैं। इस पर श्री गुरु अमरदास जी ने कहा, "पराई वस्तु को देने में ही सुख होता है।"

पराई अमाण किउ रखीऐ दिती ही सुखु होइ ॥
गुर का सबदु गुर थै टिकै होर थै परगटु न होइ ॥ (पन्ना १२४९)

श्री गुरु अमरदास जी ने भाई जेठा जी की बांह पकड़ कर उन्हें अपने पास बगल में चौकी पर बैठाया। खुद चौकी से उतर कर भाई जेठा जी के चरणों पर पांच पैसे और नारियल रख कर माथा टेका। सारी संगत को हुक्म किया, आज से भाई जेठा जी 'गुरु' हैं' सभी इन्हें 'गुरु' मानें। सारी संगत ने हुक्म कबूल किया। यह सुनकर रामा जी, मोहन जी और मोहरी जी भागे आए। बाबा मोहन जी क्रोधित हो उठे, "गुरगद्दी मेरा हक है।" बाब मोहरी जी ने माथा टेक दिया, पिता गुरदेव के फैसले को कबूल किया। गुरु साहिब ने उसे आशीर्वाद दिया। भाई जेठा जी के नेत्रों से अश्रुधारा बह चली। गुरु जी के चरण पकड़ लिए, "पिता गुरदेव जी! मेरा और कोई सहारा नहीं हैं, आप ही मेरे सर्वस्व हो, मुझ जैसे तुच्छ को आपने बख्शा है :

हम जैसे अपराधी अवरु कोई राखै जैसे हम सतिगुरि राखि लीए छडाइ ॥
तूं गुरु पिता तूंहै गुरु माता तूं गुरु बंधपु मेरा सखा सखाइ ॥ (पन्ना १६७)

अब भाई जेठा जी श्री गुरु रामदास जी बन गए। कुछ दिन बाद सन् १५७४ ई में श्री गुरु अमरदास जी परम ज्योति में विलीन हो गए। श्री गुरु रामदास जी इस विछोह को सहन नहीं कर सके। कई दिन एकांत में बैठे रहे। अंत में बाबा बुड्ढा जी और संगत की प्रार्थना पर बाहर आए, संगत को दर्शन दिए, गुरु-कर्म में प्रवृत्त हुए। अब उन्होंने अपनी सारी चेतना निर्माण कार्यों में लगाई।

अपने जीवन काल में ही श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी को अमृतसर नगर बसाने का हुक्म दिया था। श्री गुरु अमरदास जी ने स्थान का चयन भी खुद किया था, पूरा नक्शा खींच रखा था। सुलतानविंड, गिलवाली, गुमटाला और तुंग आदि ग्रामों के मध्य की सांझी जूह, हरे-भरे जंगल, मीठे बेर वाली बेरियों के पेड़ों से भरा अति रमणीय स्थल था। प्राय: आते-जाते साधू-महात्मा, ऋषि-मुनि यहां ठहरते थे, एकांत में साधना करते थे। श्री गुरु अमरदास जी को यह स्थान बहुत पसंद था। श्री गुरु रामदास जी अपने परिवार, बाबा बुड्ढा जी, भाई सालो जी आदि कुछ मुखी सिखों के साथ यहां आए। "गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" के अनुसार:

अहै परगना तुमरे पास।
'थल आछो पिखि करहु अवास। . . .'
'ग्राम तुंग ते अहै उरेरे।
गिलवाली ते लखहु परेरे ॥९॥
है सुलतानपिंड जिस नामू।
तिस ते पशचम दिश अभिरामू।

तहां जाइ करि ग्राम बसावहु।
सुंदर अपुने सदन बनावहु ॥१०॥

श्री गोकुल चंद नारंग के अनुसार सन् १५७३ ई के आरंभ में यहां कुछ झोपड़ियां और कच्चे घर रहने के लिए बनाए गए। बाद में ५२ पेशे के व्यापारी बसाए गए। गुरु का बाजार आबाद हुआ। १५७० ई में संतोखसर की खुदाई हुई। १३ जून १५७४ को अमृतसर नगर को बसाने का टक लगाया था। १५७७ ई में इसी के निकट गहरे स्थान पर एक बड़े सरोवर की खुदाई हुई जो वर्तमान अमृत सरोवर है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने भी चार सौ वर्षीय दिवस १९७७ में ही मनाया था। पहला टक श्री गुरु रामदास जी ने अपने हाथों से लगाया, तब बाबा बुड्ढा जी और अन्य मुखी सिखों ने खुदाई की। कितने ही सेवक व श्रमिक लगाए गए और श्रद्धालु संगत ने कार-सेवा की। सन् १५८१ ई तक नगर भी बस गया था और सरोवर भी बन गया था। बाद में सन् १५८१-८६ तक श्री गुरु अरजन देव जी ने इसे पक्का करवाया। अब श्री गुरु रामदास जी अपने पैतृक शहर लाहौर आए। यहां घर को धर्मशाला बनवा दिया। एक कुआं खुदवाया बाउली साहिब लाहौर। संगतें जुड़ने लगीं। प्रात:-सायं सतसंग-कीर्तन होने लगा। यहीं गुरु साहिब ने प्रात: काल "आसा की वार" का कीर्तन करने की मर्यादा चलाई। यहां लाहौर निवासी दुनी चंद की ड्योढ़ी में गुरु नानक पातशाह जी ने "आसा की वार" की पउड़ियां उच्चारण की थीं। यहां गुरु जी के दूर के रिश्ते का भाई सहारी मल गुरु जी को अपने घर ले गया, संगत की खुले दिल से सेवा की। यहीं भाई सैदो जी और भाई साईं दित्ता जी दर्शन करने आए। ये अति प्रेमी श्रद्धालु थे। इनकी प्रार्थना पर ही श्री गुरु अमरदास जी ने गुरु नानक पातशाह जी द्वारा फरमाया गया महावाक *"लाहौर सहरु जहरु कहरु सवा पहरु"* पर *"लाहौर सहरु अंम्रित सरु सिफती दा घरु"* कहते हुए लाहौर की जहर से बचने का उपाय नाम-अमृत के सरोवर में स्नान करके प्रभु-परमात्मा की सिफतो-सलाह करना बताया था। माया-अहंकारी लाहौर निवासी परमात्मा का नाम-सुमिरन कर ही माया के जहर से बच सकते हैं, ऐसा उपदेश दिया। श्री गुरु रामदास जी भी लाहौर-निवासियों को प्रभु-नाम-सुमिरन से जुड़े रहने का उपदेश देते रहे। अमृतसर वापिस आने पर सन् १५७९ में अकबर बादशाह मिलने आया। गुरु-दर्शन में १०१ सोने की मोहरें दीं। गुरु साहिब ने लेने से इंकार कर दिया। तब वह कुछ जागीर गुरु जी को देना चाहता था। गुरदेव ने कहा, फकीरों की चहुं कुंट जागीर है, सारा ब्रह्मांड ही फकीरों की मलकियत है। अकबर बादशाह अति प्रभावित होकर प्रसन्नचित्त विदा हुआ।

इसी समय श्री गुरु नानक देव जी के बड़े सुपुत्र उदासी बाबा श्रीचंद जी से मिलने आए। गुरु साहिब की अति प्रभावशाली शख्सियत, सुंदर स्वरूप को देख प्रभावित हुए। श्री गुरु रामदास जी ने बाबा श्री चंद जी को सम्मान दिया और अद्वितीय नम्रता प्रकट की। बाबा जी अति भावुक हो उठे और कहा, "इसी विनम्रता और सेवा-भावना ने ही तो आपको इस गद्दी का हकदार बनाया है। कवि संतोख सिंघ जी के शब्दों में:

उचसथान सिरीचंद बिठाए।
आप निंम्रि करि तरे तकाए ॥७६॥
सिरीचंद बोले ततकालू।
करति परखणा प्रेम दिआलू।
'इतना दाढ़ा कैस बंधायो?'
सुनि कै सतिगुर भे निंम्रायो ॥७७॥

दोहरा ॥ चरन गहे करि प्रेम सों पौंछहिं बारंबार।
'इसही हेतु वधाति भे, सुनीए गुर सुत द्यार ॥७८॥
देखि निंम्रता गुरू की श्रीचंद भए प्रसंन।
'अंगद लीनी सेव करि तुमरो प्रेम अनंन।
तुमरी महिमा अधिक है कहीए काहि बनाइ।
तुमरे सर मैं जो मजहि पापी भी गति पाइ' ॥८०॥

श्री गुरु रामदास जी के इसी विनम्र, मधुर और प्रेमपूर्ण व्यवहार के कारण गुरु जी के निकट श्रद्धालुओं की संगत जुड़ी रहती। गुरु जी के समय दूर-दूर के स्थानों से श्रद्धालु सिख जुड़े रहते। गुरु जी द्वारा व्यापार को बढ़ावा दिया गया। बुखारा, काबुल, काश्मीर और अन्य दूर के क्षेत्रों से श्रद्धालु आने लगे। नानक-मत के प्रचार-प्रसार के लिए गुरु जी ने मसंद-प्रथा कायम की। मसंद दूर शहरों से कार-सेवा भी लाते और धर्म-चिंतन का प्रचार भी करते। भाई गुरदास जी को आगरा प्रचार-कार्य के लिए भेजा गया। गुरु साहिब ने नई परम्पराओं को स्थान दिया। विवाह और अन्य समयों पर हल्के गीतों के स्थान पर 'घोड़ीआं' रचीं, लोगों में प्रचिलत सिठणीआं न देकर गुरबाणी-गायन की प्रेरणा दी, *"कीता लोड़ीऐ कंमु सु हरि पहि आखीऐ ॥ कारजु देइ सवारि सतिगुर सचु साखीऐ ॥"* जैसे पावन बोल दिए। सूही राग में 'लावां' की बाणी रची। इस बाणी का पाठ तथा कीर्तन सिख अनंद कारज में किए जाने की परंपरा विकसित हुई। संकीर्ण विचारधारा से मुक्त ऐसी खुलदिली ने जप्पा, माया, कन्हैया, तुलसा, धरमदास, जेठा संसारी और तीरथा को भी सिख मत का प्रेमी बनाया। उदासी वर्ग से भी अनेक प्रेमी इधर आ रहे थे। गुरु जी के सात सालों के गुरुता-काल में अनेक श्रद्धालु सिख संगत से जुड़े। कुछ इतिहासकारों को मुगालता हुआ है पर जैसा कि प्रि. सुरजीत सिंघ (गांधी) बताते हैं—**"In the Ministry of Guru Ramdas Sikhism made its headway at far off places and various & Sangats were organised to keep the torch of Sikh faith alive." (Page 212, History of Sikhs)** गुरु जी के समय सिख धरम-चिन्तन एक मजबूत संगठन के रूप में विकसित हुआ। गुरु नानक मत का प्रकाश देदीप्यमान रहे इसी विचार से श्री गुरु रामदास जी अपने तीन सपुत्रों, बड़े पृथी चंद, बीच के महादेव और सबसे छोटे श्री गुरु अरजन देव जी में से श्री गुरु अरजन देव जी को गुरुता-प्रकाश बख्श कर स्वयं २ आश्विन, सं. १६३८ तद्नुसार १ सितंबर १५८१ ई में परम ज्योति में विलीन हो गए।

श्री गुरु रामदास जी ने निर्माण कार्यों द्वारा रचनात्मक रूप से जहां नानक-पंथ को विकसित किया वहीं उन्होंने अति मधुर प्रेमपूरित बाणी की भी रचना की। बाणी के माध्यम से ही उन्होंने सिख जीवन-युक्ति को सरल बनाया। गउड़ी राग के एक शबद में उन्होंने सिख की नियमावली को सरल-सहज बना दिया :

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ *(पन्ना ३०५)*

गुरु जी शबद में बताते हैं कि गुरु का सिख उठते-बैठते हरि-नाम जपे, आप भी जपे और दूसरों को भी जपाए :

जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥
(पन्ना ३०६)

श्री गुरु रामदास जी के ६४४ शबद हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में श्री गुरु रामदास जी ने ३० रागों में बाणी रचना की है। श्री गुरु रामदास जी ने देवगंधारी, बिहागड़ा, जैतसरी,

टोडी, बैराड़ी, गोंड, नट नाराइन, माली गउड़ा, केदारा, कानड़ा कलिआना आदि रागों में भी रचना कर रागों में बढ़ोत्तरी की है। इन रागों के गायन संकेत भी दिए हैं। कई मिश्रित रागों की गायन परिपाटी भी आपने ही चलाई। कई प्रकार के लोकगीत काव्य रूपों में भी आपने बाणी-रचना की है। जैसे पहरे, वणजारे, करहले और घोड़ीआं। आठ रागों में आपकी वारें हैं। बाणी में संगीतात्मकता छंदों के विविध प्रयोग से भी आई है। दुपदे, तिपदे, चउपदे, पंचपदे असटपदियां आदि का पड़ताल से गायन काफी, मंगल यति आदि की गायन परिपाटी भी आपने ही चलाई। "आसा की वार" की मौजूदा गायन-परिपाटी भी आपने ही चलाई। दरअसल आप उच्च कोटि के कीर्तनकार थे, स्वयं को "अकाल पुरख के दर का ढाढी" कहते थे। बताया जाता है कि जब भी इनके मन में इलाही प्रेम की तरंगें उठती थीं बैठे-बैठे मधुर स्वर से बाणी गायन करने लगते थे। आपका फरमान है, प्रभु का यश-गायन करने के लिए हरि-प्रभु से मिलने की तड़पन बेचैन कर देती है, कैसे रह सकता हूं?

—हउ हरि बिनु खिनु पलु रहि न सकउ जैसे जल बिनु मीनु मरि जाई ॥
कब कोऊ मेलै पंच सत गाइण कब को राग धुनि उठावै ॥
मेलत चुनत खिनु पलु चसा लागै तब लगु मेरा मनु राम गुन गावै ॥ (पन्ना ३६८)
—हउ अनदिनु हरि नामु कीरतनु करउ ॥
सतिगुरि मो कउ हरि नामु बताइआ
हउ हरि बिनु खिनु पलु रहि न सकउ ॥ . . .
जैसे हंसु सरवर बिनु रहि न सकै तैसे हरि जनु किउ रहै हरि सेवा बिनु ॥ (पन्ना ३६९)

गुरु साहिब स्वयं को प्रभु का यश-गायन करने वाला ढाढी बताते हैं :

हम ढाढी हरि प्रभ खसम के नित गावह हरि गुण छंता ॥ (पन्ना ६५०)

दरअसल श्री गुरु रामदास जी को अकाल पुरख वाहिगुरु जी से, अपने सतिगुरु से अनन्य प्रेम है। प्रेम और विरह की अनन्त तरंगें उनकी बाणी में प्रवाहमान हैं। अपने प्रिय इष्टदेव के दर्शन-दीदार, मिलन की उत्कंठा ही उनके जीवन का मकसद है। बिना दर्शन के वे विह्वलता की चरम सीमा पर पहुंच जाते हैं :

मै प्रेमु न चाखिआ मेरे पिआरे भाउ करे ॥
मनि त्रिसना न बुझी मेरे पिआरे नित आस करे ॥
नित जोबनु जावै मेरे पिआरे जमु सास हिरे ॥ . .
पिर रतिअड़े मैडे लोइण मेरे पिआरे चात्रिक बूंद जिवै ॥ (पन्ना ४५१-५२)

अरजोई करते हैं :

गुरमुखि पिआरे आइ मिलु मै चिरी विछुंने राम राजे ॥
मेरा मनु तनु बहुतु बैरागिआ हरि नैण रसि भिंने ॥ (पन्ना ४४९)

श्री गुरु रामदास जी की बाणी में नाम-साधना और प्रभु-भक्ति की ही प्रेरणा दी गई है। साथ में यह भी निर्देश दिया गया है कि प्रभु-नाम और तत्त्व-ज्ञान का दाता सतिगुरु है। सतिगुरु द्वारा बताए गए ज्ञान, भक्ति-प्रेम के मार्ग पर चलकर जीव हउमै-अहंकार रूपी विकारों से मुक्त होकर मन को काबू में करके माया के आकर्षण से मुक्त होकर सत्य को पहचान सकता है, सत्य की प्राप्ति कर स्थायी सुख और आनंद को प्राप्त कर प्रभु-चरणों में लीन हो सकता है। इसीलिए गुरदेव स्वयं भी अपने गुरु से बहुत प्यार करते हैं। गुरु के बिना वे जी नहीं सकते:

सतिगुरु सागरु गुण नाम का मै तिसु देखण का चाउ ॥
हउ तिसु बिनु घड़ी न जीवऊ बिनु देखे मरि

जाउ ॥ . . .
मै सतिगुर सेती पिरहड़ी किउ गुर बिनु जीवा
माउ ॥ . . . (पन्ना ७५९)

गुरदेव जी की बाणी में प्रेम और विरह का स्वर मुखरित होने के कारण ही अंग्रेज इतिहासकार ग्रीनलीज़ "ए गास्पल ऑफ गुरु ग्रंथ साहिब" में इन्हें प्रेम का देवदूत "Apostle of Love" मानते हैं। प्रोफेसर पूरन सिंघ "बुक ऑफ टैन मास्टर्स" में बताते हैं कि श्री गुरु रामदास जी की बाणी में प्रेम की सहज स्वाभाविक तरंगें उछल-उछल पड़ रही हैं "Spontaneous overflow of love".

गुरु साहिब की रससिक्त मीठी-मधुर बाणी समग्र मानवता के कल्याण के लिए है। इसमें व्यक्त प्रेम-भावना समूची मानवता को अपनी कायनात में समेट कर सब को समान रूप से भ्रातृ-भाव और विश्वव्यापी बन्धुत्व-भाव का उपदेश देती है। जरूरत है श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित-सम्पादित इस पावन पुनीत प्रेम-बाणी को जीवन में धारण करने की और नूतन विश्व मानव समाज-सृजन की।



कविता

गुरु-गुरबाणी

गुरु नानक बने मालिक, खजाना नाम का बख्शा।
सभी उसके वो है सब का, यही इलहाम है बख्शा।
बिना उसके न कोई है, न हो सकता, कभी होगा।
हुक्म उसका, रजा उसकी, वो जब चाहे तभी होगा।
दयालु है वो दीं-बंधु, वो सब पे है दया करता।
दवा जब नाम की देता, सभी के पाप है हरता।
गुरु जी नाम की महिमा, उम्र सारी ही गाई है।
हुई जो रहमते-बारिश, वही अब काम आई है।
वे सच बोले, वे सच तोले, वणज सच का बने मोदी।
सभी उनके हिन्दू-मुस्लिम, क्या जैनी क्या बोधी?
था इंसानी धर्म उनका, भला सबका चाहते थे।
न कोई दिल दुखाते थे, प्रभु के गीत गाते थे।
जो दौलत बाप-दादे की, गरीबों पे लुटाई है।
था समझाया लोकाई को, उन्हें जो समझ आई है।
बेगाना न कोई, हैं सब अपने, ये मित्र हैं, ये भाई हैं।
करें जो गर्व जाति का, वे मूर्ख हैं, शुदाई हैं।
करो शुभ कर्म रोना क्या, सब्र व शुक्र में जीना।
उठे जब दर्द हउमै का तो, बस फिर नाम-रस पीना।
पराये धन, पराये तन पर, नजर मैली नहीं करनी।
रखना आचरण निर्मल तभी, यह बिखम नदी तरनी।
बताती ढंग जीने का, गुरु के बोल गुरबाणी।
प्रभु का नूर बरसा है, दिये हैं बोल गुरु जी ने।
अंकित बोल भक्तों के, किये हैं तोल गुरु जी ने।
गुरु-पद इसलिये इसका है, यह सिफ्त-सलाह प्रभु की।
तू पढ़ 'कोमल' बसा हृदय, यह गुरबाणी है राह प्रभु की।



-स. सतनाम सिंघ कोमल, २४८, अरबन अस्टेट, लुधियाना-१४१०१०

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित शेख फरीद जी की बाणी की प्रामाणिकता का सन्दर्भ

-डॉ. निर्मल कौशिक*

साहित्येतिहास की दृष्टि से किसी भी रचना की रचनात्मकता उसके प्रामाणिक होने की साक्षी पर निर्भर करती है। रचनाकार या लेखक की लोकप्रियता रचना के महत्त्व को और अधिक श्रेष्ठ सिद्ध करती है। अनेकधा गुरु-शिष्य परंपरा के अंतर्गत शिष्य अनन्य श्रद्धा के कारण अपने गुरु के नाम पर ही अपनी रचनाएं रचते हैं। कई बार एक ही नाम के अनेक रचनाकार विभिन्न कालों में हुए हैं लेकिन उनकी रचना-शैली आपस में इतनी मिल जाती है कि उनमें भेद करना कठिन हो जाता है कि कौन सी रचना किस रचनाकार की है। कई बार कालान्तर में किसी रचनाकार की रचना का सम्पादन अथवा संकलन उस रचना को महत्त्वपूर्ण बना देता है। तब उस रचना के रचनाकार के प्रति जनता का ध्यानाकर्षण हो जाता है और उसकी प्रामाणिकता के लिए अनुसंधान-कार्य करना अनिवार्य हो जाता है।

सूफी परम्परा की चिश्ती सम्प्रदाय के प्रसिद्ध बाणीकार शेख फरीदुद्दीन गंज-ए-शकर का जन्म उस समय हुआ जब भारत राजनैतिक दृष्टि से संघर्ष के दौर से गुजर रहा था। विदेशी लुटेरों व आक्रमणकारियों ने भारत के सांस्कृतिक गौरव को तहस-नहस करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। उस समय के निर्दयी और निर्मम शासकों से पीड़ित जनता हाहाकार मचा रही थी। ऐसे समय में शेख फरीद जी ने पंजाब की पुण्यशालिनी धरती पर मानव प्रेम का संचार करने वाली निर्मल बाणी की रचना की और भ्रमण करते हुए समस्त मानव को अभय-दान दिया। पंचमेश गुरु श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा उनकी बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सम्मिलित किया जाना उनकी पावन बाणी की महत्ता और लोकप्रियता का पुष्ट प्रमाण है। यही कारण है कि शेख फरीद जी को सूफी और गुरमति दोनों ही परम्पराओं में समान रूप से सम्मान मिला है। जहां तक शेख फरीद जी की बाणी की प्रामाणिकता का प्रश्न है, हम आलोचकों व विद्वानों द्वारा दर्शाये गए तथ्यों एवं प्रमाणों द्वारा ही किसी ठोस निष्कर्ष तक पहुंच सकते हैं। वैसे तो ऐसी महान रचना और रचनाकार के विषय में कोई भी प्रश्न-चिन्ह लगाना घृष्टता ही होगी लेकिन अन्ततः हमें इस प्रश्न का उत्तर ढूंढना ही होगा। इसी कारण आज भी इस विषय में विद्वानों में मतैक्य न होने के कारण अनुसंधान-कार्य निरन्तर जारी है। यही कारण है कि शेख फरीद जी की रचना का लघु आकार होते हुए भी उस पर हिन्दी व पंजाबी भाषा में अनेक शोध-कार्य हो चुके हैं। इस आलेख में भी उनकी रचना की प्रामाणिक व अप्रामाणिक अवधारणाओं को प्रस्तुत किया जा रहा है।

अधिकांशतः श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित शेख फरीद जी की बाणी को ही सर्वसम्मति से विद्वानों द्वारा प्रामाणिक माना जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में "सलोक फरीद के" के अन्तर्गत कुल १३० श्लोक हैं जिनमें से चार श्री गुरु नानक देव जी के हैं, पांच श्री गुरु अमरदास जी के, एक श्री गुरु रामदास जी का और आठ श्री गुरु अरजन देव जी के हैं। शेष ११२ श्लोक शेख फरीद जी के हैं। इनके अतिरिक्त श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शेख फरीद जी के ४ शबद भी दर्ज हैं जिनमें दो राग आसा में तथा दो राग सूही में रचे गए हैं।

*१६३, आदर्श नगर, पुरानी छावनी रोड, फरीदकोट-१५१२०३

शेख फरीद जी की इस बाणी के विषय में मैकालिफ ने यह शंका उत्पन्न किया कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित शेख फरीद जी के नाम के अन्तर्गत बाणी शेख ब्रह्म अथवा शेख इब्राहीम की रचना है और 'फरीद' उसका उपनाम है। क्योंकि पुरातन जन्म-साखियों में श्री गुरु नानक देव जी की 'फरीद' की गद्दी के संचालक शेख ब्रह्म से संगोष्ठी बताई गई है। इस संगोष्ठी के समय शेख ब्रह्म को अनेक श्लोक उच्चारण करते हुए बताया गया है। यही श्लोक श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी संकलित हैं। मैकालिफ की पुष्टि के लिए शेख फरीद जी का एक श्लोक जिसका अर्थ है, शेख! कोई भी जीवन इस संसार में स्थिर नहीं है। जिस आसन पर हम बैठे हैं उस पर हमसे पहले कई बैठ चुके हैं। इस श्लोक के आधार पर इस बाणी के रचयिता शेख फरीद जी नहीं बल्कि उनका कोई गद्दीनशीं है। आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब की रचना १६०४ में शेख फरीद जी के परलोक सिधारने से ३३८ वर्ष बाद सम्पूर्ण हुई। इससे सिद्ध होता है कि शेख इब्राहीम श्री गुरु नानक देव जी का समकालीन था। अत: श्री गुरु नानक देव जी ने उससे ही रचना ली होगी। डॉ लाजवंती रामाकृष्ण ने भी मैकालिफ की इस धारणा को स्वीकृति दी है। बावा बुद्ध सिंघ ने भी इसी विचार के साथ अपनी सहमति प्रकट की है। वास्तविकता यह है कि शेख फरीद जी जिनकी बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है, चिश्ती सूफी सम्प्रदाय के एक प्रथम शिष्य नहीं थे। इस सम्प्रदाय का प्रवर्त्तक ख्वाजा अबू ईशाक शामी था, जो चिश्त (खुरासान) का पीर था। इसीलिए उसे चिश्ती कहा जाता था। वह स्वयं हजरत अली की नौवीं पुश्त का मुरशिद था तथा उसके बाद मुईनुद्दीन चिश्ती (अजमेर) आठवीं पुश्त में थे जो कि शेख फरीद जी के गुरु कुतुबद्दीन बख्तिआर काकी के भी गुरु थे। जो श्लोक लाजवन्ती रामाकृष्ण ने शेख इब्राहीम के लिए प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया है वही श्लोक शेख फरीद जी पर भी लागू होता है:

सेख हैयाती जगि न कोई थिरु रहिआ ॥
जिसु आसणि हम बैठे केते बैसि गइआ ॥
(पन्ना ४८८)

अन्य शंका जो शेख फरीद जी की बाणी के विषय में आजकल प्रचलित है वह उनकी मुलतानी भाषा सम्बंधी है। प्राय: कहा जाता है कि यदि यह मान भी लिया जाए कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी शेख फरीद जी की है तो भी उनकी पंजाबी भाषा तेरहवीं सदी की नहीं लगती। इसका स्पष्ट उत्तर यह है कि शेख फरीद जी को पंजाबी भाषा का पितामह कहा जाता है और उनसे पूर्व पंजाबी की किसी रचना का भाषा सम्बंधी कोई रूप उपलब्ध नहीं है जिससे शेख फरीद जी की भाषा का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा सके। अत: श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज शेख फरीद जी के नाम पर जो बाणी संकलित की गई है वह सम्पूर्ण बाणी शेख फरीद मसऊद फरीद-उ-दीन गंज-ए-शकर की ही है। इसका मुख्य कारण यह है कि श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी तीसरी उदासी के दौरान शेख फरीद जी की मूल बाणी की पोथी उनके गद्दीनशीं शेख ब्रह्म या इब्राहीम से प्राप्त की और अपनी बाणी सहित इसे सुरक्षित अपने पास रख लिया। यही पोथी बाद में श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी के माध्यम से श्री गुरु अरजन देव जी तक पहुंची। इन गुरुओं ने शेख फरीद जी के श्लोकों के साथ-साथ कहीं-कहीं स्पष्टीकरण हेतु अपने श्लोक भी दर्ज किए।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शेख फरीद जी के जो श्लोक संकलित हैं उनमे आए संदर्भ शेख फरीद जी के जीवन से काफी हद तक मेल खाते हैं। सीरीउल औलिया, फवाइदुल फवाद, खैरउल मजलिस आदि ग्रंथों में शेख फरीद जी के व्यक्तित्व का जो स्वरूप उपलब्ध है वही स्वरूप उनकी रचना में भी उपलब्ध होता है, जो 'प्रत्येक रचना

में रचनाकार का व्यक्तित्व निहित होता है' की पुष्टि करता है। यथा उनकी जीवन-शैली का एक उदाहरण :

फरीदा साहिब दी करि चाकरी दिल दी लाहि भरांदि ॥
दरवेसां नो लोड़ीऐ रुखां दी जीरांदि ॥ (पन्ना १३८१)

इसी प्रकार "काठ की रोटी" से जुड़े सन्दर्भ भी ऐसी पुस्तकों में उपलब्ध होते हैं जिनकी रचना शेख इब्राहीम से पहले हो चुकी थी।

शेख फरीद जी का समय राजनीतिक दृष्टि से अस्थिरता और अराजकता का समय था। यही कारण है कि उनकी रचना में मृत्यु, भय, ईश-स्तुति, महल, कब्र आदि शब्दों के माध्यम से भावाभिव्यंजना की गई है। शेख फरीद जी के नाम-भेद का मुख्य कारण लोक संस्कृति के माध्यम से श्रुति-स्मृति परम्परा हो सकता है। अत: भाषा सम्बंधी अशुद्धियों के कारण ऐसा होना स्वाभाविक ही है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त नामदेव जी और भक्त कबीर जी की बाणी भी संकलित है। वे भी श्री गुरु नानक देव जी से पूर्व हुए हैं। अत: श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज शेख फरीद जी की बाणी शेख फरीद गंज-ए-शकर की ही है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि संकलित बाणी को सम्पादन करने से पूर्व श्री गुरु अरजन देव जी ने इसकी प्रामाणिकता के विषय में पूर्णत: खोज कर ली होगी। तुलनात्मक अध्ययन व नए अनुसंधानों से यह ज्ञात होता है कि शेख इब्राहीम कोई उच्च दर्जे के कवि नहीं थे।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि मैकालिफ और उसके अनुकरणीय विद्वानों ने इसकी प्रामाणिकता के विषय में जो संदिग्धता व्यक्त की है वह मात्र उनकी अपूर्ण खोज व अल्पज्ञता का ही परिणाम कहा जायेगा। एक विदेशी विद्वान ने भाषा का अधूरा ज्ञान होने के कारण और परिस्थितियों एवं तथ्यों के प्रति पूर्णत: जागरूक न होने के कारण शेख फरीद गंज-ए-शकर की बाणी के वास्तविक कर्ता संबंधी भ्रम उत्पन्न हो गया है। अत: शेख फरीद जी की बाणी की प्रामाणिकता असंदिग्ध है।



कविता

शेख़ फरीद जी

अपने वक्त का ख्यात, शेख फरीद था।
भक्ति से जिस अल्लाह, लिया खरीद था।
बनकर भी वह मुरशिद, रहा मुरीद था।
मानवों में उस किया, रब का दीद था।
नाम की महिमा कही, यूं उचार के।
"रते इसक खुदाइ रंगि दीदार के ॥"
महल चौबारे झूठे, लगाना चित्त न।
यौवन मेहमान जैसा, रहता नित्त न।
बिन अमलों दरगाह में, कोई मित्त न।
नाम बिना सब कूड़, कर तू हित्त न।
उसकी पंक्ति गाइये, मन समझाइये।
"जे जाणा मरि जाईऐ घुमि न आईऐ ॥
झूठी दुनीआ लगि न आपु वंञाईऐ ॥"
रूखी-सूखी खाना, जी तरसाना न।
"खलक वसै रब माहि", खलक दुखाना न।
रहना बन सोहागिन, प्रीत भुलाना न।
जाना बारी साथ, गुमान में आना न।
"जिंदु वहुटी मरणु वर", है फरीद यूं कहिआ।
"सेख हैयाती जगि न कोई थिरु रहिआ ॥
जिसु आसणि हम बैठे, केते बैसि गइआ ॥"
प्रीत बिना कई यौवन, सूखते जा रहे।
बिन विरहा कई जीवन, हैं मुरझा रहे।
खाक भी निंदना न, खाक समा रहे।
"जिना पछाता सचु चुंमा पैर मूं ॥"
यूं भक्तों से प्यार, हैं सिखला रहे।
कहा फरीद ने, कुफर कभी न तोलिए।
"बोलीऐ सचु धरमु झूठु न बोलीऐ ॥
जो गुरु दसै वाट मुरीदा जोलीऐ ॥"

-स. दान सिंघ कोमल, ४५५-जी, भाई रणधीर सिंघ नगर, लुधियाना-१४१००१

शेख फरीद जी की बाणी में अनासक्ति भाव का वास्तविक प्रयोजन

-कामायनी कौशिक*

हिन्दी काव्य-परम्परा में सूफी काव्य-धारा का अपना विशिष्ट स्थान है। आसक्ति अथवा प्रेम प्रधान होने के कारण हिन्दी साहित्य इतिहासकारों ने इसे प्रेम-मार्गी शाखा का नाम भी दिया है। इन सूफी कवियों ने लौकिक प्रेम को आलौकिक प्रेम का माध्यम माना है। इन्होंने कुछ लौकिक पात्रों के द्वारा कथानक रूढ़ियों को प्रयुक्त करके अपने महाकाव्यों की रचना भी की है। मगर शेख फरीद जी जैसे आध्यात्मिक अभिरुचियों वाले सूफियों ने इस प्रेम का प्रवृत्ति-मूलक रूप न अपनाकर इसे निवृत्ति-मूलक स्थिति में ही अपनाया है। ऐसा लगता है कि शेख फरीद जी की बाणी श्रृंगार रस के संयोग पक्ष की अपेक्षा वियोग पक्ष के अधिक निकट है। इससे उनकी प्रवृत्ति अनासक्ति की ओर उन्मुख हुई है। हो सकता है जामी तथा अलगज़ाली जैसे साधकों के समान ही शेख फरीद जी की साधना-पद्धति भी भारतीय धर्म-साधना के वैराग्य भाव से प्रभावित हो। भारतीय धर्म-ग्रंथों में इसे ही अनासक्ति भाव कहा गया है।

अलगज़ाली के अनुसार "संसार का प्रेम और परमात्मा का प्रेम दोनों एक साथ नहीं रह सकते। जो अन्यथा करता है, वह असत्य है।" वैराग्य वास्तव में भक्ति का पूरक तत्त्व है। शेख फरीद जी ने जिस वैराग्य की बात की है वह कायरतावादी अथवा पलायनवादी नहीं बनाता। वे तो संसार त्यागने वाले को फटकारते हुए कहते हैं:

फरीदा जंगलु जंगलु किआ भवहि वणि कंडा मोड़ेहि ॥
वसी रबु हिआलीऐ जंगलु किआ ढूढेहि ॥
(पन्ना १३७८)

संसार के कई अन्य मतों में संसार से संबंध-विच्छेद को ही विरक्ति कहा गया है, मगर शेख फरीद जी का वैराग्य तो मानव में सांसारिकता के प्रति अनासक्ति पैदा करता है संसार के प्रति नहीं। संसार और शरीर के भौतिकतावादी मिथ्यात्व नश्वरता, क्षण-भंगुरता, सारहीनता आदि को शेख फरीद जी ने अपनी बाणी का विषय बनाया है :

बुढा होआ सेख फरीदु कंबणि लगी देह ॥
जे सउ वर्हिआ जीवणा भी तनु होसी खेह ॥
(पन्ना १३८०)

धन जोड़ने, महल आदि से मोह भंग करते हुए शेख फरीद जी मानव मन में अनासक्ति का भाव पैदा करने हेतु कहते हैं :

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ उसारेदे भी गए ॥
कूड़ा सउदा करि गए गोरी आइ पए ॥
(पन्ना १३८०)

शेख फरीद जी ने इस अनासक्ति को पैदा करने हेतु मानव को मृत्यु तक का भय दर्शाया है। उनका उद्देश्य प्राणी को मृत्यु से डराना नहीं बल्कि मृत्यु का स्मरण कराते हुए उसके मन में भौतिकता से अनासक्ति तथा ईश्वर के प्रति आसक्ति पैदा करना है :

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ एतु न लाए चितु ॥
मिटी पई अतोलवी कोइ न होसी मितु ॥
(पन्ना १३८०)

बड़े-बड़े छत्रधारी भी मृत्यु से बच नहीं सके हैं फिर आम आदमी की क्या बिसात है!

**अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, केन्द्रीय विद्यालय, फरीदकोट कैंट।*

यह सब यहीं रह जाना है तो फिर इससे मोह क्यों?
पासि दमामे छतु सिरि भेरी सडो रड ॥
जाइ सुते जीराण महि थीए अतीमा गड ॥
(पन्ना १३८०)

सांसारिक वैभव एवं ऐश्वर्य के साथ-साथ शेख फरीद जी ने शारीरिक सौन्दर्य, शक्ति एवं आकर्षण को भी उस ईश्वर के प्रेम के बिना व्यर्थ माना है :
फरीदा जिन्ह लोइण जगु मोहिआ से लोइण मै डिठु ॥
कजल रेख न सहदिआ से पंखी सूइ बहिठु ॥
(पन्ना १३७८)

शेख फरीद जी की बाणी में यत्र-तत्र वृद्धावस्था का चित्रण भी इसी पर्याय का द्योतक है। वृद्धावस्था भी मानव को सांसारिकता से विमुख करती है और ईश्वरोन्मुखी बनाती है :
—देखु फरीदा जु थीआ दाड़ी होई भूर ॥
अगहु नेड़ा आइआ पिछा रहिआ दूरि ॥
(पन्ना १३७८)
—फरीदा सिरु पलिआ दाड़ी पली मुछां भी पलिआं ॥
रे मन गहिले बावले माणहि किआ रलीआं ॥
(पन्ना १३८०)

शेख फरीद जी का अनासक्ति का भाव वास्तव में उनकी सांसारिक विषयों से विरक्ति का सूचक है। यह शेख फरीद जी ने अपनी बाणी के माध्यम से व्यापक स्तर पर किया है। उन्होंने मानव को उसकी वस्तुस्थिति से अवगत कराने में कोई कसर नहीं छोड़ी। इस सबके पीछे शेख फरीद जी का एक ही लक्ष्य रहा है कि मनुष्य अपने जीवन में अच्छे कर्म करे और संसार में रह कर भी उस ईश्वर के प्रति प्रेम-भाव रखे। सांसारिक नश्वरता, वृद्धावस्था, मृत्यु का चित्रण, वैराग्य-भाव, प्रियतम का स्नेह, विरह की तड़प, ये सब विषय उनके इसी संदेश के पोषक तत्व हैं। वे प्रियतम के प्रति अपनी ललक को इस प्रकार प्रकट करते हैं :
कागा करंग ढंढोलिआ सगला खाइआ मासु ॥
ए दुइ नैना मति छुहउ पिर देखन की आस ॥
(पन्ना १३८२)

शेख फरीद जी ने अपनी बाणी में उन सभी महत्त्वपूर्ण पहलुओं का उल्लेख किया है जो मानव जीवन को सांसारिकता से अनासक्त करके ईश्वर-प्रेम में आसक्त कर सकते हैं। इसके लिए उन्होंने मानवता के उन आधारभूत गुणों को धारण करने पर बल दिया जो एक मानव के लिए अनिवार्य हैं। अहम् का नाश, नम्रता, सत्य, अवगुणों का त्याग, उदारता, भ्रातृभाव, प्रेम, दया, सहिष्णुता, सहयोग, सहानुभूति आदि अनेक ऐसे गुण हैं जो मानव जीवन को सार्थक बनाते हैं। शेख फरीद जी ने अपनी बाणी के माध्यम से इन्हीं गुणों का विस्तार करने की प्रेरणा दी है। उनका कथन है कि दुर्गुणों को त्याग देना ही बेहतर है अन्यथा इस लोक के साथ-साथ मनुष्य को परलोक में भी शर्मिंदा होना पड़ता है :
फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मतु सरमिंदा थीवही सांई दै दरबारि ॥
(पन्ना १३८१)

इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि वे कर्म करने से मना करते हैं, वे तो अच्छे कर्म करने की प्रेरणा देते हैं। उनका मनोभाव यह है कि हमें अपने अवगुणों का विश्लेषण करना चाहिए, अपने गुणों की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए :
फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेख ॥
आपनड़े गिरीवान महि सिरु नींवां करि देखु ॥
(पन्ना १३७८)

संसार के अधिकतर धर्मों में अनासक्ति भाव को किसी न किसी रूप में अवश्य ही स्वीकार किया गया है। सूफी मत में दरवेश अथवा फकीरी का संकल्प इसी ओर संकेत करता है। शेख फरीद जी ने भी अपनी बाणी

में इस भाव को स्पष्ट किया है। शेख फरीद जी ने कहा है:

फरीदा काले मैडे कपड़े काला मैडा वेसु ॥
गुनही भरिआ मै फिरा लोकु कहै दरवेसु ॥
(पन्ना १३८१)

वास्तव में दरवेश का जीवन सादगी, सब्र और संतोष का जीवन होता है। शेख फरीद जी का कहना है कि अपने आप में मगन रह कर सादा जीवन व्यतीत करो, किसी दूसरे की ओर देखकर अपने जीउ को मत तरसाओ। जो कुछ ईश्वर ने दिया है उसी में संतुष्ट रहो। अधिक वस्तुओं की इच्छा न करो :

रुखी सुखी खाइ कै ठंढा पाणी पीउ ॥
फरीदा देखि पराई चोपड़ी ना तरसाए जीउ ॥
(पन्ना १३७९)

शेख फरीद जी की अनासक्ति भावना कहीं भी मानव को निराश अथवा विमुख नहीं करती। उनकी अनासक्ति कार्यों का निषेध नहीं करती अपितु सद्कर्म करने की ओर प्रेरित करती है। वे तो मात्र बुरे कर्म करने से रोकते हैं ताकि परमात्मा के समक्ष शर्मिंदा न होना पड़े।

सूफीवाद में अनासक्ति की भावना को आध्यात्मिक रहस्यवाद की विरह की अवस्था से भी जोड़ा जा सकता है। इसी अवस्था में आत्मा की परमात्मा से मिलन की इच्छा और अधिक प्रबल हो उठती है। वियोगावस्था में संसार की कोई भी वस्तु अच्छी नहीं लगती, इसी से संयोग का मार्ग प्रशस्त होता है। यही प्रवृत्ति मानव मन में अनासक्ति को जन्म देती है। शायद इसी लिए शेख फरीद जी विरह की स्थिति को अधिक अच्छा मानते हैं। वे विरह-रहित प्राणी को निकृष्ट मानते हुए कहते हैं :

बिरहा बिरहा आखीऐ बिरहा तू सुलातनु ॥
फरीदा जितु तनि बिरहु न ऊपजै सो तनु जाणु मसानु ॥ *(पन्ना १३७९)*

शेख फरीद जी ने वैराग्य अथवा अनासक्ति हेतु इच्छाओं पर संयम रखने को सरलतम मार्ग माना है। संसार में रह कर भी सांसारिकता से निर्लेप रहना ही आत्म-संयम है। इच्छाएं ही मनुष्य को माया के भ्रम-जाल में भटकाए रखती हैं। अगर मनुष्य सांसारिक विषय-विकारों और इच्छाओं पर नियन्त्रण करे तो संसार में रहकर भी ईश्वरोन्मुखी होकर अपने जीवन को सफल बना सकता है।

संसार के प्रति भौतिकवादी दृष्टिकोण के कारण ही मानव अपने आप को भोग-विलासों से मुक्त नहीं कर पाता है। शेख फरीद जी के अनुसार यही अनासक्ति का मूल कारण है और इसी लिए मनुष्य आजीवन दुख भोगता है। जो इन सबसे अनासक्त रहते हैं वे ही अपना जीवन सफल कर पाते हैं। वे कहते हैं :

फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख ॥
जिना खाधी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख ॥
(पन्ना १३७९)

शेख फरीद जी ने अपनी सम्पूर्ण बाणी में दुखों से मुक्त होने के लिए भौतिक पदार्थों से अनावश्यक मोह भंग करने का संदेश दिया है। गृहस्थी होते हुए भी उन्होंने आजीवन दरवेश होकर निर्वाह किया। वे जल में कमल की भांति रह कर अनासक्त होने का संदेश देते हैं। उनके अनुसार संसार से सन्यास लेना और जंगलों में जाकर भक्ति करने का दिखावा वास्तव में कायरता दिखाना अथवा पलायन करना है। शेख फरीद जी कहते हैं कि मानव उदार भावना से संसार में रहते हुए, सांसारिक बुराइयों से दूर रह कर ईश्वर का स्मरण करे और अपने जीवन को लोक-हित में लगाए। उन्होंने संसार में रहते हुए सांसारिकता के त्याग को ही अनासक्ति माना है। उनकी बाणी के माध्यम से यही संदेश मानव का मार्गदर्शन करता रहा है और भविष्य में भी करता रहेगा।



समाज-सुधारक भक्त कबीर जी

-डॉ. परमजीत कौर*

मध्यकालीन भक्ति लहर के प्रसिद्ध प्रवर्तक भक्त कबीर जी की बाणी श्लोकों के अतिरिक्त १७ रागों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शोभायमान है। आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत होने के साथ-साथ भक्त कबीर जी की बाणी में सामाजिक जीवन की समस्याओं का समाधान भी किया गया है। इसके द्वारा समाज में फैली हुयी कुरीतियों, अंधविश्वासों, भ्रम, पाखंड आदि का खंडन करते हुये उनके दुष्परिणामों से बचने का मार्ग दिखाया गया है। भक्त कबीर जी उच्च कोटि के समाज-सुधारक थे। वे एक ऐसे समाज का सृजन करना चाहते थे जिसमें झूठ, पाखंड, संकीर्णता, खोखले रीति-रिवाजों तथा कोरे कर्मकाण्डों को कोई महत्त्व न हो। भक्त कबीर जी ने सदैव मानवता पर बल दिया है। उनके अनुसार सामाजिक सम्बंधों में धर्म तथा जाति का कोई महत्त्व नहीं है, सभी प्राणी परमात्मा का अंश हैं :

कहु कबीर इहु राम की अंसु ॥
जस कागद पर मिटै न मंसु ॥ (पन्ना ८७१)

यह सारा संसार परमात्मा के नूर से ही पैदा हुआ है :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥
लोगा भरमि न भूलहु भाई ॥
खालिकु खलक खलक महि खालिकु पूरि रहिओ स्रब ठांई ॥ (पन्ना १३४९-५०)

मध्य काल में समाज ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य तथा शूद्र चार वर्णों में विभक्त था। ब्राह्मण वर्ण को श्रेष्ठ माना जाता था तथा शूद्र का तिरस्कार किया जाता था। भक्त कबीर जी के अनुसार मनुष्यों में जन्म, जाति, वर्ण आदि का कोई भेद नहीं है। मनुष्य केवल मनुष्य है। जब वह पैदा होता है उसकी कोई जाति नहीं होती। भक्त कबीर जी ऊंची जाति का अभिमान करने वाले ब्राह्मण वर्ग पर व्यंग्य करते हुये कहते हैं कि क्या ब्राह्मणों के अंदर दूध तथा शूद्रों के अंदर खून होता है? वास्तव में जो ब्रह्म (परमात्मा) को पहचानता है वही ब्राह्मण है :

गरभ वास महि कुलु नही जाती ॥
ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती ॥ . . .
जौ तूं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ ॥
तउ आन बाट काहे नही आइआ ॥
तुम कत ब्राहमण हम कत सूद ॥
हम कत लोहू तुम कत दूध ॥
कहु कबीर जो ब्रहमु बीचारै ॥
सो ब्राहमणु कहीअतु है हमारै ॥ (पन्ना ३२४)

स्वयं को उच्च जाति का समझने वाले ब्राह्मण भोजन तो निम्न जाति वालों के घर से ही प्राप्त करते हैं :

आपन ऊच नीच घरि भोजनु
हठे करम करि उदरु भरहि ॥
चउदस अमावस रचि रचि मांगहि
कर दीपकु लै कूपि परहि ॥ (पन्ना ९७०)

केवल जाति या ऊंच-नीच के आधार पर ही नहीं, मजहब के आधार पर भी कोई मनुष्य दूसरे मनुष्य से भिन्न नहीं है। भक्त कबीर जी समझते हैं कि तू दिल में सोच हिन्दू-मुसलमान

*अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, गुरु नानक गर्ल्स कालेज, सन्तपुरा, यमुनानगर (हरियाणा)-१३५००१

दोनों एक परमात्मा के बिना अन्य कहां से पैदा हुये हैं?

—हिंदू तुरक कहा ते आए किनि एह राह चलाई ॥
दिल महि सोचि बिचारि कवादे भिसत दोजक किनि पाई ॥ (पन्ना ४७७)

—हिंदू तुरक का साहिबु एक ॥
कह करै मुलां कह करै सेख ॥ (पन्ना ११५८)

जो मन, वचन और कर्म से दूसरों को अपने से छोटा तथा स्वयं को अहंकार के कारण महान समझते हैं उनका कभी कल्याण नहीं होता :

आपस कउ दीरघु करि जानै अउरन कउ लग मात ॥
मनसा बाचा करमना मै देखे दोजक जात ॥ (पन्ना ११०५)

उच्च जाति-कुल का अहंकार करने वालों के मन संकीर्ण हो जाते हैं। अहंकारी के जीवन का मार्ग परमात्मा की ओर नहीं जाता, वह परमत्मा से दूर हो जाता है। भक्त कबीर जी समझाते हैं कि जैसे यदि खांड रेत में मिल जाये तो हाथी उसे नहीं चुन सकता पर चींटी चुन लेती है, वैसे ही जात-पात का अभिमान छोड़कर ही परमात्मा का सामीप्य प्राप्त किया जा सकता है:

हरि भइओ खांडु रेतु महि बिखरिओ हसतीं चुनिओ न जाई ॥
कहि कमीर कुल जाति पांति तजि चीटी होइ चुनि खाई ॥ (पन्न ९७२)

मनुष्य मन की शांति की खोज में तीर्थों का आश्रय लेता हुआ अपने मन को समझाने का यत्न करता है कि तीर्थ-स्नान आदि उसके मन की मैल को दूर करने तथा जीवन में किये गये छल-कपट आदि दुष्कर्मों से मुक्त करने में सहायक होते हैं। भक्त कबीर जी इस भ्रान्ति को दूर करते हुये सावधान कर रहे हैं कि यदि मन मलिन है, जीवन अवगुणों से भरपूर है तो भिन्न-भिन्न तीर्थों पर जाकर शरीर को धोने से अवगुण दूर नहीं होते तथा न ही इन कर्मों से परमात्मा की निकटता प्राप्त की जा सकती है :

हृदै कपटु मुख गिआनी ॥
झूठे कहा बिलोवसि पानी ॥
कांइआ मांजसि कउन गुनां ॥
जउ घट भीतरि है मलनां ॥ (पन्ना ६५६)

ऐसा करता हुआ तथा ज्ञान-चर्चा में लगा हुआ मनुष्य केवल लोगों की दृष्टि में ज्ञानी कहलवा सकता है पर उसका अपना कोई कल्याण नहीं होता :

अंतरि मैलु जे तीरथ नावै तिसु बैकुंठ न जानां ॥
लोक पतीणे कछू न होवै नाही रामु अयाना ॥ (पन्ना ४८४)

हमारा हज तथा गोमती का तीर हमारा मन है जहां प्रभु का निवास है :

हज हमारी गोमती तीर ॥
जहा बसहि पीतंबर पीर ॥ (पन्ना ४७८)

बनारस तीर्थ पर शरीर त्यागने से जीव को मुक्ति मिल जाती है, लोगों के इस भ्रम को दूर करने के लिये भक्त कबीर जी आयु के अन्तिम पड़ाव में मगहर जा बसे। मगहर के बारे में यह भ्रम है कि यह धरती शपित है तथा इस धरती पर मरने से गधे का जन्म प्राप्त होता है। भक्त कबीर जी के अनुसार किसी देश या नगर विशेष में मरने से मुक्ति नहीं मिलती। मुक्ति के लिये परमात्मा की बंदगी करने के लिए अपने अंदर से संकीर्णता, दुविधा तथा अहंकार मिटाना आवश्यक है :

सगल जनमु सिव पुरी गवाइआ ॥
मरती बार मगहरि उठि आइआ ॥
बहुतु बरस तपु कीआ कासी ॥
मरनु भइआ मगहर की बासी ॥
कासी मगहर सम बीचारी ॥

ओछी भगति कैसे उतरसि पारी ॥ (पन्ना ३२६)

भक्त कबीर जी विस्तारपूर्वक समझा रहे हैं कि लम्बे-लम्बे चोले पहनना, जंगलों में जाकर निवास करना, देवताओं की पूजा करना, तीर्थों पर शरीर त्यागना ये सब माया के आडम्बर हैं। जीवन का सीधा-सरल मार्ग परमात्मा को हर समय याद रखना है :

—बिपल बसत्र केते है पहिरे किआ बन मधे बासा ॥
कहा भइआ नर देवा धोखे किआ जलि बोरिओ गिआता ॥
जीअरे जाहिगा मै जानां ॥
अबिगत समझु इआना ॥ (पन्ना ३३८)
—माथे तिलकु हथि माला बानां ॥
लोगन रामु खिलउना जानां ॥१॥
जउ हउ बउरा तउ राम तोरा ॥
लोगु मरमु कह जानै मोरा ॥१॥रहाउ॥
तोरउ न पाती पूजउ न देवा ॥
राम भगति बिनु निहफल सेवा ॥ (पन्ना ११५८)

यदि मन में छल-कपट है तो वाह्य वेशभूषा, नमाज, हज आदि भी कोई लाभ नहीं दे सकते :

किआ उजू पाकु कीआ मुहु धोइआ
किआ मसीति सिरु लाइआ ॥
जउ दिल महि कपटु निवाज गुजारहु
किआ हज काबै जाइआ ॥ (पन्ना १३५०)

केवल वेशभूषा के कारण या गले में माला आदि डाल लेने से कोई साधू, संत नहीं बन जाता :

गज साढे तै तै धोतीआ तिहरे पाइनि तग ॥
गली जिन्हा जपमालीआ लोटे हथि निबग ॥
ओइ हरि के संत न आखीअहि बानारसि के ठग ॥ (पन्ना ४७६)

अन्न का त्याग करके व्रत रखने से भी परमात्मा से मिलन नहीं हो जाता। भक्त कबीर जी के मत में जो ऐसा सोचता है वह पाखंड करता है। अन्न उत्तम पदार्थ है। भूखे पेट भक्ति नहीं की जा सकती :

जपीऐ नामु अंन कै सादि ॥१॥रहाउ॥
जपीऐ नामु जपीऐ अंनु ॥
अंभै कै संगि नीका वंनु ॥
अंनै बाहरि जो नर होवहि ॥
तीनि भवन महि अपनी खोवहि ॥
छोडहि अंनु करहि पाखंड ॥
ना सोहागनि ना ओहि रंड ॥ . . .
अंनै बिना न होइ सुकालु ॥
तजिऐ अंनि न मिलै गुपालु ॥ (पन्ना ८७३)

भ्रम में पड़े हुए लोग व्रत आदि रखकर पन्द्रह तिथियां तथा सात वार मनाते हैं। भक्त कबीर जी समझाते हैं कि जिस दिन भी परमात्मा का नाम लिया जाता है वह दिन शुभ होता है। भक्त कबीर जी ने इन तिथियों तथा वारों के माध्यम से परमात्मा का गुण-कीर्तन करके लोगों को इस भ्रम-जाल से निकालने का यत्न किया है। उन्होंने समझाया है कि केवल अमावस्या, संक्रान्ति आदि दिनों में व्रत रखकर या तीर्थों पर जाकर स्नान करने से कल्याण की आशा करना भ्रम है। ये सब ब्राह्मणों के पेट भरने का साधन है। इस प्रकार के कर्म-धर्म करके मनुष्य मृत्यु के उपरांत मुक्ति की आशा करता है पर परमात्मा के नाम-सुमिरन से इसी जन्म में विकारों के भ्रम-जाल से मुक्ति प्राप्त हो जाती है :

—पंद्रह थितीं सात वार ॥
कहि कबीर उरवार न पार ॥
साधिक सिध लखै जउ भेउ ॥
आपे करता आपे देउ ॥ (पन्ना ३४३)
—अंमावस महि आस निवारहु ॥
अंतरजामी रामु समारहु ॥
जीवत पावहु मोख दुआर ॥

अनभउ सबदु ततु निजु सारु ॥ (पन्ना ३४३)

वर्ण-आश्रम से सम्बंधित रस्में तथा धार्मिक समझे जाने वाले कर्म-धर्म मनुष्य में अहंकार पैदा करते हैं, भवसागर से पार नहीं कराते :

जेते जतन करत ते डूबे भव सागरु नही तारिओ रे ॥

करम धरम करते बहु संजम अहंबुधि मनु जारिओ रे ॥ (पन्ना ३३५)

पितरों के निमित्त श्राद्ध करने से घर में सुख-आनंद बना रहता है, इस भ्रम में पड़े हुये लोग 'जीवित पितरों' की सुख-सुविधाओं का तो ध्यान नहीं रखते पर उनकी मृत्यु के उपरांत श्राद्ध करते हैं; मिट्टी के देवी-देवता बनाकर उनके समक्ष कुर्बानी देते हैं, पर इस तरह करने से उनके दुख दूर नहीं होते। भक्त कबीर जी के अनुसार यह उनकी अज्ञानता ही है :

जीवत पितर न मानै कोऊ मूएं सिराध कराही ॥
पितर भी बपुरे कहु किउ पावहि कऊआ कूकर खाही ॥ (पन्ना ३३२)

भक्त कबीर जी ने सती-प्रथा, सूतक की अपवित्रता, चोरी, शराब का सेवन, पर-स्त्री-गमन आदि सामाजिक बुराइयों की ओर संकेत करते हुए इनसे छुटकारा पाने के लिये प्रेरित किया है। भक्त कबीर जी ने समझाया है कि पति की मृत्यु के बाद स्त्री को जबरदस्ती आग में जलने के लिये प्रेरित करना दुष्कर्म है, असल सती तो सत्य-आचरण की धारक होती है :

बिनु सत सती होइ कैसे नारि ॥ (पन्ना ३२७)

जन्म-मरण से उत्पन्न अपवित्रता के बारे में भक्त कबीर जी कहते हैं कि यदि ऐसा मान लिया जाये तो संसार में कोई ऐसा स्थान नहीं है जो पवित्र माना जाये क्योंकि हर समय हर स्थान पर जन्म-मरण का सिलसिला चलता रहता है। कहीं दृश्य रूप में तो कहीं अदृश्य रूप में :

मैला मलता इहु संसारु ॥
इकु हरि निरमलु जा का अंतु न पारु ॥ . . .
कहि कबीर ते जन परवान ॥
निरमल ते जो रामहि जान ॥ (पन्ना ११५८)

जो व्यक्ति परमात्मा को हृदय में बसाता है तथा जन्म-मरण को प्रभु की रजा मानता है, वह सूतक का भ्रम नहीं मानता :

कहि कबीर रामु रिदै बिचारै सूतकु तिनै न होई ॥ (पन्ना ३३१)

शराब आदि नशे का सेवन समाज को खोखला कर देता है। मदिरा का सेवन करने वाला व्यक्ति कभी प्रसन्न नहीं रहता। भक्त कबीर जी समझाते हैं कि नशा करने से सुरति नहीं जुड़ती, बल्कि व्यक्ति होश ही खो बैठता है। केवल नाम-रस ही सच्चा रस है जो आत्मिक आनंद प्रदान करता है :

कहि कबीर सगले मद छूछे इहै महा रसु साचो रे ॥ (पन्ना ९६९)

ज्योतिष में विश्वास, जादू-टोने, जन्त्र-मन्त्र, सूर्य-चन्द्रमा आदि की पूजा से जन्म-मरण का चक्र समाप्त नहीं होता। इन सबके जाल से मुक्त होकर एक परमात्मा का ही आश्रय लेना चाहिये जिसके प्रकाश से सारा संसार प्रकाशित है :

—चंदु सूरजु दुइ जोति सरूपु ॥
जोती अंतरि ब्रहमु अनूपु ॥ (पन्ना ९७२)
—आगम निरगम जोतिक जानहि बहु बहु बिआकरना ॥
तंत मंत्र सभ अउखध जानहि अंति तऊ मरना ॥ . . .
कहु कबीर इउ रामहि जंपउ मेटि जनम मरना ॥ (पन्ना ४७६-७७)

भक्त कबीर जी ने मूर्ति-पूजा का भी विरोध किया है। भक्त कबीर जी समझाते हैं कि पत्थर की मूर्ति बनाने वाला उस पत्थर पर पैर

(शेष पृष्ठ ३७ पर)

भक्त कबीर जी : बाणी और विचार

-डॉ. कीर्ति केसर*

भक्त कबीर जी का जन्म ऐसे समय में हुआ जब विदेशी संस्कृति के आक्रामक आघात से भारतीय संस्कृति पत्नोन्मुख हो चली थी। वह भारत में शासक बन कर आई थी। इसने इस देश की राजनैतिक तथा सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करने के साथ धार्मिक प्रतिष्ठानों, आध्यात्मिक परम्पराओं और तमाम मान्यताओं को भी हानि पहुंचाई थी। एक भयानक चीत्कार हुआ। शस्त्रधारी वीर पराजित होकर शस्त्रों को तिलांजली देकर भोग-विलास में व्यस्त हो गए थे। पलायनवादी रुझान ने बुद्धि की धार को कुंठित कर दिया। असहाय जनजीवन तिनके का सहारा ढूंढने के लिए इधर-उधर भटकने लगा। ज्ञानी, पंडित, दार्शनिक, पंडा-पुरोहित इस तीव्र आंधी के प्रकोप से जनजीवन को बचाने में असमर्थ थे। देखते-देखते सांस्कृतिक गौरव बिखरने लगा।

आत्म-रक्षा का उपाय न सूझने पर भारतीय समाज का विवेकशील वर्ग मध्य मार्ग खोजने लगा, पर दोनों पक्षों के बीच की दूरी को पाटना इतना सहज नहीं था, क्योंकि एक पक्ष शासक था और दूसरा शासित।

समय के सरदार और मर्यादा के रक्षक जब तलवार सिरहाने रखकर सो गए तो फिर उठने का नाम न लिया। कब रात ढली, कब सुबह हुई कब शाम, कितनी सदियां बीत गईं, उन्हें इसकी भी खबर न रही। वाणी चुप्पी के काले कारागार में बंद हो गई। विवेक लकवे के रोगी की तरह शून्य में रेंगने लगा। विवशता वैराग्य बनने लगी। भारतीय मानस का आशावाद, आस्थावाद ठंडा पड़ गया, क्षितिज पर लहू पुत गया, दिशाएं अपना परिचय भूल गईं और संस्कृति के संवाहक-तत्व ध्वस्त हो गए। ऐसे में जो 'भीड़' दौड़ लगा रही थी उसके सामने न कोई विकल्प था, न ही कोई केन्द्रीय नेतृत्व। जब आक्रमणकारी सम्राटों के पांव जमने लगे तब उन्होंने इस धरती को अपना वतन बना लिया तो जनजीवन में समझौता, सहिष्णुता तथा समन्वय की प्रवृत्ति प्रकट होने लगी। विदेशी मूल के सूफी-संतों ने इस रंगमंच पर बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। एक तरह से उनका प्रेमवाद भारतीय संस्कृति की अहिंसावादी मानसिकता में शहद की तरह घुलने लगा।

दो संस्कृतियों के ऐसे संधि-काल में मुस्लिम दम्पत्ति के घर में एक ज्योतिपुंज उदय हुआ जिसे संसार ने भक्त कबीर जी के नाम से जाना और भक्त कबीर जी के नाम से माना। निर्गुण भक्तिधारा के भक्तों में भक्त कबीर जी का स्वर सबसे ऊंचा था। जिसने निर्द्वन्दभाव से मनुष्य की मनुष्यता का आवाहन प्रभु की विराट सत्ता के माध्यम से किया। भक्त कबीर जी अपने समय के ही नहीं समूचे मध्य युग के ऐसे विद्रोही स्वर हैं जो हर रूढ़ि की मर्यादायों को तोड़ते हुए, मान्यताओं को नकारते हुए समय के प्रवाह के विरुद्ध अकेले ही चलते रहे, बिना थके, बिना रुके।

वास्तव में भक्त कबीर जी दरिद्रता और शोषण का त्रास भोग चुके थे। अस्पृश्यता का अपमान सहते लोगों की पीड़ा का अनुभव वे स्वयं कर रहे थे। उनका लालन-पालन मुस्लिम

*1086/E, Gobindgarh, S.D. College Road, Jalandhar-144001. Ph: 0181-2227497

परिवार में हुआ इसलिए वे उसके सार-तत्व को ग्रहण भी कर सके और उसकी असामाजिक रूढ़ियों पर आघात भी करते रहे। उन्होंने काशी में रह कर बड़े-बड़े पंडितों का जातीय दम्भ भी देखा था अतः उस पर भी उन्होंने फटकार मारी और मुल्लाओं की वर्जनाओं का पाखंड भी उजागर कर दिया। भक्त कबीर जी शास्त्र के दांव-पेच, यश-लोभ और अन्य सांसारिक सुखों के मोह से मुक्त थे। वे त्राहि-त्राहि करती हुई मनुष्यता के साथ जुड़े थे। गुरु, ज्ञान और प्रेम उनके लिए मोक्ष या स्वर्ग-प्राप्ति के साधन मात्र नहीं थे बल्कि सच्चे मानव की तरह जीवन को जी कर विराट चेतना के साथ एकाकार हो जाने के साधन थे। उनकी सामाजिक चेतना अपने समकालीनों में सबसे प्रखर थी और समाज-बोध सबके लिए प्रेरक बना हुआ था। उन्होंने भयमुक्त होकर सदा कड़ुवा सच ही बोला :

—कहु रे मुलां बांग निवाज ॥
एक मसीति दसै दरवाज ॥
मिसिमिलि तामसु भरमु कदूरी ॥
भाखि ले पंचै होइ सबूरी ॥
हिंदू तुरक का साहिबु एक ॥
कह करै मुलां कह करै सेख ॥ (पन्ना ११५८)
—कबीर ठाकुरु पूजहि मोलि ले मनहठि तीरथ जाहि ॥
देखा देखी स्वांगु धरि भूले भटका खाहि ॥
(पन्ना १३७१)

उनकी दृष्टि से डंडी मारने वाला तथा लोभ के कारण संचय करने वाला बनिया भी नहीं बचा। वे मिलावट करने वाले को भी नहीं छोड़ते। उनके ऐसे पदों में अर्थ चाहे कितने ही दार्शनिक क्यों न हों किन्तु समय का सत्य अनायास ही चित्रित हो गया है। इसकी प्रासंगिकता आज भी कम नहीं हुई। ऐसी कुमति की भर्त्सना उन्होंने अपने कई पावन श्लोकों में की है :

कबीर कउडी कउडी जोरि कै जोरे लाख करोरि ॥
चलती बार न कछु मिलिओ लई लंगोटी तोरि ॥ (पन्ना १३७२)

भक्त कबीर जी निर्गुण प्रभु के अनन्य भक्त हैं किन्तु मोक्ष अथवा स्वर्ग का सुख उनकी भक्ति का मूल प्रयोजन नहीं है। उन्हें जीवन की परम सार्थकता अपेक्षित है। वह सार्थकता जीवन के कर्म और आत्मा के मर्म से जुड़ी है जो इसी जीवन में, इसी धरती पर, इसी आसमान के नीचे दिखाई देती है। मिथ्या भ्रमों में भटकते सामान्य-जन को वे अपने पदों में जो तसल्ली देते हैं उसका सत्य जितना मध्य काल में सार्थक था उतना ही आज भी सार्थक है :

कबीर सुरग नरक ते मै रहिओ सतिगुर के परसादि ॥
चरन कमल की मउज महि रहउ अंति अरु आदि ॥ (पन्ना १३७०)

लोभ का त्याग करने की बात भक्त कबीर जी ने अपने कई दोहों में कही है। उसके पीछे मात्र गरीबी का अहसास नहीं बल्कि समाज में सभी को कुटिया-रोटी-वस्त्र की सुविधा प्राप्त हो, यह परमार्थ की कामना ही भक्त कबीर जी की बाणी की शक्ति है :

कबीर कीचड़ि आटा गिरि परिआ किछू न आइओ हाथ ॥
पीसत पीसत चाबिआ सोई निबहिआ साथ ॥ . .
कबीर कोठे मंडप हेतु करि काहे मरहु सवारि ॥
कारजु साढे तीनि हथ घनी त पउने चारि ॥
(पन्ना १३७६)
कबीर सूता किआ करहि जागु रोइ भै दुख ॥ . . .
कबीर सूता किआ करहि बैठा रहु अरु जागु ॥
(पन्ना १३७१)

भक्त कबीर जी मानवता के पहरेदार हैं:

कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रितु लोनु ॥

हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु ॥
(पन्ना १३७४)

भक्त कबीर जी के समूचे रचना-संसार के अध्ययन से यह तथ्य उजागर होता है कि उनके पास भक्ति-साधना में एक पूरा सामाजिक जीवन-दर्शन है। उनके उपदेशों से भरे भक्ति-काव्य में ठोस अनुभवों से बना विचार-बोध है, जीवन-मूल्य है, जो उन्होंने सामाजिक, सांस्कृतिक परंपरा से सार रूप में अर्जित किए। शुद्ध आचरण भक्त कबीर जी ने अपने सारे जीवन में किया था तभी तो उनकी बाणी को सूक्तियों, नियमों तथा नैतिक आचार संहितायों का स्थान प्राप्त है। उनका मृत्यु-बोध संसार की क्षणभंगुरता का बोधक है इसीलिए वे इस क्षणभंगुरता से जीवन से पलायन की प्रेरणा नहीं देते बल्कि उसे मानवहित में सार्थक बनाकर जीने का **'बोध'** देते हैं। भक्त कबीर जी प्रेम की पूंजी लेकर ज्ञान के शिखर पर खड़े हैं। उनके पास अनुभव था, विचार था, लोक-खलकत के लिए मन में पीड़ा थी, कसक थी, इसलिए वे जनसाधारण के हमदर्द नायक हो गए। गृहस्थ में भी अखंड समाधि, शरीरधारी होते हुए भी अशरीरी विराट सत्ता में रमे हुए भक्त कबीर जी ने जीवन को जीने की ऐसी युक्ति बनाई कि मृत्यु का भय ही नहीं रहा :

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरे मनि अनंदु ॥
मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु ॥
(पन्ना १३६५)

जीवन की चदरिया ओढ़े उन्होंने समाज के लिए जिन सूत्रों और सूक्तियों को अपनी बाणी में स्थापित किया वे सदा सद्य: हैं, नवीन हैं। जन हेतु काव्य जब भी अपना साहित्य-इतिहास अपनी परम्परा में ढूंढेगा उसे अपने बीज भक्त कबीर जी की बाणी में मिलेंगे।



समाज-सुधारक भक्त कबीर जी

(पृष्ठ ३४ का शेष)

रखकर मूर्ति बनाता है। अगर यह मूर्ति सचमुच ही किसी देवता की है तो इस तरह का अनादर क्यों? इसके अतिरिक्त जो पदार्थ मूर्ति के आगे भेंट किये जाते हैं उनको वास्तव में मूर्ति नहीं खाती, पुजारी ही खाता है:

—पाखान गढि कै मूरति कीन्ही दे कै छाती पाउ ॥
जे एह मूरति साची है तउ गढ़णहारे खाउ ॥
(पन्ना ४७९)

संक्षेप में कह सकते हैं कि भक्त कबीर जी ने समाज में फैली हुई कुरीतियों, अन्धविश्वासों, वाह्य-आडम्बरों, भ्रमों तथा पाखंडों का विरोध कर परमात्मा की भक्ति का सीधा-सरल मार्ग दिखाया है, जिसके लिये गृहस्थ धर्म का त्याग बिलकुल अनावश्यक है, केवल मन से विकारों की मैल को त्यागना जरूरी है। जो व्यक्ति गृहस्थाश्रम में रहता हुआ मोह-माया से निर्लेप होकर परमात्मा की भक्ति करता है वही मानव-जीवन के लक्ष्य (प्रभु-मिलन) की प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है :

बनहि बसे किउ पाईऐ जउ लउ मनहु न तजहि बिकार ॥
जिह घरु बनु समसरि कीआ ते पूरे संसार ॥
(पन्ना ११०३)

कोई भी मजहब, कोई भी धर्म तभी कल्याणकारी है जब उसमें निर्दिष्ट उपदेशों पर चलकर दिल में खलकत के लिये प्रेम पैदा किया जाये। इस तरह सहज अवस्था प्राप्त हो जाती है तथा भ्रम का जाल काटा जा सकता है :

कहि कबीर मन सरसी काज ॥
सहज समानो त भरम भाज ॥ (पन्ना ११९५)



भक्त कबीर जी

*-डॉ. विभा सिंह**

पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहिब ने एक बार खुदा के निनयानवे नाम गिनाए थे। उनमें अड़तालीसवां नाम भक्त कबीर जी का था। **'कबीर'** का अर्थ है—महान, श्रेष्ठ। निस्संदेह भक्त कबीर जी ने अपनी आध्यात्मिक प्रतिभा से इस नाम की सार्थकता सिद्ध की। भक्त कबीर जी का जन्म काशी में हुआ था।

स्वामी रामानंद जी से प्रभावित होकर भक्त कबीर जी ने उन्हें अपना गुरु बनाना चाहा, लेकिन स्वामी रामानंद जी ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। एक दिन भक्त कबीर जी गंगाघाट की एक सीढ़ी पर सो गए। स्वामी रामानंद जी प्रतिदिन उधर ही से गंगा-स्नान के लिए जाया करते थे। अचानक उनका पैर भक्त कबीर जी के ऊपर पड़ गया। दया की भावना से उन्होंने अपना पैर उठाते "राम-राम" का उच्चारण किया। इस "राम-राम" को गुरु-मंत्र मानकर भक्त कबीर जी ने स्वामी रामानंद को अपना गुरु मान लिया। स्वामी रामानंद जी ने भी आगे चलकर भक्त कबीर जी की निष्ठा, ईमानदारी और भक्ति से प्रभावित होकर इन्हें शिष्य रूप में स्वीकार कर लिया। ज्ञान-भक्ति की साधना में लिप्त रहते हुए भक्त कबीर जी ने स्वयं को अपने घरेलू व्यवसाय में लगाया, कपड़ा बुनते हुए अपनी लौ भगवान में लगाए रखी, ताने-बाने के अनेक रूपकों द्वारा प्रभु-भक्ति की चादरें बुनते रहे :

गरभ वास महि कुलु नही जाती ॥
ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती ॥१॥
कहु रे पंडित बामन कब के होए ॥
बामन कहि कहि जनमु मत खोए ॥१॥रहाउ॥
जौ तूं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ ॥
तउ आन बाट काहे नही आइआ ॥
तुम कत ब्राहमण हम कत सूद ॥
हम कत लोहू तम कत दूध ॥ (पन्ना ३२४)

अनेक रूढ़ियों में जकड़े हुए समाज को यह बात कैसे सहन सो सकती थी, अत: ब्राह्मणों ने तथा मुल्लाओं ने इनको खूब सताया लेकिन इन्होंने बिल्कुल भी किसी की परवाह नहीं की।

प्रेम भी एक नशा है। बनावटी प्रेम का नशा दो दिन में उतर जाता है, लेकिन सच्चे प्रेम की ताजगी सदैव बनी रहती है, चौबीसों घंटे उसका नशा बना रहता है और दिनों दिन गहरा होता जाता है। बिखरी हुई लगन वाले लोगों के लिए यह मार्ग नहीं है क्योंकि *"प्रेम गली अति सांकरी जा में दो न समाहि।"* प्रेम की दुनिया नेम और बुद्धि-व्यवहार के परे है। एक बार प्रेम का रंग चढ़ गया तो फिर अन्य सब कुछ गौण हो जाता है।

भक्त कबीर जी से संबंधित बहुत सी लोक-कथाएं प्रचलित हैं। एक बार बादशाह सिकंदर लोदी ने यह आरोप लगाकर कि भक्त कबीर अपने आप को ईश्वर कहता है, उन्हें आग में फिंकवा दिया, लेकिन उनका बाल बांका न हुआ। फिर उन्मत्त हाथी के सामने छोड़ा गया कि वह इनको चीर डाले, लेकिन डर के मारे हाथी बेचारा भाग गया। अनेक प्रकार से इनकी परीक्षा ली गयी, लेकिन हर कसौटी पर वे सोना सिद्ध हुए। उनकी ईमानदारी और महानता आलौकिक थी। उनके किसी भी काम

'विभावरी', जी-९, सूर्यपुरम्, नन्दनपुरा, झाँसी-२८४००३ (उ. प्र.)

में छिपाव न था। जो चीज खुली हुई है वह कभी बुरी नहीं हो सकती। बुराई चलती इसीलिए है कि उसमें गोपनीयता होती है। भक्त कबीर जी संतों की सेवा में तन, मन, धन अर्पित करते हैं। उनकी सुपत्नी माता लोई जी ने भी भक्त जी के साथ इस सेवा में स्वयं को समर्पित किया हुआ था।

भक्त कबीर जी की फाकामस्ती भी बेमिसाल थी। एक बार अपने बुने हुए थान को बाजार में बेचने के लिए वे उसे ले जा रहे थे। रास्ते में एक साधू मिल गया और उसने याचना की। भक्त कबीर जी ने आधा थान फाड़कर उसे दे दिया। साधू ने कहा—"बाबा! इतने से मेरा काम नहीं चलेगा।" भक्त कबीर जी ने शेष आधा थान भी साधू को दे दिया और प्रसन्नतापूर्वक घर लौट आए।

भक्त कबीर जी की मौलिकता, अक्खड़पन, निर्भीकता तथा प्रेम की दीवानगी कमाल दर्जे की है। "झीनी-झीनी बीनी चदरिया" से लेकर "ज्यों की त्यों धरि दीन्हीं चदरिया" तक उनका जीवन और दर्शन बड़ा प्रेरक एवं अभिनंदनीय है। सहज दुलीचा डालकर ज्ञान के हाथी पर चढ़े हुए भक्त कबीर जी ने सांसारिक लोगों की निंदा-चुगली की रंचक मात्र भी चिन्ता नहीं की। प्रेम नगर में रहने वाले वे एक मस्त फकीर थे। नाम-भजन के सामने सारा वैभव उन्हें तुच्छ लगता था। सबकी सुनने और तटस्थ भाव से अपनी मर्यादाओं में रहने के वे आदी थे। ईर्ष्यालुओं द्वारा अपनी निंदा होते देख वे तिलमिलाए नहीं बल्कि उन्होंने अपने ही अंदाज में फरमान किया:

निंदउ निंदउ मो कउ लोगु निंदउ ॥ (पन्ना ३३९)

भक्त कबीर जी ने निंदक का बहुत आभार माना है क्योंकि वह अपने आप अधजल में रहकर दूसरों का पार-उतारा करता है, वह दूसरों की निंदा करके उनकी मैल धोता है। यदि चादर मैली है तो प्रिय को रिझाना संभव नहीं है।

अपनी अटपटी किन्तु सहज बाणी में भक्त कबीर जी ने दो टूक बात कही है। उन्हें सर्वत्र अपने लाल की लाली दिखायी पड़ती थी। उस लाली में वे भी सराबोर हो गए थे। ऐसे तत्वदर्शी के सामने भाषा लाचार थी। जो कुछ उन्होंने कहना चाहा, भाषा को उसका अनुगमन करना पड़ा। प्रचलित रूढ़ियों, वाह्याचारों एवं ढोंग के विरुद्ध खड़े होकर आपने सारे समाज से वैर मोल ले लिया था। आपने मौलाणें एवं पंडित दोनों को फटकार लगायी और सही राह पर आने की प्रेरणा दी। वे 'फकीर' थे, लेकिन 'लकीर के फकीर' नहीं थे, इसलिए समाज उनकी बातों को पकड़ नहीं पाता था :

—साचु कतेब बखानै अलहु नारि पुरखु नही कोई ॥
पढे गुने नाही कछु बउरे जउ दिल महि खबरि न होई ॥ (पन्ना ४८३)

—पडीआ कवन कुमति तुम लागे ॥
बूडहुगे परवार सकल सिउ रामु न जपहु अभागे ॥ (पन्ना ११०२)

विष को अमृत बनाने का गुर हाथ आ गया तो अमरत्व अपने आप प्राप्त हो सकता है। अपने जीवन से भक्त कबीर जी ने इस बात को सिद्ध किया। तथाकथित मोक्षदायनी नगरी काशी में पैदा हुए, वहीं रहे भी, लेकिन शरीर त्याग किया मगहर में आकर। कहा जाता है कि काशी में प्राण त्यागने से मुक्ति मिलती है और मगहर में मरने वाला नरक का भागी होता है। मोर-तोर के बंधन को तोड़ कर, सभी भेदभावों को छोड़कर जो प्रभुमय हो गया था वह भला रूढ़ि को कैसे बरदाश्त करता! अत: संवत् १५७५ वि. में मगहर में भक्त कबीर जी ने मृत्यु का वरण किया। उनके शिष्यों में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही थे।



भक्त रविदास जी की बाणी में तत्कालिक सामाजिक, धार्मिक व्यवस्था का चिंतन

*-डॉ. जसबीर सिंघ साबर**

सम्पूर्ण चिन्ताओं को हरने वाली भक्त रविदास जी की उच्चारण की गई 'धुर की बाणी' (ईश्वरीय बाणी) यद्यपि मूलरूपेण आध्यात्मिकवाद से अभिन्न है तथापि मनुष्य जीवन को दुर्लभ स्वीकारते, मनुष्य जीवन युक्ति दर्शाती तथा 'बेगम पुरा' जैसे विकसित समाज-सृजन की भूमिका निरंतर सात शताब्दियों से उज्जवल ढंग के साथ निभाती चली आ रही है। यह सत्य 'किन्तु-मुक्त' है कि इस बाणी के रचयिता मानव-देह, मानव दुख-संताप, मानव-समाज और मानव-भाषा के साथ अभिन्न रूप से जुड़े होने के कारण, मनुष्य-समाज की प्रत्येक सभ्यता का मार्गदर्शन करने हेतु पूर्णरूपेण समर्थ व सार्थक सिद्ध होते हैं। अत: यह बाणी सम्पूर्ण ब्रह्मांड की चेतना की दृष्टि से एक अद्‌भुत श्रेणी के समाज में धार्मिकता के प्रसंग का सृजन करती है। सम्पूर्ण ब्रह्मांड की इस चेतना के अंतर्गत भक्त रविदास जी की बाणी समाज में धार्मिक युक्ति, समूचे विश्व को 'वासुदेव कुटुंबकम' के नाते स्वीकारने वाली बन जाती है।

यथार्थ में जब भी कभी किसी पवित्र आत्मा (पावन पुरुष) की कृति का मूल्यांकन करना पड़े तब इस प्रसंग में निम्नलिखित (चार) युक्तियों को सन्मुख रखना महत्वपूर्ण हो सकता है:

१. सम्बंधित पवित्रामय की कृति की प्रमाणिकता।
२. रचनाकार की तत्कालीन धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक परिस्थितियां।
३. स्वयं के विचारों को मानव मस्तिष्क की चेतना में दृढ़ करने के लिए प्रयोग में लाए गए संचार-माध्यम व युक्तियां।
४. रचनाकार के जीवन-दर्शन का सामाजिक मूल्य।

उपरोक्त युक्तियों में से चौथी युक्ति पर विस्तृत विचार करना ही इस खोज-पत्र का मुख्य उद्देश्य है।

यह एक अटल सत्य है कि रचनाकार के परिचय का आधार होता है उसका सामाजिक प्रसंग। उसके द्वारा सृजन किए गए सिद्धांतों का उचित मूल्य सामाजिक प्रसंग में ही पड़ता है। यथार्थ में कोई भी रचना, सिद्धांत या संकल्प तब तक सार्थक नहीं बनते जब तक कि उनका प्रसंग समाज के साथ अभिन्न न बने। सामाजिक प्रसंग की सहकारिता ही उस रचना-सिद्धांत या संकल्प को सार्थक बनाने में समर्थ बना सकती है। जिस रचना सिद्धांत को सामाजिक विकास के कार्यों के लिए व्यवहारिक रूप में लाया जा सके, वह सिद्धांत हो ही नहीं सकता। उसकी किसी भी स्तर से सामाजिक सार्थकता नहीं सिद्ध होती। इस प्रसंग में एक बात सर्वदा स्मरण रखनी चाहिए कि जन-वचन और कर्म में अंतर आ जाए तो मानवीय विचारधारा स्वयंभू बन कर स्वार्थप्रधान बन जाती है। ऐसी विचारधारा को धारण करने वाले मनुष्य में सत्य, नेकी, सेवा, परोपकार की भावना कुंठित ही नहीं बल्कि अधिकतर अवस्थाओं में मृतप्राय: हो जाती है तथा उसमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार

**निदेशक, निदेशालय, सिख धर्म अध्ययन पत्राचार कोर्स, शि: गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर।*

की भावना प्रचंड हो जाती है। भक्त रविदास जी प्रवचन करते हैं:

इन पंचन मेरो मनु जु बिगारिओ ॥
पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ ॥

(पन्ना ७१०)

परिणामस्वरूप ऐसी विचारधारा मानव समाज के संतुलन को असंतुलित व अस्थिर करने वाली बन जाती है। अत: ऐसे सिद्धांतों का सृजन सामाजिक आवश्यकता बन जाती है जिनके द्वारा मनुष्य समाज को पुन: संतुलित किया जा सके। इस प्रसंग में भक्त रविदास जी की बाणी महत्वपूर्ण है।

नि:संदेह वैज्ञानिक उन्नति ने आध्यात्मिक चिंतन को अतिरिक्त चुनौतिपूर्ण बना दिया है तथा आधुनिक मनुष्य दिन-प्रतिदिन इस ओर अधिक आकर्षित भी हो रहा है। परंतु पश्चिम के एक सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक विलियम जेम्स ने स्वयं की एक कृति (पुस्तक) **'The Varieties of Religion Experiences'** में अंकित पृथक-पृथक लेखों द्वारा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से आध्यात्मिक चिंतन को मनुष्य-उत्थान का धरातल स्वीकार किया है। एक अन्य प्रसिद्ध विद्वान श्री सी. सी. जंग तो यहां तक कहते हैं कि मनुष्य को परमाणुओं के तत्वों का बना यांत्रिक पुर्जा (अंग) अथवा जड़-वस्तु समझना एक भयंकर अथवा भारी त्रुटि है क्योंकि मनुष्य यथार्थ में प्राणी (प्राणधारी) तथा आध्यात्मिक प्रकृति वाला ऐसा जीव है जिसकी नवीनतम आध्यात्मिक परम्परा तथा उद्देश्य हैं। **(C. C. Jung, Modern Man in the Search of Soul, P. 117)** इस प्रकार एक अन्य प्रसिद्ध विद्वान मोरिस बारबनल स्वयं की कृति **'This is Spiritualism, P. 211'** में लिखते हैं कि **'Once you realise that you are a spiritual being, you have a new scale of values and a totally different perspective, then fear and worry are banished. You are aware that no enduring harm can come to yourself . . . This Knowledge makes you to realise that there are lessons to be learned in shadows as well as in sunshines, in pains as well as in sunshines, in pains as well as in pleasures, in sorrows as well as in joys, in storm as well as in peace.'**

भाव यदि मनुष्य इस विश्वव्यापी सत्य को स्वीकार करे कि मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के साथ-साथ आध्यात्मिक प्राणी भी है तो उसकी मानसिक विचारधारा में से प्रत्येक प्रकार का भय समाप्त हो जाएगा तथा उसको हर क्षण, प्रत्येक घड़ी दुख-सुख एकरस प्रतीत होगा।

सम्पूर्ण ब्रह्मांड की जिस चेतना की बात इस पत्र के आरंभ में की गई है उसके प्रति एक और विद्वान ग्रेनस्टट्ड अपनी कृति **'The Psychology of Religion'** में लिखते हैं कि विकसित तथा सम्पूर्ण ब्रह्मांड की चेतना के स्थान पर संकीर्णता तथा निज-स्वार्थ की रुचि उस युग का प्रधान तत्व था जो आज भी अपने यौवन पर है। मनुष्य जीवन में धार्मिक, राजनैतिक व सामाजिक स्तर पर इतना अधिक अंतर-विभाजन स्थापित हो चुका था कि प्रत्येक ओर के द्वेष, विरोध, घृणा, जाति, वर्ण-भेद तथा छूत-अछूत के घनघोर मेघ मंडरा रहे थे। जनसाधारण की इस दयनीय स्थिति की दुहाई भक्त रविदास जी की बाणी भी देती है:

दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी ॥

(पन्ना ८५८)

धार्मिक क्षेत्र में ब्रह्म के अनेक स्वरूप प्रचलित थे, पूजा-विधियां इतनी जटिल थीं कि आवश्यक सामग्री सामर्थ्य से बाहर और वह भी विशेष वर्ग के लिए आरक्षित थी। जो एक समय

के भोजन पाने में भी असमर्थ था, जिसके शरीर ढांकने के लिए वस्त्र पर्याप्त न थे, वह जनसाधारण जो पुजारी वर्ग में ऐसे कर चुकाने में असमर्थ थे, संभवतः इसलिए उसे पूजा-स्थली के निकट नहीं जाने दिया जाता था। जातिवाद अपनी चरम सीमा पर यहां तक पहुंच चुका था कि खेतों में हल चलाए शूद्र, बीज बोए शूद्र, पशु नहलाए शूद्र, पशुओं को चारा डाले शूद्र, दूध दोहे शूद्र, किन्तु घर पहुंचे उस अनाज के ऊपर अधिपत्य तत्कालीन स्वर्ण जाति का था। घर पहुंचे अनाज पर शूद्र की परछाईं तक पड़ जाने से वह आज भ्रष्ट माना जाता था।

भक्त रविदास जी निःसंदेह तथाकथित दलित वर्ग से सम्बंधित थे, किन्तु उन्होंने बड़ी निर्भयता के साथ मानव-समाज के इस अनैतिक, अवैज्ञानिक व अमानवीय व्यवहार को अस्वीकार किया। इसके प्रति उनकी प्रतिक्रिया तर्कसंगत है। वे सम्पूर्ण परिस्थिति को पहले जानते हैं फिर भी उसके विश्लेषण के लिए उसका मनन करते हैं *'सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भोगवै सोई'* का सिद्धांत दर्शाते हुए प्रत्येक मानव को एक जैसा सम्मान तथा समान अधिकारों की आधारशिला रखते हैं यद्यपि वे मानव किसी भी धर्म, वर्ण अथवा श्रेणी का क्यों न हो, क्योंकि:

ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥ (पन्ना ८५८)

भक्त रविदास जी धर्म-भेद, श्रेणी-भेद, रंग-रूप, जाति-विभाजन के भेद को समाप्त करने हेतु मानवीय स्तर पर प्रश्न उठाते हैं कि यह अंतर विभाजन क्यों? भक्त जी गोबिंद (प्रभु) की क्षमता नीच समझे जाने वालों को ऊंचा स्तर प्रदान करने वाली दर्शाते हैं:

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै ॥
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथै छत्रु धरै ॥
जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै॥
नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ॥
नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै ॥
कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरि जीउ ते सभै सरै ॥ (पन्ना ११०६)

भक्त रविदास जी मानव चेतना में ऐसा स्वाभिमान उभार लाते हैं कि ईश्वर का उपासक होकर अपने आप को निराकार, अगम, अगोचर, परमात्मा के आगे समर्पित करके आत्मा और परमात्मा में भी अभेदता स्थापित हो सकती है:

जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ॥
जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ॥
(पन्ना ६५८)

भक्त रविदास जी मानव चेतना में यह सिद्धांत दृढ़ करा देते हैं कि आडम्बरपूर्ण पूजा-पद्धति से, समर्पित भावना के अधीन की जाने वाली प्रेमा-भक्ति कहीं अधिक प्रासंगिक लगती है, प्रेमा-भक्ति लगती है। प्रेमा-भक्ति में इस पथ पर चलते और नाम-सुमिरन के द्वारा साधक को ऐसी रहस्यमयी अनुभूति प्राप्त हो जाती है जो अनिवर्चनीय होती है:

कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै ॥
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै ॥
(पन्ना ८५८)

नाम-स्मरण में रमा हुआ मनुष्य *'हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे'* मानता हुआ सांसारिक पदार्थों द्वारा प्रभु को रिझाने वाली कर्मकांडी युक्तियों को भी निरर्थक समझता है:

दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ ॥
फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ ॥ (पन्ना ५२५)

इसलिए प्रभु का सच्चा भक्त, प्रभु के दिए हुए पदार्थों को उसके आगे ही अर्पण करता है:

तनु मनु अरपउ पूज चरावउ ॥
गुर परसादि निरंजनु पावउ ॥ (वही)

भक्त रविदास जी ने सम्पूर्ण मानवता को एक डोरी में बांधने के लिए उस परम सत्ता के स्वरूप का निरूपण करते समय विशेष रूप से जिस सतर्कता का प्रयोग किया वो यह थी कि आप जी ने बहुदेववाद और द्वैतवाद जैसी धारणाओं को महत्व नहीं दिया। उनकी सम्पूर्ण बाणी का स्वर *'जह जह जाउ तहा तेरी सेवा ॥ तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा ॥'* अद्वैत के सिद्धांत को दृढ़ करना था। वे उसी एक परम हस्ती को प्रेमवश माधो, रघुनाथ, लाल, गोबिंद, मुकंद आदि के प्रतीकों द्वारा सगुण स्वरूप देते हैं, परंतु ऐसा करते समय भी उन्होंने मनुष्य को ब्रह्म की व्यापकता एवं एकता में विश्वास रखने का संदेश दिया है। उनके दृष्टिकोण के अनुसार प्रभु-चेतना प्रत्येक मनुष्य में है और मनुष्य सद्गुणों की सीढ़ी पर चलते-चलते प्रभु से अभिन्न हो जाता है। यह एक ऐसी अवस्था है जहां आत्मा और परमात्मा का संगम हो जाता है जो प्रभु के लिए—*'जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बाधे ॥ अपने छूटन को जतनु करहु हम छूटे तुम आराधे ॥'* की स्थिति उत्पन्न कर भक्त जी उत्तम श्रेणी में पहुंच जाते हैं। इस तरह ब्रह्म केवल एक ही है।

भक्त रविदास जी के इस सिद्धांत ने जन-साधारण को अपनी समस्याओं को समझने का साहस दिया। किसी भी समस्या को समझने के पश्चात परिस्थितियों से निपटने और अपने अधिकारों के प्रति सजग होने की क्षमता आ सकती है। इसलिए भक्त रविदास जी की बाणी *'पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै'* के सिद्धांत का निर्माण करती है। मनुष्य ने चाहे समाज में रहना हो या आध्यात्मिक पथ का पथिक बनना हो उसका ज्ञानी होना परमावश्यक है:

उपजिओ गिआनु हूआ परगास ॥ (पन्ना ८७५)

ज्ञान-युक्ति द्वारा ही वह परिस्थितियों को ठीक प्रसंग में समझ कर समस्याओं को सुलझाने के योग्य बन सकता है।

समाज में धार्मिकता के प्रसंग के संदर्भ में भक्त रविदास जी की पावन बाणी प्रमुख कार्य करती है। पहले वह मनुष्य को पदार्थिक संसार के उन नाशवान पदार्थों में व्यय होने से रोकती है जिनका सुख क्षणभंगुर होता है, क्योंकि सत्य पर आधारित तथ्य भी यही है कि:

जल की भीति पवन का थंभा रकत बुंद का गारा ॥
हाड मास नाड़ी को पिंजरु पंखी बसै बिचारा ॥
प्रानी किआ मेरा किआ तेरा ॥
जैसे तरवर पंखि बसेरा ॥ (पन्ना ६५९)

इसलिए भक्त जी मनुष्य को सुचेत करते हुए कहते हैं कि:

किआ तू सोइआ जागु इआना ॥
तै जीवनु जगि सचु करि जाना ॥ (पन्ना ७९४)

दूसरे कार्य द्वारा वे मनुष्य को भौतिक संसार के माध्यम से ब्रह्मंडीय संसार की यात्रा करने की प्रेरणा करते हैं जो मनुष्य-जीवन का अंतिम लक्ष्य है, क्योंकि वे इस तथ्य से भली-भांति परिचित थे कि सामाजिक संदर्भ में मनुष्य-जीवन में क्या करना उचित है और क्या अनुचित। उन्हें इस बात का गहरा आभास था कि मनुष्य आदि काल से ही मुक्ति प्राप्त करने का इच्छुक रहा है। मानवीय चेतना में उत्पन्न यह एक ऐसी इच्छा है जिसकी प्राप्ति हेतु वह संसार में विभिन्न धर्म-कर्म करता है। यह अलग बात है कि उसके धर्म-कर्म उसे मन-इच्छित फल प्रदान करते हैं या नहीं, इसका उसे स्वयं को प्रायः ज्ञान नहीं होता। अज्ञान के वशीभूत होकर कभी वह जंगलों में भटकता है तो कभी शरीर को कष्ट देने वाली हठयोग की साधनाएं करता है। इसलिए भक्त रविदास जी

ने कार्य के लिए एक बात विशेष रूप से सबके सम्मुख रखी कि वह मनुष्य को भौतिक संसार से ब्रह्मंडीय संसार की यात्रा कराते हुए, भौतिक संसार का खंडन नहीं करते। वे उन लौकिक वस्तुओं का विरोध करते हैं जो क्षणभंगुर होते हुए आत्मा और परमात्मा में क्षण-प्रतिक्षण दूरी बढ़ा रही हैं।

इसका कारण बड़ा स्पष्ट था कि मृग को कर्ण रस, मीन को रसना रस, भंवरे को घ्राण रस, पतंगे को नेत्र रस, गज को स्पर्श रस के एक-एक विषय के कारण मृत्यु के घाट उतरना पड़ता है। उस मनुष्य की क्या दशा होगी जो इन पांचों ही विषयों से घिरा हुआ है। यह बात सर्व-प्रमाणित है कि भौतिक संसार में विषय-विकारों को भोगने वाले मनुष्य का भोग अधिक प्रचंड होता रहता है और वह अपनी जीवन लीला को व्यर्थ में समाप्त कर लेता है:

मन बच क्रम रस कसहि लुभाना ॥
बिनसि गइआ जाइ कहूं समाना ॥ (पन्ना ४८७)

इसलिए ये विषय-विकार तो मिथ्या हैं परंतु संसार का होना सत्य है, क्योंकि—*'सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भोगवै सोई'* की दृष्टि के अनुसार परमात्मा इस संसार में विद्यमान है, जो स्वयं कर्त्ता है, स्वयं भोगता है। परमात्मा का बनाया हुआ यह संसार सत्य है। यदि संसार को निपट असत्य ही मान लिया जाए तो फिर तो परमात्मा की विद्यमानता पर ही प्रश्न-चिन्ह लग जाएगा जिसने यह भौतिक संसार बनाया है।

भक्त रविदास जी की पावन बाणी का मुख्य लक्ष्य मनुष्य जीवन में से अतिरिक्त इच्छाओं का विनाश तथा उत्थान से ओत-प्रोत इच्छाओं का विकास करना है। विशेषता यह है कि जीवन-विधि, विशेष सम्प्रदाय, श्रेणी अथवा भक्त रविदास जी के अपने भाईचारे के लिए ही आरक्षित नहीं बल्कि राष्ट्र, काल, रंग, वर्ण-भेद सीमाओं का उल्लंघन कर सम्पूर्ण विश्व अथवा मानवता को समर्पित भावना वाली है। **All the institutions and concepts of Bhagat Ravidas-Bani are dedicated to whole mankind.**

भक्त जी की एक और विशेषता जो इस पावन बाणी में दृष्टिगोचर होती है कि वे अपनी बाणी-प्रवाह के संचार के लिए सार्वजनिक भाषा तथा संगीत को संचार माध्यम बनाते हैं, से ऐसा प्रतीत होता है कि वे इस तथ्य से चिर-परिचित थे कि सार्वजनिक भाषा तथा संगीत के माध्यम से सैद्धांतिक बात, आम लोगों के मस्तिष्क पटल पर दृढ़ करानी अधिक सरल तथा सम्भव होती है। उन्होंने अपनी बाणी के भावार्थ के प्रवाह के लिए १६ रागों का चयन किया जिसमें 'आसा' तथा 'सोरठि' उनके अधिक मन लुभावने राग प्रतीत होते हैं।

मनुष्य को उचित अर्थों में मनुष्य बनाना भक्त रविदास जी की पवित्र बाणी का प्रमुख कार्य है, इसलिए उन्होंने मनुष्य को मानव-जीवन का सद-उपयोग करते हुए, उसे उत्थान के लिए उत्तम कार्यों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। मनुष्य के तन के विकास के साथ-साथ मन का विकास होना परमावश्यक है। मानव मन का विकास तभी संभव है यदि इस कार्य के लिए निर्धारित विधान की पालना की जाए। ऐसे विधान की उल्लंघना करने वाला मनुष्य परमात्मा की कृपा-दृष्टि को प्राप्त करने में असमर्थ रहता है तथा आत्मिक संताप के अधीन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कष्ट भोगता है। ऐसी विचारधारा वाले मनुष्य को स्वयं के दुर्लभ जीवन के मूल्य का कोई ज्ञान नहीं होता तथा वह विषय-विकारों में रत् रहकर, स्वयं की आयु नष्ट कर, जगत में विलुप्त हो जाता है।

यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि जो मनुष्य अहं से ग्रस्त होकर स्वयं को भगवान से भी श्रेष्ठ समझते हुए, कुछ क्षणों के लिए ऐश्वर्य भोग प्राप्त करता है, उसकी जीवन-यात्रा की इतिश्री सर्वथा संतापपूर्ण होती है। इस प्रसंग में एक बात सर्वथा स्मरण रखने की आवश्यकता है कि मनुष्य की क्षमता सर्वथा सीमित होती है तथा ईश्वरीय सत्ता सर्वथा असीमित होती है। यही कारण है कि वाह्यमुखी व्यक्ति सदा अतृप्त रहता है जबकि अंतर्मुखी वृत्ति वाला व्यक्ति शब्द-गुरु द्वारा ज्ञान प्राप्त करता है। वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के बंधन समाप्त कर प्रभु के चरणों में मन को तटस्थ कर आनंद अनुभव करता है।

भक्त रविदास जी की पवित्र बाणी विचारते समय एक बात विस्मयपूर्ण और संतोषजनक है कि जब वह कट्टरवादी प्रबंध को अस्वीकारते हैं और बेगमपुरे वाले मानव-हितैषी प्रबंध को स्वीकारते हैं तो वे अपने मानसिक संतुलन को पूरी तरह संतुलित रखते हुए अपनी प्रेम-भावना वाली युक्ति को प्रचलित रखते हैं। ऐसा इसलिए कहा जा रहा है क्योंकि उन्होंने जीवन-युक्ति बताते समय, उस श्रेणी के प्रति एक भी कड़वा शब्द प्रयोग नहीं किया, जिसकी संकीर्ण अभिलाषाओं के कारण उससे सम्बंधित वर्ग, जनसाधारण दिन-रात संताप की अग्नि में जल कर नरकमय जीवन भोग रहा था। आपकी निर्मल बाणी में कोई भी ऐसी अभिलाषा प्रकट नहीं की गई जिससे घृणा का भाव पैदा हो और लड़ाई-झगड़े के कारण धर्म रूपी चादर का रंग लाल हो जाए। बल्कि आपकी शीतल बाणी में प्रत्येक वर्ग के लिए नम्रता निरंतर रहती है। शायद इसी प्रेमा-युक्ति के कारण पुजारियों, राजे-रानियों ने आपके चरण-स्पर्श किए:

अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥ *(पन्ना १२९३)*

इसमें कोई संशय का स्थान नहीं कि आपकी पावन बाणी में विरोध किसी विशेष वर्ग या श्रेणी से सम्बंधित नहीं है। विरोध उस विधि अथवा प्रबंध से है जो मानव-जीवन को मानव-समाज के विकास के कार्यों को पीछे कर रहा था।

इसलिए भक्त रविदास जी की बाणी न तो सामाजिक और पारिवारिक कर्त्तव्यों से विमुख होना सिखाती है और न ही योगियों-सन्यासियों जैसी शारीरिक कष्टों वाली योग साधनाओं को मान्यता प्रदान करती है। वे समाज को निठल्ला, निखट्टू, तोदमय और भिक्षु नहीं बनाना चाहते, इसलिए उन्होंने स्वयं गृहस्थमय जीवन व्यतीत किया और अपने हाथों द्वारा किरत कर गृहस्थ जीवन का निर्वाह किया तथा अपने वंशजों के व्यवसाय का विशेषरूपेण उल्लेख किया है जो समाज में उस युग में निचले स्तर का समझा जाता था:

मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा ॥ *(पन्ना १२९३)*

परंतु वे आवश्यकता से ज्यादा धन एकत्रित करने के पक्ष को स्वीकारते हुए मनुष्य को सुचेत करते हुए फरमान करते हैं:

संपति बिपति पटल माइआ धनु ॥
ता महि मगन होत न तेरो जनु ॥
(पन्ना ४८६-८७)

वास्तव में भक्त रविदास जी जिस समाज के धार्मिक प्रसंग की बात करते हैं उसका खाका, उनके उच्चारण किए हुए शब्द में विद्यमान है:

बेगम पुरा सहर को नाउ ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥ (पन्ना ३४५)

परंतु क्या ऐसा समाज जो बेगमपुरा में दर्शाया गया है वह इस संसार में बनना संभव है जबकि समस्त संसार में वैज्ञानिक उन्नति की

ओट लिए हुए मानव द्वारा मानव को समाप्त करने वाले औजार बनाने और एक-दूसरे के धन पर अपना अधिपत्य सिद्ध करने की पूरी कोशिश हो रही है? मनुष्य में दिन-प्रतिदिन प्रकट हो रही पदार्थिक अभिलाषा, मानवीय सम्बंध को विच्छेदित कर रही है जिसके फलस्वरूप मानव समाज भी टूट रहा है। इसलिए भक्त रविदास जी की बाणी में जिस समाज के धार्मिक प्रसंग का स्वर अलाहदित होता है उसके समक्ष मनुष्य को निजवादी, निजस्वार्थी और संकीर्ण अभिलाषाओं वाली धारणा को मिटाकर धर्म के विभाजन, वर्ण-विभाजन, जाति-विभाजन, श्रेणी-विभाजन के बंधनों से मुक्त होने की जरूरत है। तभी उसकी सत्यवादी बुद्धि विश्व-चेतनामय होकर ब्रह्मंडीय शक्ति प्राप्त कर सकेगी। यह ब्रह्मंडीय शक्ति भक्त रविदास जी की अंतर-आत्मा में बसे उनके सात्विक सपनों के संसार *'बेगम पुरा सहर को नाउ'* के सिद्धांत को साकार कर सकती है।



कविता

गुरु हमारा है गुरु ग्रंथ साहिब

संसार के लिए आधार है गुरबाणी,
गुरु हमारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
संसार के लिए उपकार है गुरबाणी,
मनुष्य का सहारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
अकाल पुरख की ज्योति-स्वरूप है यह,
ੴ का दीदारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
इसकी नेहमतों का है शुमार बेअंत,
रहमतों का भंडारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
इसकी महिमा कोई गा नहीं सकता,
सबसे न्यारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
वाहिगुरु नाम जहाज है, पतवार है,
जी, पार-उतारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
सिर झुक जाता इसके द्वार पे आकर,
मुक्ति-द्वारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
सत्य, संतोष, दया हमें बख्श दिए,
बख्शिशों का भंडारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
मुश्किल घड़ी न हमको देखने देता,
मित्र-प्यारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
पवन, पानी, पेड़, मनुष्य सब दास इसके,
सच्चा पालनहारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
कीट, पशु, परिंदे पर मेहर करता,
हरेक का सहारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
डूबती नाव यह पार लगा दे,
मुक्ति-किनारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
दीन-दुखियों, मसकीनों को धीरज दे,
इलाही जयकारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
सारे रोगों की है औषधि 'नाम',
करता इशारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
सब दर छोड़कर इसकी शरण में आओ,
सच्चा तारणहारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
इलाही नूर का नज़ारा आकर देख लें,
इलाही नज़ारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
आवागमन के चक्कर से मुक्ति दिलाए,
एक सच्चा सहारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
उस परम-पुरख परमात्मा का जलवा,
सारे का सारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
पीओ अमृत, सदा चिर जीओ संगतो!
अमृत की धारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
धुर की बाणी ने सगली चिंत मिटाई,
संसार को संवारा है गुरु ग्रंथ साहिब।
है 'शब्द' ही गुरु, न गुरु कोई और हमारा,
सुनो, देता नारा है गुरु ग्रंथ साहिब।



-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर', ९२५, बी-एक्स, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जालंधर-१४४००४

भक्त नामदेव जी का समस्त जीवों के प्रति प्यार

*-स. सुरजीत सिंघ**

सांसारिक मोह-माया के जाल में फंसे हुए मनुष्य का ईश्वर पर तो भरोसा बना ही नहीं है क्योंकि वह तो मिथ्या भौतिक चकाचौंध में भटक रहा है। मनुष्य शुद्ध मन से जब परमात्मा को ही अपना एक मात्र ओट-आसरा मानकर उसी को ही अपना बल, बुद्धि, धन, परिवार समझते हुए, ईश्वर जो भी कर रहा है उसी में अपना भला मानने लगता है तब उसको सुख ही सुख का अनुभव होता है, किन्तु भटके हुए मनुष्य द्वारा विपरीत परिस्थितियां उत्पन्न कर दी जाती हैं, इस कारण उसको दुख ही दुख आकर घेरने लग जाते हैं। असल में भटके हुए मनुष्य का तो परमात्मा पर विश्वास बना ही नहीं है, वह ईश्वर की शरण में आया ही नहीं है। वह तो केवल असत्य, व्यर्थ के कर्म-कांडों एवं क्षणभंगुर सुख-सुविधाओं के पीछे ही भागता फिर रहा है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरबाणी का कथन है :

धर जीअरे इक टेक तू लाहि बिडानी आस ॥
नानक नामु धिआईऐ कारजु आवै रासि ॥
(पन्ना २५७)

एक समय की बात है कि कुछ साधू-संत गांव के बाहर डेरा डाले पूजा-अर्चना कर रहे थे। एक बहूत भूखा-प्यासा व्यक्ति साधुओं के डेरे पर आ पहुंचा और भोजन देने की गुहार करने लगा, किन्तु 'भगवान को अभी प्रसाद नहीं चढ़ाया है' कहकर साधू-संतों ने उसको भोजन देने से इंकार कर दिया। वह भूखा-प्यासा ही व्याकुल मन से दुखी होकर वापिस लौट गया।

दूसरी तरफ, एक जानवर (कुत्ता) भक्त नामदेव जी की कुटिया में आ पहुंचा। भूखा-प्यासा होने के कारण वह खाने को प्राप्त करने की इच्छा से रोटी को ललचाई आंखों से निहारने लगा। पवित्र आत्मा वाले भक्त नामदेव जी ने महसूस किया कि कुत्ता भगवान का ही भेजा आया है। भक्त जी कुत्ते के पेट की भूख दूर करने के लिए ही नहीं बल्कि उसे अच्छा भोजन देने के बारे में भी विचार करने लगे—"मेरे पास तो केवल सूखी रोटी ही बनी हुई है जिससे तेरे को कष्ट होगा। तू बैठ जा। मैं अभी अंदर से घी लाकर पहले तुम्हें ही भोग लगाता हूं।" भक्त नामदेव जी घी लाने अंदर चले गये किन्तु अवसर पाते ही कुत्ते ने सूखी रोटी मुंह में दबाई और भाग निकला। भक्त नामदेव जी अंदर से घी लेकर जब वापिस आए तो देखा कि कुत्ता सूखी रोटी लिए तेजी से भागता जा रहा है। अब भक्त नामदेव जी हाथ में घी का कटोरा लिए कुत्ते के पीछे-पीछे हो लिए और पुकारने लगे—"ठहर जा, घी लगा लेने दे, सूखी रोटी कैसे खाएगा?" कुत्ता भागते हुए जब थक गया तो भक्त नामदेव जी भी उसके पास पहुंच गये और देखा कि सूखी रोटी वह अपने मुंह में निगल चुका था। इस समय भक्त नामदेव जी इसी बात को सोचे जा रहे थे कि सूखी रोटी इसने कैसे खाई होगी। उनकी अब यह भावना बनी कि चलो अब इस प्रभु के जीव को रोटी के ऊपर से ही घी खिला देते हैं। जब भक्त जी ने कहा कि हे भले जीव! मुंह खोल, थोड़ा घी ही खा ले, तो कुत्ते ने तत्काल मुंह खोल कर, घी मुंह में डलवा कर खा लिया।

प्रभु के सच्चे भक्त समस्त जीव-रचना को उसी एक प्रभु की रचना मानकर सभी जीवों के साथ समभाव से बरतते हैं। ऐसी समदृष्टि के धारक भक्त नामदेव जी इसी तथ्य की एक उज्जवल उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।



**५७-बी, न्यू कॉलोनी, गुमानपुरा, कोटा।*

भक्त त्रिलोचन जी संबंधी राजस्थानी परची और निराकार भक्ति

-डॉ. नवरत्न कपूर*

भक्त नामदेव जी के समकालीन भक्त त्रिलोचन जी का जन्म बारसी (जिला सोलापुर) में संवत् १३२५ (सन् १२६८) में हुआ था। वे वैश्य जाति के थे।[१] पहले वे वैष्णवमार्गी थे और उनकी पंडित जैचंद नामक ब्राह्मण से ज्ञान-चर्चा होती रहती थी, किन्तु कालान्तर में वे निर्गुण-उपासक बन गए।[२] इनके कुल चार शबद श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित हैं। इनमें से सिरीरागु में एक, गूजरी राग में दो और धनासरी राग में एक दर्ज है।

प्रो. साहिब सिंघ का कथन है कि भक्त नामदेव जी के साथ भक्त त्रिलोचन जी की भेंट होती रही और भक्ति-मार्ग का ज्ञान भी उन्हें भक्त नामदेव जी से ही प्राप्त हुआ . . . आप (जीवन के प्रारंभिक साधना पड़ाव में) भक्त नामदेव जी की तरह बीठल मूर्ति के उपासक थे।[३] श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अन्तर्साक्ष्यों और कुछ राजस्थानी बहिर्साक्ष्यों से यह प्रमाणित होता है कि भक्त त्रिलोचन जी का घनिष्ठ संपर्क भक्त नामदेव जी से रहा। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के निम्नलिखित शबद के आरंभ में *"कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन"* इसका साक्ष्य है, यथा :

कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन बालकु पालन पउढीअले ॥
अंतरि बाहरि काज बिरूधी चीतु सु बारिक राखीअले ॥ *(पन्ना ९७२)*

बहिर्साक्ष्य के रूप में दो राजस्थानी पद उद्धृत हैं, जिनमें भक्त नामदेव जी का संबोधनात्मक शबद 'भणत' प्रयुक्त हुआ है; यथा :

—भणत नामदेव सुणो तिलोचन बालक पालिणि पोढिला।
अपने मंदर काज करेली चित सौं बालक राखिला। *(पृष्ठ २७५)*
—भणत नामदेव सुणो तिलोचन बालिक पालणि पौठिला।
अपणै मंदिर काज करती चित सौं बालिक राखिला। *(पृष्ठ ३१५-३१६)*

यही नहीं भक्त त्रिलोचन जी की बाणी में 'बीठुला' शब्द भी उसी प्रकार प्रयुक्त हुआ है, जिस प्रकार महाराष्ट्र के संतों तथा विशेषत: भक्त नामदेव जी की बाणी में आया है। निम्नलिखित उदाहरणों में तजीअले, पेखीअले, दाधीले, उपाड़ीले, जापीअले तथा तोखीले जैसे क्रिया रूप और नदी चे, तां चे, राम चे जेसे संबंध कारक के चिंन्ह मराठी भाषा के ही हैं। इनके मूल रूप श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पूर्ववत् सुरक्षित हैं, यथा :

—माइआ मोहु तब बिसरि गइआ जां तजीअले संसारं ॥
आजु मेरै मनि प्रगटु भइआ है पेखीअले धरम राओ ॥ *(पन्ना ९२)*
—सुनागर नदी चे नाथं ॥
करम करि खारु मफीटसि री ॥
दाधीले लंका गडु उपाड़ीले रावण बणु सलि बिसलि आणि तोखीले हरी ॥ . . .
मिटै री घर गेहणि ता चे मोहि जापीअले राम

*Flat no. 901, Tower No. D-3, Sagar Darshan Tower, Sec. 18, Palm Beach Rd. Nerul (Navi Mumbai).

चे नामं ॥ *(पन्ना ६९५)*

इन सभी प्रमाणों से सिख विद्वानों के इस मत की पुष्टि होती है कि भक्त नामदेव जी की भांति भक्त त्रिलोचन भी महाराष्ट्र-जन्मे भक्त थे। इसके अतिरिक्त उनके जीवन संबंधी तथ्य बहुत कम मिलते हैं। किन्तु एक राजस्थानी कवि अनंतदास ने भक्त नामदेव जी, भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी के अतिरिक्त भक्त त्रिलोचन जी की एक परची की रचना भी की है। राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथों में उपलब्ध इस रचना का मूल पाठ प्रस्तुत है :

श्री राम जी सत्यछै जी।
ल्यषतं त्रिलोचंन जी की परचई।
सूंणै त्रिलोचंनं की अध्यकाई।
तामैं केसौ ब्रत रिहाई।
द्रिढ आचार करै बहौ पूजा।
हरि सू हेत अवर नही दूजा ॥१॥
घर मै सेवग और नही कोई।
त्रीया पुरष पावै दोई।
ऐसी भगति करत जब देषी।
जब हरि आणे सदा बिबेषी ॥२॥
भगत बछल इक प्रीत्य बिचारी।
या मैं टहैल करूं दिन च्यारी।
देष्य भगत कैं बहुत अंदेसौ।
आय बरौठै बेगै केसौ ॥३॥
फाटीकां बल्य तुटी पनही लूषी भूंमि मैल सब तन ही।
देषि त्रिलोचन बुझी बातां।
कहां तै आयो कहां तुं जाता ॥४॥
नां कहुं आयो नां कहुं जांही।
जहां कोई राषै जांह रहाइ।
कहां तेरौ पिता अरु कहा तेरी माई।
कहां तेरौ कहुं घर कहां तेरौ भाई ॥५॥
नही मेरै पितार नहीं मेरै माई।
नंही मेरै कुटुंब अरु नही मेरै भाई।
रहुं ज्यहां राषै ज्यो कोई।
टहैल करुहुं कहै ज्यसी सोई ॥६॥
कैसी टहैल करत रे भाई।
सो हंम कूं तूं कहै संमझाई।
षेती की बिध्य सगली जांनुं।
षित्री धरम नही मौ छानै ॥७॥
बइस सूरब्रंस महारिथ हमारै।
अवर सकल बिध्य करु बिचारै।
जा मैं उहुं प्रदूषत माई।
पास तपोवन सब दिन जाई ॥८॥
इतनी बात त्रिलोचन कै मंन्यमांन्यो।
तब बांह पकरि अपनै ग्रहै आंन्यों।
हरि दासी कूं कहै बुलाई।
या की तो कूं ला जब माई ॥९॥
स्यांमीं लाज बझाई काहे केरी।
हूं तौ सदा तुमारी चेरी।
करि करि पाक धरूंगी आगैं।
कछू न राषुं इन कैं मांग्यैं ॥१०॥
तब हरि दासी नैं कहै संमझाई।
ऐसौ बरतीयो रहै कजाई।
राषै स्वांमी जांण न पावै।
ऐसौ सेवग बहुरि नही आवै ॥११॥
तब ताती रोटी तुरत पुवाई।
पंदरा सोला भोग लगाई।
तेल मंगायो असनांन करायो।
उजल बसत्र आंनि उढायो ॥१२॥
जब तैं टहैल करण जब लागौ।
त्रिलोचन को सांसौ भागौ।
मुष तैं कछू कहैंण नही पावै।
मन की जांणि सबै करि आवै ॥१३॥
इक दिन मन मैं उपजी ऐसी।
जाय पड़ोसणि कै ढिग बैसी।
कहै पड़ोसणि तन मैं छीणा।

बसत्र सहित सरीर मलीणा ॥१४॥
सहैज सूमाय कहयो हरिदासी।
सुणौं पड़ोसणि दुष रु हासी।
पास तपोवन घटयो बल मोरौ।
भुषै रहै न अघायो चेरौ ॥१५॥
ऐती बात सूंनी हरि जब ही।
अंतरध्यांन होय गया तब ही।
गयो बरतीयो मंनि पछिताणौं।
हरिदासी परि भगत रिसाणौं ॥१६॥
मैं तौ कछू कहयो न गुसांई।
जब त्रिलोचन अनं न षाई।
दिन हुय तज्या अंन र पाणी।
जब हरि बोलेआ सी बांणी ॥१७॥
तैं सेवग होय र सेवा कीनी।
रहयो बरस दिन ल्युं न चीनी।
प्रीत्य करै तौ ओहुं आउं।
रहुं जनम भरि कदे न जाउं ॥१८॥
मरजादा बिनि भगत्य न होई।
स्वामी सेवग म्यटि जाय दोई।
जै हरि जाही कौ चेरौ।
ज्यो कोई पांचुंइ ही घेरौ ॥२०॥

दोहा

दास अनंत कथा कही। त्रिलोचन गुण गाया।
अब गुंण कहुं कबीर कौ सुणौ संत ल्यो लाय: ॥२१॥
इति श्री त्रिलोचन जी की प्रची संपूर्ण।[४]

अर्थ : प्रभु-परमात्मा सत्य हैं जी! कह कर "त्रिलोचन जी की परची" (लिखना आरंभ करता हूं)। त्रिलोचन की महिमा (अध्यकाई) सुनिए। उसका (प्रभु-भक्ति का) निश्चय (ब्रत) कैसा था? वह नियमित रूप से भगवान की दिन में बहुत बार पूजा करता था। उसका भगवान (हरि) के अतिरिक्त अन्य किसी से कोई मतलब (हित) नहीं था। घर में पति और पत्नी रहते थे। उनके घर में कोई नौकर नहीं था। (त्रिलोचन जी की) ऐसी (दृढ़) भक्ति के कारण भगवान विवश होकर (स्वत:) चार दिन उनकी सेवा करने के लिए पहुंच गए; क्योंकि वे प्रेमाभक्ति के कारण भक्तों के प्रति वात्सल्य दर्शाते हैं (तभी 'भक्तवत्सल' कहलाते हैं) उन्हें बहुत डर (अंदेसौ) था कि कहीं भक्त उन्हें देख (देष्य) कर पहचान न ले। अत: भगवान केशव (केसौ) एकदम (बैगै) रूप बदल कर पधार गए (आय बरौठै)। उनके कपड़े फटे हुए थे (फाटीकां बल्य), जूती टूटी हुई (तुटी पनही) थी और शरीर पर इतनी मैल थी मानो धरती की मिट्टी पोती (लूषी भूंमि) हुई हो। (इस प्रकार एक अज्ञात व्यक्ति को आया देखकर) त्रिलोचन ने पूछा "तू कहां से आया है और कहां जाना चाहता है।" (भगवान का उत्तर था) "मैं न तो कहीं से आया हूं और न ही मुझे किसी और जगह जाना है। जहां कोई मुझे रखता है, वहीं पर मैं टिकता हूं।" "तेरा घर कहां है? तुम्हारे माता, पिता और भाई कहां रहते हैं।" (भक्त जी के इस प्रश्न के उत्तर में भगवान ने कहा) न तो मेरा (कोई) पिता है और न ही माता है। मेरा कोई भाई या परिवार भी नहीं है। मुझे तो जहां कोई रखता है, वहीं बसकर उसके इच्छानुसार सेवा (टहल) करता हूं।"

(त्रिलोचन भक्त ने पूछा) मुझे अच्छी तरह समझाओ भाई! तुम किस-किस प्रकार के काम कर सकते हो?

(उत्तर) मैं खेतीबाड़ी के सभी काम जानता हूं और उसे ही दृढ़तापूर्वक (धर्म समझकार=धरमन ही) निभाता हूं। बीसों महारथी मेरे साथ रहते हैं और उन्हें किस क्षेत्र (षित) का (रक्षा-कार्य) सौंपना है, इसका निश्चय मैं ही करता हूं। जब मैं उनमें कोई दोष देखता हूं तो समीपस्थ तपोवन में प्रतिदिन ले जाकर

समझाता हूं (जा मैं . . . दिन जाई) भगवान की श्लेषमयी उक्ति' भले ही भक्त जी के पल्ले न पड़ी हो, किंतु (भगवान के इस कल्याणकारी स्वरूप की) सारी स्थिति त्रिलोचन जी को जंच गई (मंन्यमांन्यो) और वे उनका बाजू पकड़कर उन्हें अपने घर ले आए। उन्होंने अपनी पत्नी हरिदासी को बुलाया और कहा कि अब तुम्हें इनके सम्मान की रक्षा मां की तरह (लाजब माई) करनी है। हरिदासी बोली—"आपको इनकी लाज की बात क्यों करनी थी, मैं तो सदैव आपकी (आज्ञा का पालन करने वाली) दासी हूं। मैं तो तरह-तरह के पकवान (पाक) बना कर इनके आगे रखूंगी और इनकी मांग-पूर्ति में कोई कसर बाकी नहीं रखूंगी। हे स्वामी! ऐसा सेवक बार-बार नहीं मिलता, मैं इसे अच्छी तरह रखूंगी। तब (त्रिलोचन जी ने) हरिदासी को समझाया कि भले ही यह टिके अथवा जाने की जिद्द करे, इसके साथ ऐसा ही बर्ताव रखना। तब तुरंत गर्म-गर्म रोटियां पकवाकर उन्हें पंद्रह-सोलह खिला दीं। तेल मंगवा कर (मालिश करने के पश्चात) स्नान करवाया और उन्हें उज्जवल वस्त्र पहनाए गए।

जब वह (भगवान रूपी नौकर) मालिक और मालकिन के मन की बात पहचान कर और उनके कुछ कहे बिना (मुष . . . पावै) घर के सारे काम मेहनत (टहल) से करने लगा तो त्रिलोचन जी के सभी संशय दूर हो गए (कि अब ये यहीं टिकेंगे)। किन्तु एक दिन हरिदासी के मन में यह विचार पैदा हुआ कि वह पड़ोसिन के पास जाकर बैठे। (वहां पहुंचते ही) पड़ोसिन ने पूछा—"तुमने कपड़े पहन रखे हैं, तब भी तुम्हारा शरीर कमजोर दिखाई पड़ता है?"

सहज स्वभाव हरिदासी ने उत्तर दिया—मैं तो पास वाले तपोवन में (लकड़ियां बीनने में ही) व्यस्त रहती हूं ताकि (हमारा) नौकर भूखा न रहे और पर्याप्त भोजन से तृप्त रहे। भले ही तुम इसे (अधिक भोजन करने वाले पर) मज़ाक़ (हाषी) समझो या (इसे मेरे काम का बोझ रूपी) दुख (दुष) समझो। (जब हरिदासी की यह ऊंची आवाज) भगवान (हरि) के कानों में पड़ी तो वे अन्तरध्यान हो गए। घर लौटने पर जब हरिदासी ने (लुप्त होने वाले भगवान रूपी) नौकर को घर में न देखा तो वह मन में बहुत पछताई। (नौकर रूपी भगवान के चले जाने पर) भक्त जी भी हरिदासी से नाराज हो गए। जब त्रिलोचन जी ने भोजन न किया, तब हरिदासी ने कहा, "हे पतिदेव (गोसाईं)! मैंने तो उसे कुछ भी नहीं कहा था।"

जब कई दिन तक भक्त जी ने न तो भोजन छका और न ही जल का सेवन किया तो भगवान ने प्रकट होकर कहा—"तुमने मेरे नौकर बन कर आने पर भी मेरी पूरी तरह सेवा की है। अत: मुझे यह पता ही नहीं चला कि मैं कितने वर्ष और कितने दिन तुम लोगों के घर टिका रहा। मुझे जो भी प्रेम करता है वहीं मैं आ जाता हूं और उसके पूरे जीवन काल में उसे छोड़कर कभी (कदी) नहीं जाता।"

कवि अनंतदास ने इस कथा का निष्कर्ष यह निकाला है कि जब तक मनुष्य पारिवारिक मर्यादा में नहीं रहता तब तक (प्रभु) भक्ति नहीं होती। यही बात भक्त त्रिलोचन जी पर लागू होती है, जो इस बात में विश्वास रखते थे कि गृहस्थ-धर्म का पालन करने वाले लोग भी सच्चे भक्ति-भाव से घर बैठे प्रभु-स्मरण करते रहें तो भगवान की उन पर प्रसन्नता होती है। एक अन्य प्रयोजन यह भी है कि घर में पधारने वाले किसी भी व्यक्ति को पूरा सम्मान मिलना चाहिए

और उसकी जी भर कर आवभगत की जानी चाहिए—यह एक सद्गृहस्थ का मानव-धर्म है; जिसे भक्त त्रिलोचन जी जी-जान से निभाते थे।

इस परची (जनश्रुतिपरक जीवन घटना) से भक्त त्रिलोचन जी के स्वभाव का पता चलता है जो सद्गृहस्थ होते हुए भी प्रभु-भक्ति को वरीयता देते थे। उनके ये विचार सिख गुरु साहिबान से भरपूर साम्य रखते हैं और अनंत दास (सत्रहवीं शताब्दी ईस्वी के अंतिम दशक में रचित) की यह परची भक्त त्रिलोचन जी के जीवनी-परक तथ्यों को संजोने के कारण संग्रहणीय है।

पाद टिप्पणियां :

१. भाई कान्ह सिंघ (संपा.) : महानकोश, पृष्ठ ४५६; भाषा विभाग पंजाब; पटियाला, सन् १९६०।

२. गि. लाल सिंघ (संगरूर) : गुरमति निरणय भंडार, पृष्ठ २०७; जनक पुस्तक भंडार, संगरूर; सन् १९४९।

३. प्रो. साहिब सिंघ (टीकाकार) : स्री गुरु ग्रंथ साहिब दरपण; पहिली पोथी, पृष्ठ ५७९-८०, राज पब्लिशर्ज, जालंधर।

४. (क) अनंत दास : श्री त्रिलोचन जी की परची (हस्तलिखित ग्रंथ संख्या ३०३१३(७); राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)।
(ख) डॉ. नवरत्न कपूर : "भक्त नामदेव के समकालीन श्री गुरु ग्रंथ साहिब वाले अन्य मराठी भक्त" विषय पर पुणे विश्वविद्यालय, पुणे में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में ९ जुलाई, २००५ को प्रस्तुत शोध-पत्र।

५. राजस्थानी में प्रयुक्त 'षेत' शब्द के दो अर्थ हैं—खेत तथा क्षेत्र। इसी कारण यह शब्द श्लेषात्मक है।

६. अनंतदास की इस काव्य कल्पना का आधार नाभादास की 'भक्तमाल' (रूप कला टीका, पृष्ठ ३८४) की यह उक्ति है :

अंत्रजामी नाम मेरौ चेरो मयो तेरो हौ तो,
बोल्यो भक्त भाव खानों निशंक अघाइ कै ॥

-डॉ. नवरत्न कपूर : मराठी भगतां दी बाणी दा विश्लेषण, पृष्ठ १०१. (पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला द्वारा सन् २००६ में प्रकाशित पंजाबी पुस्तक)।





अत्यंत उपयोगी पत्रिका

मेरे विचार में सिख बच्चों को कहानी रूप में सिख इतिहास जानना लाभकारी रहेगा। आपकी पत्रिका में अधिक सहयोग देने की आशा रखती हूं। 'गुरमति ज्ञान' हिंदी प्रदेशों में बसे सिखों के लिए अत्यंत उपयोगी है। पत्रिका का अधिक से अधिक प्रसार होना चाहिए। इसका स्तर भी बढ़िया है। सेवा का सुअवसर प्रदान करने के लिए धन्यवाद।

-डॉ. अमृत कौर
१५४, ट्रिब्यून कालोनी, बलटाना।

विशेष अंकों की योजना काबिल-ए-तारीफ़

अक्तूबर २००८ में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का ३०० वर्षीय गुरगद्दी दिवस तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के ज्योति-जोत की तीसरी शताब्दी के शुभ अवसर पर 'गुरमति ज्ञान' के विशेष अंकों के प्रकाशन की योजान काबिल-ए-तारीफ़ है। आपकी सम्पूर्ण सफलता के लिये मेरी हार्दिक शुभकामनाएं!

-डॉ. दीनानाथ शरण,
दरियापुर गोला, बांकीपुर, पटना।



महान् आध्यात्मिक चिंतक : भक्त बेणी जी

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

युगो-युग अटल शब्द-गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी जहां भारतीय आध्यात्मिक चिंतन परम्परा का परम रूप हैं वहीं वे मानवीय समता एवं क्षेत्रीय एकता के अद्भुत अलम्बरदार भी हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ३६ महापुरुषों की बाणी संकलित है। छः गुरु साहिबान, १५ भक्त साहिबान, ११ भट्ट साहिबान और गुरु-घर के निकटवर्ती गुरसिख, कुल ३६ महापुरुषों के महान् चिंतन का पुंज रूप है श्री गुरु ग्रंथ साहिब में।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल किये गये समस्त १५ भक्त साहिबान भारत के अलग-अलग क्षेत्रों एवं अलग-अलग वर्गों से संबंधित हैं। भक्त रामानंद जी, भक्त कबीर जी और भक्त रविदास जी काशी क्षेत्र के रहने वाले थे। भक्त भीखन जी लखनऊ, अवध के इलाके के थे तो भक्त नामदेव जी और भक्त त्रिलोचन जी महाराष्ट्र के वासी थे। भक्त परमानंद जी का संबंध शोलापुर से था तो भक्त सैण जी बल्लभगढ़ के थे। इसी तरह भक्त पीपा जी और भक्त धन्ना जी राजस्थान के, शेख फरीद जी पंजाब के, भक्त जैदेव जी बंगाल के, भक्त सधना जी सिंध के, भक्त सूरदास जी ब्रज क्षेत्र के और भक्त बेणी जी मध्य भारत के रहने वाले थे। इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब क्षेत्रीय एकता और मानवीय समता की अद्भुत एवं विलक्षण मिसाल हैं।

भक्त बेणी जी : जीवन परिचय

उपर्युक्त भक्त साहिबान में भक्त बेणी जी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। भक्त बेणी जी मध्य काल के भक्त साहिबान में से एक हैं। भक्त जी के जीवन के बारे में अधिक जानकारी नहीं मिलती।

अगर कुछ प्रमाणिक उपलब्ध होता है तो श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भक्त जी के तीन पद। भक्ति-काव्य के गहन अध्येता आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक "उत्तर भारत की संत परम्परा" में आपके तीनों शब्दों की भाषा की प्राचीनता के आधार पर आपको भक्त कबीर जी से भी पहले का और संत मत के आरंभकर्त्ताओं में से एक माना है।

भाई गुरदास जी ने अपनी १०वीं वार की चौदहवीं पउड़ी में भक्त बेणी जी के विषय में कुछ उल्लेखनीय जानकारी दी है। भाई गुरदास जी लिखते हैं :

गुरमुखि बेणी भगति करि जाइ इकांतु बहै लिव लावै।
करम करै अधिआतमी होरसु किसै न अलखु लखावै।
घरि आइआ जा पूछीऐ राज दुआरि गइआ आलावै।
घरि सभ वथू मंगीअनि वलु छलु करि कै झथ लंघावै।
वडा सांगु वरतदा ओह इक मनि परमेसरु धिआवै।
पैज सवारै भगत दी राजा होइ कै घरि चलि

*१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना (पंजाब)। मो. ०९४१७२-७६२७१

आवै।
देइ दिलासा तुसि कै अणगणती खरची पहुंचावै।
ओथहु आइआ भगति पासि होइ दइआलु हेतु उपजावै।
भगत जनां जैकारु करावै ॥१४॥

अर्थात् भक्त बेणी जी सदैव एकांत में बैठकर नाम-सुमिरन किया करते थे। घर की जरूरतों की बिल्कुल भी परवाह नहीं करते और पूछने पर कहते कि मैं राजा के द्वारे गया था। उधर परमेश्वर अपने भक्त की पैज रखने के लिए राजा का रूप धार कर सारी वस्तुएं स्वयं घर पहुंचा आते।

भक्त बेणी जी की बाणी

भक्त बेणी जी के सिर्फ तीन शबद (पद) उपलब्ध हैं। ये तीनों पद श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं। निश्चित रूप से पहले पातशाह श्री गुरु नानक देव जी को भक्त बेणी जी की बाणी उदासियों के दौरान मिली होगी जो बाद में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज की गई।

भक्त जी का पहला शब्द "सिरीरागु" में पन्ना ९३ पर दर्ज है। दूसरा "राग रामकली" में पन्ना ९७४ पर और तीसरा "राग प्रभाती" के अन्तर्गत पन्ना १३५१ पर दर्ज है। भक्त बेणी जी के तीनों शबद बड़े आकार के हैं और ये साबित करते हैं कि भक्त जी का जीवन अनुभव, आध्यात्मिक चिंतन और धर्म-अध्ययन कितना विशाल और कितना गहन था!

पहला शबद

पहले शबद में भक्त बेणी जी ने जीवन की सच्चाई को बयान किया है। आप फरमाते हैं कि मनुष्य सारा जीवन भोग-विलास और माया में फंस कर प्रभु को भूल जाता है और सारी उम्र विकारों में गुजार देता है। बचपन खेलने-खाने में और जवानी काम-भोगों में गंवा देता है। बुढ़ापे में निर्बल होकर भी और जीने की लालसा नहीं त्यागता। सारा जीवन बेकार में बर्बाद कर लेता है और मरने के बाद भी मुक्ति नहीं मिलती :

निकुटी देह देखि धुनि उपजै मान करत नही बूझै ॥
लालचु करै जीवन पद कारन लोचन कछू न सूझै ॥
थाका तेजु उडिआ मनु पंखी घरि आंगनि न सुखाई ॥
बेणी कहै सुनहु रे भगतहु मरन मुकति किनि पाई ॥ (पन्ना ९३)

दूसरा शबद

दूसरे शबद में भक्त बेणी जी ने अपना आध्यात्मिक अनुभव प्रस्तुत किया है। आप फरमाते हैं कि गुरु-कृपा से नाम-सुमिरन करने और गुरु-चरणों में ध्यान लगाने से जो सुख प्राप्त होता है वह सारी सृष्टि में और कहीं नहीं है। इस साधना के बाद किसी और साधना की आवश्यकता ही नहीं रहती। इस शबद में भक्त बेणी जी ने बहुत सुंदर बिम्बों, प्रतीकों और उपमाओं का प्रयोग करते हुए अपने रूहानी एहसास को मूर्तिमान किया है :

मसतकि पदमु दुआलै मणी ॥
माहि निरंजनु त्रिभवण धणी ॥
पंच सबद निरमाइल बाजे ॥
ढुलके चवर संख घन गाजे ॥
दलि मलि दैतहु गुरमुखि गिआनु ॥
बेणी जाचै तेरा नामु ॥ (पन्ना ९७४)

तीसरा शबद

तीसरे शब्द में भक्त जी ने धार्मिक कर्मकांडों, पाखंडों का खंडन किया है :

तनि चंदनु मसतकि पाती ॥

रिद अंतरि कर तल काती ॥
ठग दिसटि बगा लिव लागा ॥
देखि बैसनो प्रान मुख भागा ॥ . . .
म्रिग आसणु तुलसी माला ॥
कर ऊजल तिलकु कपाला ॥
रिदै कूड़ु कंठि रुद्राखं ॥
रे लंपट क्रिसनु अभाखं ॥ (पन्ना १३५१)

इसलिए भक्त बेणी जी स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य को 'सत्य' की पहचान होनी चाहिए। जो आत्म-तत्व को नहीं चीन्हता उसके सारे कर्म-धर्म फोकट हैं :

जिनि आतम ततु न चीन्हिआ ॥
सभ फोकट धरम अबीनिआ ॥ (पन्ना १३५१)

यह बाणी सिद्ध करती है कि भक्त बेणी जी कितने उच्च कोटि के आध्यात्मिक चिंतक और साधक थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल ११ भट्टों में से एक कल सहार भट्ट भक्त बेणी जी की शख्सियत के बारे में लिखते हैं :

भगतु बेणि गुण रवै सहजि आतम रंगु माणै ॥
जोग धिआनि गुर गिआनि बिना प्रभु अवरु न जाणै ॥ (पन्ना १३९०)



कविता

आप भी सुनें

कोख से इक सद जो आती है, सुनते ही रूह कांप जाती है।
इक अधूरे से जिस्म की बच्ची, अपना रूदादे-गम सुनाती है।
दिल ने चाहा कि अपनी अम्मी से, मैं भी इजहारे-आरजू कर लूं।
जी में आया कि मौत से पहले, अपने कातिल से गुफ्तगू कर लूं।
मैं भी इक बात हूं मुहब्बत की, दरम्यां ही में टोकते क्यों हो?
तुम हो माली तो फिर बताओ मुझे, फूल बनने से रोकते क्यों हो?
घर में होगी न जब कोई बेटी, रब की रहमत कभी न बरसेगी।
लेकर पुत्रों की जोड़ियां फिर भी, सच्चे आदर को रूह तरसेगी।
बाहरी हलचलों से लगता है अब, मेरा कत्ल होने वाला है।
रूप रब का जो डाक्टर है वही, मां को सुई चुभोने वाला है।
मम्मी-पापा की जिद यह कहती है, अब मैं पैदा हो नहीं सकती।
हाय! फरियाद भी करूं कैसे, कोख के बीच रो नहीं सकती!
मौका मिलता है जिनको रोने का, वो बड़े भाग्यवान होते हैं।
कैसे रोऊं कि सारे बच्चे ही, जन्म लेने के बाद रोते हैं!
मैं हूं लड़की तो एक पत्थर हूं, अपनी इस सोच को बदल पापा!
चांद-सूरज-सितारे कहते हैं, अब नये रास्ते पे चल पापा!
मुझको जीने की दे दुआ पापा! मेरी धरती का आसमां बन जा।
तू भी मम्मी मेरी! मेरी खातिर, कल्पना चावला की मां बन जा।
जन्म लेने दे मुझको मां, ताकि सिलसिला-ए-हयात खत्म न हो।
रब ने बख्शी है जो हमें 'पंछी', अपनी यह कायनात खत्म न हो।



-स. करनैल सिंघ (सरदार पंछी), पंजाब माता नगर, लुधियाना-१४१०१३

भक्त सैण जी

*-स. सुरिंदर सिंघ निमाणा**

भक्त सैण जी भक्ति-धारा के उन पंद्रह भक्त साहिबान रूपी माला के मोती हैं जिनकी पावन बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित होने का सम्मान प्राप्त हुआ। भक्त सैण जी ने मध्यकाल के समय के राजनैतिक प्रबंध के भय के साये तले जीवन व्यर्थ गंवा रहे भारतीयों में प्रभु-भक्ति के निर्मल भावों का संचार कर उन्हें आत्मसम्मान सहित जीवन-यापन करने की प्रेरणा दी।

भक्त सैण जी के जीवन-वृत्तांत के संबंध में अधिक जानकारी नहीं प्राप्त होती। इतना ज्ञात होता है कि आपका जीवन-काल सन् १३९० ई से लेकर १४४० ई तक है। आपके पिता का नाम श्री मुकंद राय और माता का नाम माता जीवन देई था। यह परिवार तथाकथित नाई जाति के साथ संबंधित था।

आपको दस वर्ष की आयु में आपकी बूआ माता शोभी देई के पास लाहौर में भेजा गया। लाहौर नगर आपके लिए अपना पारिवारिक अथवा जातीय व्यवसाय सीखने का स्थल बना। लाहौर में आपने रहीम खान नामक शख्स को व्यवसाय सीखने हेतु अपना उस्ताद धारण किया। आपने नम्रता, मीठी भाषा, सेवा, समर्पण एवं आज्ञाकारिता आदि गुणों के साथ उस्ताद का मन जीत लिया। नाई के व्यवसाय में आप इच्छित रूप में निपुण हो गए।

व्यवसाय में कुशलता प्राप्त करने के उपरांत आपने बाधवगढ़ के राजा की नौकरी की। आपके जिम्मे मुख्य रूप से राजा को स्नान कराने, वस्त्रों की संभाल, मुट्ठी-चापी और हंसी द्वारा उसकी शारीरिक, मानसिक तथा दिमागी थकान को दूर करना और उसके नाखुन उतारने जैसे कार्य थे, जिनको आप सकुशलता के साथ-साथ आवश्यक रुचि लेते हुए करते रहे और जिससे आपने अपने राजा रूपी स्वामी का मन जीत लिया।

भक्त सैण जी का मन राजा की नौकरी करते-करते ही प्रभु-भक्ति की ओर आकर्षित हुआ। अपने जिम्मे लगे सेवा-कार्य को निभाते हुए आपका ध्यान प्रभु-नाम में रत रहता। जब भी समय मिलता आप आत्म-ज्ञानियों एवं साधू-संतों की संगत में आध्यात्मिक चर्चा करते। आपने भक्त रामानंद जी की रुहानी अगुआई प्राप्त की और भक्त कबीर जी के गुरभाई बने। एक दिन ज्ञान-चर्चा में इतने विलीन हुए कि राज-दरबार में उपस्थित होने के समय का ही स्मरण न रहा। बाद में ज्ञात होने पर व्यवसाय प्रति नियमबद्धता एवं प्रतिबद्धता की कमी के प्रश्न पर आप चिंतित हुए। आपको राजा की नाराजगी का सामना करने का ख्याल सताने लगा परंतु राज-दरबार में पहुंचकर अपने सांसारिक स्वामी राजा को साधारण से अधिक प्रसन्न मुद्रा में पाकर आपका प्रभु-भक्ति में विश्वास और अधिक बढ़ा और इस प्रकार कुल जीवन ही प्रभु-भक्ति को समर्पित कर दिया। आपको महसूस हुआ कि यदि हम प्रभु-भक्ति में रत रहने का व्यवहार करने लगें तो प्रभु स्वत: हमारी सभी समस्याओं का समाधान कर देते हैं। वह प्रभु जो सबका स्वामी है उसको ही स्वयं को समर्पित करना उचित है। इस घटना को

**सहायक संपादक, गुरमति ज्ञान/गुरमति प्रकाश।*

भाई गुरदास जी ने यूं कलमबद्ध किया है :
सुणि परतापु कबीर दा दूजा सिखु होआ सैणु नाई।
प्रेम भगति राती करै भलकै राज दुआरै जाई।
आए संत पराहुणे कीरतनु होआ रैणि सबाई।
छडि न सकै संत जन राज दुआरि न सेव कमाई।
सैण रूपि हरि जाइ कै आइआ राणै नो रीझाई।
साध जनां नो विदा करि राज दुआरि गइआ सरमाई।
राणै दूरहुं सदि कै गलहुं कवाइ खोलि पैन्हाई।
वसि कीता हउं तुधु अजु बोलै राजा सुणै लुकाई।
परगटु करै भगति वडिआई ॥ (वार १०:१६)

बाणी के बोहिथ श्री गुरु अरजन देव जी महाराज ने प्राचीन युग से लेकर मध्य युग तक के प्रभु-नाम का दामन पकड़ कर आध्यात्मिक क्षेत्र में जिक्रयोग्य प्राप्तियां करने वाले कई व्यक्तियों का भावभीना वर्णन किया है जिनमें भक्त सैण जी का नाम भी शामिल है। भक्त जी द्वारा सेवा-सुमिरन द्वारा आत्म-उद्धार का जिक्र करते हुए गुरु साहिब ने मनुष्य-मात्र को सेवा-सुमिरन के मार्ग पर चलने हेतु प्रेरित किया है :
नाई उधरिओ सैनु सेव ॥
मनु डीगि न डोलै कहूं जाइ ॥
मन तू भी तरसहि सरणि पाइ ॥ (पन्ना ११९२)

एक अन्य पावन शब्द में सतिगुरु पंचम पातशाह जी ने केवल उन मध्यकालीन भक्त-जनों का ही ज़िक्र किया है जिनकी जाति उस जात-पात उन्मुख सामाजिक सभ्याचारक व्यवस्था में नीची समझी जाती थी और जाति के साथ-साथ उनके व्यवसायों को भी तथाकथित ऊंची जातियों के लोगों द्वारा घृणा भरी दृष्टि से देखा जाता था। उन जातियों तथा व्यवसायों का सम्मान सहित उल्लेख करते हुए गुरु जी ने उन भक्त-जनों की भक्ति-साधना और जनसाधारण में उनकी स्वीकृति होने का ऐतिहासिक तथ्य भी हमारे दृष्टिगोचर किया है। भक्त सैण जी के बारे में कथन किया है :
सैनु नाई बुतकारीआ ओहु घरि घरि सुनिआ ॥
हिरदे वसिआ पारब्रहमु भगता महि गनिआ ॥
(पन्ना ४८७-८८)

भक्त सैण जी का एक शब्द श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन पन्ना ६९५ पर धनासरी राग में अंकित किया है जिसमें भक्त जी ने आरती काव्य रूप द्वारा सर्वव्यापक प्रभु की स्तुति की है जो कि गुरमति की निर्गुण भक्तिधारा का एक अभिन्न अंग मानी जानी चाहिए। इस पावन शब्द में भक्त जी ने स्पष्ट कथन किया है कि हे प्रभु मालिक! तू निरंजन ही मेरे लिए आरती करने के लिए उत्तम दीया तथा निर्मल बाणी है और यह केंद्रीय भाव उजागर किया है कि जो मनुष्य कर्मकाण्ड की वाह्य विधि का परित्याग करते हुए सर्वव्यापक प्रभु को समस्त सृष्टि में विद्यमान महसूस करता हुआ प्रेमा-भक्ति भाव सहित प्रभु परमात्मा के गुण गायन करता है वह वास्तविक रूहानी आनंद का अनुभव प्राप्त करता है और इस तरह जीवन-उद्देश्य में सफल होता है :
धूप दीप घ्रित साजि आरती ॥
वारने जाउ कमला पती ॥१॥
मंगला हरि मंगला ॥
नित मंगलु राजा राम राइ को ॥१॥रहाउ॥
ऊतमु दीअरा निरमल बाती ॥
तुंहीं निरंजनु कमला पाती ॥२॥
रामा भगति रामानंदु जानै ॥
पूरन परमानंदु बखानै ॥३॥
मदन मूरति भै तारि गोबिंदे ॥
सैनु भणै भजु परमानंदे ॥४॥१॥ (पन्ना ६९५)



भक्त साहिबान के जीवन तथा बाणी की क्रांतिकारी सामाजिक संवेदना

*-डॉ. नरेश**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जिन भक्त साहिबान की बाणी सम्मिलित है, वे सब मध्ययुगीन कवि थे। हिन्दी काव्य का मध्य युग सामन्त युग था। भारतीय सामाजिक जीवन की वागडोर सामन्तों के हाथों में थी। इन सामन्तों के सबसे बड़े पक्षधर एवं शक्तिशाली वकील थे— पंडित और मौलवी। राजा को 'देवानांप्रिय' और 'जिल्ले-इलाही' घोषित करके इन पंडितों तथा मौलवियों ने निरीह भारतीय जनता को कई प्रकार के भ्रमों में फंसाकर यह समझा रखा था कि उनके समस्त दुख-कलेश किसी प्रकार के शोषण या दूषित अर्थ-व्यवस्था का परिणाम नहीं थे अपितु उनके पूर्व जन्म के कर्मों का फल थे। इसलिए उन्हें सांसारिक सुखों का मोह त्यागकर मात्र दूसरे लोक के लिए पुण्य कर्मों के संचय का उपदेश दिया गया ताकि वे अपनी शोचनीय वर्तमान अवस्था के प्रति उदासीन रहें। वर्णाश्रम की कट्टरता पर बल देकर समाज को संगठित होने से रोकने की चाल भी सफलतापूर्वक चली गई। संगठन की सम्भावना पर एक और कुठाराघात यह किया गया कि भारतीय समाज को हिन्दू तथा मुसलमान, दो वर्गों में विभाजित करके रख दिया गया।

इन परिस्थितियों के बीच उदय हुआ भक्ति साहित्य का। क्योंकि अधिकांश भक्त साहिबान का आविर्भाव या तो निम्न जातियों से हुआ था या वे समाज के मध्यम वर्ग से थे इसलिए इनकी बाणी में दो चीजें उभरकर उठ खड़ी हुईं। एक, सामन्तों के पक्षधर पंडितों तथा मौलवियों के पाखंडजाल को विदीर्ण करने का निश्चय और दूसरी, मानव और मानव के बीच अंतर मिटाने का लक्ष्य। फलत: भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी ने खुलकर वाह्याचार की निंदा की :

—कबीर प्रीति इक सिउ कीए आन दुबिधा जाइ ॥
भावै लांबे केस करु भावै घररि मुडाइ ॥ (पन्ना १३६५)
—हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ॥
मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥
(पन्ना ३४६)

इस्लाम तथा हिन्दू धर्म, दोनों में व्याप्त अंधविश्वास तथा कर्मकांड के मिथ्यात्व का निरावरण करके इन भक्त साहिबान ने सामन्तों के पोषक पंडितों तथा मौलवियों की इजारेदारी को झिंझोड़ा। *'एक नूर ते सबु जगु उपजिआ'* की भावना के प्रचार एवं प्रसार द्वारा इन भक्त साहिबान ने वर्णयुक्त समाज को वर्णमुक्त समाज में बदलने का सतुत्य प्रयास किया।

भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, भक्त सधना जी, भक्त नामदेव जी जैसे भक्त साहिबान का सम्बंध क्योंकि तथाकथित निम्न जातियों से था, इसलिए उनके हाथों वर्णभेद के दामन का तार-तार होना स्वाभाविक ही था। उच्च वर्गों, विशेषकर विप्र वर्ग के हाथों तिरस्कृत एवं पीड़ित जातियों के प्रतिनिधि इन भक्त साहिबान ने भक्ति में रत्त अपनी पावन बाणी में अपने पेशे से सम्बंधित प्रतीकों और उपमाओं से न केवल पंडितों की इजारेदारी पर ही आक्रमण किया, न केवल सहज-स्वाभाविक मानवीय प्रतिशोधात्मक प्रतिक्रिया को ही अभिव्यक्ति दी बल्कि लोगों में यह विश्वास भी कायम किया कि मुक्ति के लिए पंडितों तथा मौलवियों की मध्यस्थता के बिना भी काम चल सकता है। इस वैचारिक क्रांति के उद्घोषक एवं प्रस्तोता होने के कारण ये भक्त साहिबान केवल धार्मिक दृष्टि से ही आदर के पात्र नहीं अपितु समाज की कायाकल्प में अग्रणी बनकर भी वन्दनीय हैं।



**१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९*

भट्ट साहिबान और उनकी बाणी

*-स. बिक्रमजीत सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में केवल सिख गुरु साहिबान की ही नहीं बल्कि अलग-अलग धर्मों और जातियों से संबंधित १५ भक्त साहिबान, ११ भट्ट साहिबान और ४ गुरसिखों की बाणी भी शामिल है।

इन बाणीकारों में से श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भट्ट साहिबान की बाणी अंतिम भाग अथवा पन्ना १३८९ से १४०९ तक दर्ज है। इन भट्ट बाणीकारों ने सतिगुरु साहिबान की अत्यंत सच्ची श्रद्धा से सिफत की है और गुरु साहिबान के व्यक्तिगत गुणों का गायन किया है। भट्ट साहिबान वे महापुरुष थे जिन्होंने गुरु साहिबान के प्रत्यक्ष दर्शन किए थे।

'भट्ट' शब्द के अर्थ : अलग-अलग विद्वानों के अनुसार 'भट्ट' शब्द के कई अर्थ हैं :

भाई काह्न सिंघ नाभा के अनुसार भट्ट का अर्थ 'प्रशंसा करने वाला कवि, राज-दरबार में राजा और शूरवीरों का यश गायन करने वाला पंडित है।'

पं. तारा सिंघ नरोत्तम के अनुसार, 'भट्ट का अर्थ पंडित स्वामीपन्न प्रशंसा करके आजीविका कमाने वाला जन है।'

ज्ञानी हजारा सिंघ के कथन मुताबिक 'यह एक सत्कारयोग्य खिताब है जो कि पहले शहजादों को और फिर बाद में बड़े-बड़े विद्वानों को दिया जाता था।'

भट्ट असल में कौन थे और कहां से आए थे, ऐसे सवालों के जवाब इतिहास में ज्यादा नहीं मिलते परन्तु खोजकारों के मुताबिक ये भट्ट जाति के ब्राहमण माने जाते हैं, जो राजस्थान की तरफ से पंजाब आए थे।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भट्ट-बाणी की अंदरूनी गवाही के मुताबिक ये वे व्यक्ति थे जो राजाओं-महाराजाओं की प्रशंसा करते थे, परन्तु इनकी आत्मा को कहीं शांति नहीं मिल रही थी। वे अपने आत्मिक चैन को पुन: प्राप्त करना चाहते थे। भट्ट लोक भटकना से बचने के लिए किसी पूर्ण संत की तलाश में थे। भटकते हुए वे गुरु-घर पहुंच गए तो सत्य-स्वरूप गुरु साहिबान के दर्शन करके इनकी आत्मा को शांति मिली। संयोगवश यह वह समय था जब श्री गुरु रामदास जी के ज्योति जोत समा जाने के बाद श्री गुरु अरजन देव जी की गुरुआई हेतु दसतारबंदी की जा रही थी। इस समय गुरु साहिबान के दर्शन करते समय भट्ट साहिबान के हृदय से गुरु-घर की उपमा में भावों की धारा फूट पड़ी जो भट्ट साहिबान की पावन बाणी के नाम से विख्यात है।

प्रो: साहिब सिंघ ने बाणी के अंक-प्रबंध को आधार बना कर भट्ट साहिबान की गिनती ११ नीयत की है जो कि अब सर्वप्रमाणित है। भट्ट साहिबान ने गुरु-उपमा में सवैयों का उच्चारण किया। भट्ट बाणी का विवरण निम्न प्रकार है:

१. भट्ट कल सहार : आप जी ने कुल ५४ सवैये रचे हैं। इनमें १० श्री गुरु नानक साहिब जी की स्तुति में, १० श्री गुरु अंगद देव जी की

**सपुत्र स. रणजीत सिंघ, २९४६/७, बाजार लोहारां, चौक लछमणसर, श्री अमृतसर।*

स्तुति में, ९ श्री गुरु अमरदास जी की स्तुति में, १३ श्री गुरु रामदास जी की स्तुति में तथा १२ श्री गुरु अरजन देव जी की स्तुति में रचे हैं। इनके पिता का नाम भट्ट चोखा था जो कि भट्ट भिखा जी के छोटे भाई थे। भट्ट गयंद जी भी आपके भाई थे।

२. भट्ट जालप जी : आप जी भट्ट भिखा जी के बेटे थे। भट्ट मथरा जी और भट्ट कीरत जी आपके भाई थे। आप जी ने श्री गुरु अमरदास जी की महिमा में ५ सवैये रचे।

३. भट्ट कीरत जी : आप जी भट्ट भिखा जी के छोटे बेटे थे। आप जी ने ४ सवैयों में श्री गुरु रामदास जी की और ४ सवैयों में श्री गुरु अमरदास जी की महिमा गायन की है।

४. भट्ट भिखा जी : आप जी सभी भट्ट साहिबान के मुखिया थे। आपके पिता का नाम भट्ट रईया था। भट्ट कीरत जी, भट्ट मथरा जी और भट्ट जालप जी आपके सपुत्र थे। आप जी ने श्री गुरु अमरदास जी की महिमा में २ सवैये रचे।

५. भट्ट सल जी : आप जी ने श्री गुरु अमरदास जी की महिमा में १ और श्री गुरु रामदास जी की महिमा में २ सवैये रचे हैं।

६. भट्ट भल जी : आप जी भट्ट भिखा जी के भतीजे थे। आपने श्री गुरु अमरदास जी की स्तुति में १ सवैया रचा।

७. भट्ट नल जी : आप जी ने श्री गुरु रामदास जी की महिमा गायन करते हुए १६ सवैये रचे, गोइंदवाल साहिब को बैकुंठधाम कहकर संबोधन किया।

८. भट्ट गयंद जी : आप जी भट्ट चोखा जी के बेटे थे और कल सहार जी के छोटे भाई। आप जी ने श्री गुरु रामदास जी की महिमा गायन करने हेतु १३ सवैयों की रचना की।

९. भट्ट मथरा जी : आप जी ने ७ सवैयों की रचना श्री गुरु रामदास जी की महिमा गायन करते हुए की और ७ सवैये श्री गुरु अरजन देव जी की महिमा में गायन किए।

१०. भट्ट बल जी : आप जी भट्ट सखा जी के बेटे थे जो भट्ट भिखा जी के भाई थे। आप जी ने ५ सवैये श्री गुरु रामदास जी की महिमा में गायन किये।

११. भट्ट हरिबंस जी : आप जी ने श्री गुरु अरजन देव जी की महिमा में २ सवैये रचे।

भट्ट बाणीकारों ने प्राचीन काल में हो चुके अनेकों महापुरुषों तथा उनसे संबंधित पुन्य-कर्मों का उल्लेख करते हुए कलियुग में गुरु-साहिबान को श्रेष्ठतम दर्शाया है। इस बात को हम अगर सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो यह बात स्पष्ट होती है कि भट्ट साहिबान ने अत्यंत श्रद्धा और शिद्धत से गुरु-उपमा की है।

भट्ट साहिबान के पौराणिक विश्वास और निजी श्रद्धा के आधार पर गुरु साहिबान की शख्सियतों को आत्मिक पक्ष से महान, सामाजिक पक्ष से उसारू और राजनीतिक पक्ष से जन-हितु माना है। गुरु साहिबान की महानता में भट्ट साहिबान ने ऐतिहासिक और मिथहासिक हवालों का प्रयोग करके गुरु साहिबान का शक्तिशाली बिंब लोकमानस में स्थापित किया है। गुरु साहिबान की जो तस्वीर भट्ट साहिबान ने अपनी बाणी में दिखाई है वो लोक मान्यता में आज भी निवास कर रही है।

भट्ट-बाणी का मूल स्वर गुरु-यश गायन करना है। गुरु का स्वरूप निश्चित करने का यत्न इन बाणीकारों ने किया है। इनकी बाणी पढ़ने-सुनने के बाद कुछ बातें सामने आती हैं:
१. गुरु परमात्मा का रूप है। वह युग-युग में अवतरित होकर लोगों का कल्याण करता है।

२. गुरु नाम का दाता है। गुरमति में नाम-सुमिरन आध्यात्मिक साधना का मूल है, जिसके बल पर साधक परम लक्ष्य की प्राप्ति करता है। नाम की दात, नाम-सुमिरन की युक्ति सतिगुरु से प्राप्त होती है।

३. धर्मराज सतिगुरु का सेवक है जो सिख/साधक सतिगुरु के चरणों के साथ जुड़े होते हैं उनको धर्मराज कुछ नहीं कह सकता।

४. सतिगुरु के दर्शन करने वाले साधक को मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

५. सतिगुरु सभी दातें देता है। सत्य-मार्ग पर चलने वाले हर सिख की हरेक भूख को तृप्त कर देता है।

६. युगों-युगांतरों से श्रद्धावानों की लाज रखता आया है, सुदामा, द्रोपदी, ध्रू, प्रहलाद, इत्यादि की जैसे पूर्व युगों में परमात्मा ने लाज रखी थी अब भी सतिगुरु जो परमात्मा-स्वरूप है, लाज रखता है।

७. गुरु जहाज है। कलयुग में वह भवसागर से पार करता है।

साहित्यक पक्ष से भट्ट बाणी :

भट्ट बाणी साहित्यक दृष्टि से उत्कृष्ट रचना है :-

१. इनकी रचना का सिरलेख 'सवैये' है, पर सवैयों के अलावा चौपई, रड, झूलणा, कबित्त, दोहरा, सोरठा इत्यादि छंदों का उपयोग भी किया है।

२. इन बाणीकारों ने उपमा, रूपक, अनुप्रास, यमक इत्यादि अलंकारों का सुंदर रूप से प्रयोग किया है।

३. भट्ट बाणीकारों ने गुरु-बिंब को सृजित करने हेतु इतिहास-मिथहास में से सामग्री एकत्र करके गुरु-बिंब को लोकमानस में निर्माता, महापुरुष अवतार के रूप में प्रकट किया है।

४. इनकी भाषा मुख्य रूप में 'ब्रज' है परन्तु इसका झुकाव ज्यादा संस्कृत की तरफ है। यही कारण है कि इसे ध्यान से समझना पड़ता है। लेकिन इसे गुरबाणी के व्याकरण नियमों के तहत रचा गया है।

५. इस भाषा में सूक्ष्मता है।

६. संगीतात्मकता इसका एक विशेष मीरी गुण है। शब्दों को इस तरह लगाया है कि पढ़ने और सुनने में संगीतमयी वातावरण पैदा हो जाता है। पढ़ने वाला और सुनने वाला संगीत के रूहानी मंडल में पहुंच जाता है। यह एक उत्कृष्ट रचना है।

अगर हम श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भट्ट-बाणी को समूचे रूप से देखें तो यह स्पष्ट होता है कि इन बाणीकारों ने सतिगुरु साहिबान के प्रति जन-साधारण के मनों में श्रद्धा, सत्कार, विश्वास और नजदीकी में बढ़ोत्तरी की है।

ये भट्ट बाणीकार श्री गुरु अरजन देव जी के समय श्री हरिमंदर साहिब अमृतसर में जब आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश होता था तो उस समय सवैये पढ़ते थे। आज भी यह परंपरा श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के प्रातः काल प्रकाश समय देखने और सुनने को मिलती है। इन भट्ट साहिबान की कुल में से और रिश्तेदारी में से संबंधित गुरसिख अमृत वेले (प्रातः काल) यह सवैये उच्चारण करने की सेवा निरंतर पीढ़ी-दर-पीढ़ी निभा रहे हैं।

सहायक पुस्तकें

१. भट्ट सवैये : संपादन बलकार सिंघ (PUP)
२. गुरमति ज्ञान : अक्तूबर २००७
३. भट्टां दे सवैये : सटीक, सिंघ ब्रदर्ज, अमृतसर।



युगो-युग अटल श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की शाश्वता

-डॉ. मीना रानी शर्मा, प्रो. रणजीत सिंघ***

विश्व की प्रत्येक जाति किसी न किसी धर्म से निबद्ध है। प्रत्येक धर्म से जुड़े व्यक्ति के लिए अपना धर्म सर्वोपरि, पवित्र, वंदनीय व श्रद्धेय है। कुछ लोगों ने धर्म के नाम पर विश्व को गुटबंदियों में विभक्त कर रखा है, पर साथ ही उन गुटों को एकसूत्र में बांधने का श्रेय भी धर्म को ही है। हरेक व्यक्ति के लिए अपने धर्म का आदर-सम्मान करना अति अनिवार्य है। जो व्यक्ति अपने धर्म के लिए जी-जान की बाजी लगाने से कतराता है, उसका अपना अस्तित्व मिट्टी में विलीन हो जाया करता है।

आज हम उन धर्मों में ही सुविख्यात धर्म— सिख धर्म की बात करेंगे जो अपनी शाश्वता, पवित्रता, बलिदान-भावना व जन-कल्याणकारी रूप के लिए सुविख्यात है। किन्तु गहरे से विचार करें तो पाते हैं कि आज सिख धर्म के स्वरूप पर भी कुछ 'देहधारी गुरुओं' द्वारा मुखौटे डाल कर इसे विकृत करने की कोशिश की जा रही है। इसके चाहे कितने भी कारण क्यों न हों किन्तु सर्वप्रमुख एक ही कारण है, वह है उनकी अपने सच्चे गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी से बेमुखी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के वचनों को भुलाकर वे मुट्ठी भर लोग देहधारी गुरुओं के समक्ष नतमस्तक होते हैं।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने स्वयं अपने बाद श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को 'गुरु' का दर्जा प्रदान किया व उसी के आगे नतमस्तक होने का आदेश सिख संगत को दिया। उन्होंने कहा कि दुनिया चाहे कितनी भी क्यों न बदल जाए किन्तु आइंदा कोई भी देहधारी प्राणी 'गुरु' नहीं हो सकता, केवल श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पावन स्वरूप ही 'गुरु' कहलवाएगा।

परन्तु बड़े दुख के साथ कहना पड़ रहा है कि आज मानव जाति को गुरु जी के मुखारबिंद से निकले पावन वचनों व उनके त्याग-बलिदान का स्मरण ही नहीं है। गुरु जी द्वारा निर्धारित बुनियादी असूल कुछ अज्ञानी लोगों की मूर्खता की भेंट चढ़ रहे हैं। वे संगत को दिग्भ्रमित कर उन्हें श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी से विमुख कर रहे हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी के कुछ हिस्से को आधार बनाकर, उसे अपनी तरह से इस्तेमाल कर अपनी जै-जैकार करवा रहे हैं। ऐसे लोग 'गुरु' नहीं हो सकते। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की कुछ पंक्तियों को अपनी तरह तोड़-मरोड़ कर बयान कर वे 'ज्ञानी-ध्यानी' और 'सच्चा गुरु' होने का प्रपंच रचाते जरूर हैं, लेकिन अपनी ओर से कहने के लिए उनके पास कुछ नहीं है। वे अंधेरे को प्रकाश में तबदील करने में सक्षम नहीं हैं। हमें समझ लेना चाहिए कि हमें इस नश्वर संसार में सुमिरन से जोड़ने वाले सभी मनुष्य 'गुरमुख' तो हो सकते हैं, 'गुरु' नहीं। दस गुरुओं की युगो-युगो अटल ज्योति तो केवल श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विद्यमान है। वही हाजिरा-हजूर हैं, जाहिरा-जहूर हैं। यह 'गुरु' नाम-बाणी के बोहिथ हैं, कलयुग के जहाज हैं, हलत-पलत के रखवाले हैं।

कुछ लोगों का भ्रम है कि एक अलग-सा पहरावा पहन लो, गुरबाणी की चंद पंक्तियां याद कर लो, गुरु बनने के लिए काफी हैं। पर ये

हिंदी प्रवक्ता, ए. एस. कॉलेज, खन्ना (लुधियाना),प्रवक्ता, जनता प्रकाशन, जी. टी. वी. कॉलेज, भवानीगढ़।*

सब बातें मिथ्या हैं, निराधार हैं। 'गुरु' तो वह शख्सियत है जो रूहानी ज्ञान का अथाह भण्डार है, सही कर्म करने पर प्यार देता है, गलती होने पर फटकार देता है और माता-पिता की भांति झिड़कने-डांटने के बाद फिर गले लगा लेता है:

करि उपदेसु झिड़के बहु भाती बहुड़ि पिता गलि लावै ॥ *(पन्ना ६२४)*

इतना ही नहीं, ऐसे सच्चे गुरु का तो किसी से कोई वैर-विरोध नहीं होता। वह तो मानव को कल्याण और भक्ति के रास्ते पर चलाकर उसे परमात्मा से मिलाता है। वह मनुष्य को घने अंधेरे में से बाहर निकाल उसके मार्ग को प्रकाशमान करता है। इसका सूचक तो 'गुरु' शब्द अपने आप ही में इसका प्रमाण प्रस्तुत करता है।

'गुरु' शब्द संस्कृत का शब्द है जो दो शब्दों के सुमेल 'गु + रु' से बना है। 'गु' का अर्थ है 'अंधेरा' और 'रु' का अर्थ है 'प्रकाश' अर्थात जिस व्यक्ति में अज्ञान के अंधेरे को दूर कर, ज्ञान का प्रकाश फैलाने की क्षमता हो, वही 'सच्चा गुरु' है।

अंधेरा भी दो प्रकार का होता है। एक जो प्रकाश के साधन न होने पर या दृष्टि बाधिक होने की स्थिति में होता है और दूसरा जो ज्ञान के अभाव में प्रतीत होता है। ऐसे अंधेरे को मिटाने में समर्थ व्यक्ति को ही 'गुरु' की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। परमात्मा से विछुड़ी जीवात्मा रूपी लौ ब्रह्म-ज्ञान की दात देकर उसमें सदा के लिए नाम का प्रकाश करने वाली शक्ति ही 'गुरु' है। वही जीवात्मा को अज्ञान के तिमिर में से बाहर निकाल सही मार्ग का बोध कराता है। श्री गुरु अरजन देव जी का इस विषय में कथन है:

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥ *(पन्ना २९३)*

सांसारिक धंधों की सिखलाई देने के लिए इस विश्व में एक से बढ़कर एक 'गुरु' मिल जाएंगे, लेकिन जीवात्मा को परमात्मा से जोड़ने व आध्यात्मिक क्षेत्र में विचरने का ज्ञान देना हर किसी के वश का काम नहीं है। जीवात्मा के मुक्तिदाता 'गुरु' तो केवल श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी ही हैं।

हम देखते हैं कि किसी भी प्राणी का गुरु बिना गुजारा हो ही नहीं सकता। सांसारिक कार्यों की पूर्ति हेतु जैसे सांसारिक गुरु धारण किए जाते हैं वैसे ही रूहानियत की प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक गुरु की आवश्यकता है। सांसारिक चीजें तो बुनियादी हैं, उनके बोध के लिए भी हमें गुरु की जरूरत अनुभव होती है। फिर वह देश जिसको अनुभव करने का हम में लेशमत्र भी बल नहीं, वह 'गुरु' बिना कैसे संभव है? मानव जीवन तो परमात्मा का दिया हुआ अनमोल तोहफा है। हमें यह केवल सांसारिक भोग भोगने और मस्ती करने के लिए नहीं मिला अपितु यह तो चौरासी लाख योनियों में से परमात्मा से पुन: मिलने का एक मात्र स्वर्णिम अवसर है। 'नाम-सुमिरन' से मनुष्य जन्म-मरण के बंधनों से निवृत्त हो सकता है। इस मोक्ष व परम सत्ता की दया-दृष्टि प्राप्त करने के लिए 'गुरु' अति आवश्यक है और हमारा यह सौभाग्य है कि हमें श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब के रूप में अमूल्य निधि दी है और इस पावन स्वरूप के आगे झुकने, नमस्कार करने का आदेश दिया है। उसी को सबसे बड़ा व प्रकाशदाता 'आदि-गुरु' कहा है :

प्रिथम अकाल गुरू कीआ जिंह को कबै नहीं नास ॥
जत्र तत्र दिसा दिसा जिंह ठउर सरब निवास ॥
(दसम ग्रंथ, रूद्र अवतार)

मनुष्य-मात्र के लिए 'गुरु' धारण करना अति अनिवार्य है। गुरु-विहीन व्यक्ति का तो मुख देखना भी पाप है। गुरु मुक्ति की युक्ति व मति-पति का रक्षक है। श्री गुरु अरजन देव जी का फरमान है :

कहु नानक प्रभि इहै जनाई ॥
बिनु गुर मुकति न पाईऐ भाई ॥ (पन्ना ८६४)

श्री गुरु नानक देव जी गुरु की महिमा का वर्णन इस तरह करते हैं :

बिनु गुर भरमै आवै जाइ ॥
बिन गुर घाल न पवई थाइ ॥
बिनु गुर मनूआ अति डोलाइ ॥
बिन गुर त्रिपति नही बिखु खाइ ॥
बिनु गुर बिसीअरु डसै मरि वाट ॥
नानक गुर बिनु घाटे घाट ॥ (पन्ना ९४२)

श्री गुरु अमरदास जी ज्ञान-प्राप्ति का साधन केवल 'गुरु' ही मानते हैं। गुरु के बिना ज्ञान असंभव है और ज्ञान के बिना आत्मिक रस की अनुभूति नहीं हो सकती :

गुर बिनु गिआनु न होवई ना सुखु वसै मनि आइ ॥
नानक नाम विहूणे मनमुखी जासनि जनमु गवाइ ॥ (पन्ना ६५०)

जैसे कि पहले कहा ही गया है कि 'गुरु' शब्द का अर्थ ही प्रकाशदाता है। ऐसा प्रकाशदाता साधारण मानव कदापि नहीं हो सकता। सृष्टि का दाता 'आदि गुरु' ईश्वर है। उसी की दिव्य ज्योति का नूर समस्त विश्व में व्याप्त है :

सो अंतरि सो बाहरि अनंत ॥
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत ॥
धरनि माहि आकास पइआल ॥
सरब लोक पूरन प्रतिपाल ॥
बनि तिनि परबति है पारब्रहमु ॥
जैसी आगिआ तैसा करमु ॥
पउण पाणी बैसंतर माहि ॥
चारि कुंट दह दिसे समाहि ॥ (पन्ना २९३-९४)

वह सर्वव्यापक घट-घट में समाया हुआ है। संसार की सभी सजीव-निर्जीव वस्तुओं का आश्रय-स्थल ईश्वर ही है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी कहती है कि फूल की सुगंधि की तरह, पत्थरों में हीरे की तरह, पानी में जीवन की तरह परमात्मा की शक्ति सम्पूर्ण सृष्टि में विद्यमान है।

बाणी परमात्मा से साक्षात्कार करवाने का सुगम व सरल मार्ग है। वह (परमात्मा) स्वयं के प्रकाश से प्रकाशमान है। उसके प्रकाश की प्रतीति प्रकृति के सौम्य, रम्य व मनमोहक अद्‌भुत दृश्यों में होती है। सभी अध्यात्म अनुभवियों के आराध्य देव ईश्वर ही हैं। सारी पृथ्वी तो क्या तीनों लोक का अक्स उसी के इर्द-गिर्द चक्कर लगाता है। ऐसा प्रतिपालक, घट-घट में विद्यमान परमात्मा किसी की सृजना नहीं है। वह स्वयं के नूर से ही उत्पन्न है, उसकी कोई स्थापना नहीं कर सकता :

थापिआ न जाइ कीता न होइ ॥
आपे आपि निरंजनु सोइ ॥ (पन्ना २)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी का फरमान है कि 'वाहिगुरु' ही सर्व-सुखदाता है। सब खुशियां देने वाला वो सर्व कर्मों की सफलता की कुंजी है। वह सर्वकला-भरपूर, सर्वकला समर्थ व पल में थाप-उथापनहारा है :

साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु ॥
आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु ॥
(पन्ना २)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शबद-गुरु को महत्व दिया गया है। कुछ लोग इस भ्रम में फंसकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को गुरु मानने से इन्कार करते हैं कि 'शबद' बोल नहीं सकता, इसलिए 'शबद' गुरु नहीं हो सकता। किन्तु उन मनमुखों को यह नहीं पता है कि बोलते तो 'शब्द' ही हैं, देह तो कभी बोलती ही नहीं। आदि से लेकर अब तक सबका गुरु 'शबद' ही

रहा है। काया पांच तत्वों का मिश्रण होने के कारण जड़ व नश्वर है। काया का सम्मान तो है परंतु इसलिए क्योंकि उसमें गुरु की ज्योति निवास करती है। हम श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक दस गुरुओं को इसलिए पूजते हैं कि उनमें परमसत्ता ईश्वर की ज्योति विद्यमान है। अगर ईश्वर की दिव्य ज्योति पांच तत्वों के मिश्रण से बनी काया में निवास कर सकती है तो 'शब्दों' में क्यों नहीं अर्थात सबका गुरु 'शब्द' ही है। इसका सशक्त प्रमाण श्री गुरु नानक देव जी की बाणी है जिसमें वे सिद्धों की गुरु संबंधी अशंका को दूर करते हैं :

पवन अरंभु सतिगुर मति वेला ॥
सबदु गुरू सुरति धुनि चेला ॥
(पन्ना ९४३)

'शबद' ईश्वर का निरंकार स्वरूप है। यही कारण था कि जब भी श्री गुरु नानक देव जी किसी 'शब्द' का उच्चारण करते थे तो भाई मरदाना जी को रबाब बजाने का आदेश देते थे कि निरंकार की बाणी आई है। वे तो उसका उच्चारण करते हुए 'शब्द' के सम्मान में झुक-झुककर नमस्कार भी करते।

कविता को तोड़ा-मरोड़ा व काटा-छांटा जा सकता है, परंतु 'बाणी' ऐसी रचना नहीं है जिसमें कोई काट-छांट हो सके। यह उसी रूप में विद्यमान है, जिस रूप में परमात्मा की इच्छा से उसके प्रेमियों के हृदय से निस्सृत हुई। इसमें फेरबदल करने का किसी को कोई अधिकार नहीं है। इस बात की हामी श्री गुरु नानक देव जी की बाणी भरती है :

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो ॥ *(पन्ना ७२२)*

श्री गुरु रामदास जी भी फरमान करते हैं :

सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु हरि करता आपि मुहहु कढाए ॥
(पन्ना ३०८)

इससे प्रमाणित हो जाता है कि 'शब्द' ही गुरु है, 'बाणी' ही आध्यात्मिक ज्ञान का स्रोत है। यह तो अकस्मात ही पवित्र हृदय में पैदा हो मुखारबिंद से निस्सृत होती है। ऐसा हृदय परमात्मा का अभिन्न स्वरूप हुआ करता है। भक्तों की बाणी का श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलन इसका सशक्त प्रमाण है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी जीवन जीने की कला, ब्रह्म-ज्ञान का भंडार व समृद्ध ज्ञान का रत्नाकर हैं। इतना ज्ञान क्या किसी वर्तमान देहधारी गुरु के पास होना संभव है? उससे इतना ज्ञान होने की आशा रखना भी एक तरह से अमावस में चंद्रमा देखने के बराबर है। बाणी सब सुख-प्रदायिनी है। इसलिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब की महत्ता दिन-प्रतिदिन अभिनव एवं अभिराम होती जा रही है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में एक अद्भुत प्रेरणादायिनी शक्ति है, जो किसी अन्य ग्रंथ में दृष्टिगोचर नहीं होती। इसकी महिमा नि:संदेह अतुलनीय है। संसार में सब कुछ काल-कलवित हो जाएगा किन्तु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी चिरजीवी, अमर व सदैव शाश्वत रहेंगे। ईश्वर को पाने के जिज्ञासुओं के लिए गुरबाणी सीधा, सरल व बोधगम्य मार्ग है। जो गोता लगाने का साहस रखते हैं वे रत्न-पदार्थ लेकर ही लौटेंगे और जो भीगने के खौफ से किनारे पर ही बैठे रहेंगे, उनके हाथ केवल सीप और घोंघे ही रह जाएंगे। बाणी 'नाम' का दान देती है, जो ईश्वर की अमोलक दात है, जिसका संबंध प्राणी-मात्र के साथ मृत्यु के बाद भी रहता है। जब अपने और यहां तक कि अपना साया भी साथ छोड़ जाता है, वहां 'नाम' ही सच्चा सहारा बनता है।

सिख धर्म ही इतना सौभाग्यशाली व

(शेष पृष्ठ ६७ पर)

शबद-गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब

-प्रो दीनानाथ शरण (डॉ)*

पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने पूर्ववर्ती गुरुओं द्वारा रचित बाणी का संग्रह किया और अपनी भी बाणी की रचना की। यह बाणी-संग्रह को आज श्री गुरु ग्रंथ साहिब के नाम से जाना जाता है। इस पावन ग्रंथ को अमृतसर श्री हरिमंदर साहिब में लोगों के दर्शनार्थ अथवा गुरबाणी श्रवण करने हेतु,सुशोभित कर दिया। वे हर दिन बाणी का सुबह-शाम सस्वर उच्चारण करते, अपने तंबूरे के साथ गाते तथा सुनने के लिये शिष्यगण इकट्ठे हो जाते। श्री हरिमंदर साहिब के गुंबद के बीच संगीत की यह सुमधुर ध्वनिधारा बहती होती और इसकी दीवारों तथा सरोवर में भी प्रवाहित होती। आज भी इस पवित्र स्थान में संगीत की सुमधुर ध्वनि-प्रतिध्वनि सदैव सुनायी देती है एवं गूंजती रहती है।

कालांतर में अमृतसर सिखों के आध्यात्यिक जीनव-दर्शन एवं चिंतन-मनन का महत्त्वपूर्ण केन्द्र बन गया। मुगल सम्राट अकबर ने गुरु जी के आग्रह पर किसानों का लगान माफ किया। उस युग के बड़े-बड़े संतों-फकीरों का यह संगम-स्थल बन गया।

इसकी महिमा में प्रो पूरन सिंघ ने लिखा है :

O Holy One! Thou hast charmed my soul. Thy palaces rise aloft ashining cities of celestials before my eyes. And at the palace-door stands a whole universe to adore Thee.

दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पूजन-अर्चन करने के उपरांत उद्घोषणा की— "अब से श्री गुरु ग्रंथ साहिब सिखों के गुरु एवं पथप्रदर्शक होंगे। सिख अब इसी 'गुरु ग्रंथ साहिब' को माथा टेकें।" तब से यही पावन ग्रंथ सिखों के गुरु और मार्गदर्शक हैं।

महान पाश्चात्य दार्शनिक **ARNOLD TOYNBEE** का विचार है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब मानवता की प्राध्यात्मिक सम्पदा हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब कितने ही धार्मिक ग्रंथों में सबसे अधिक पवित्र हैं। महान भारतीय दार्शनिक सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने भी लिखा है कि पंजाबी साहित्य का यह सबसे महान् ग्रंथ मुख्यत: श्री गुरु अरजन देव जी की देन है, जो सिखों के पांचवें गुरु हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विभिन्न सम्प्रदायों के महापुरुषों, संतों और भक्तों की बाणी को स्थान दिया गया है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसको सम्पूर्णता के साथ संपादित किया और कहा कि अब से सिखों के गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी हैं।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने समय की आवश्यकता और परिस्थितियों की प्रासंगिकता को ध्यान में रख कर श्री आदि ग्रंथ साहिब को श्री दमदमा साहिब में विराजमान होकर दमदमी बीड़ नामक पावन स्वरूप के रूप में संपादन किया और सन् १७०८ में इसे मानवता के

*दरियापुर गोला, बांकीपुर, पटना-८००००४ (बिहार)

मार्गदर्शन हेतु "गुरु" के रूप में प्रतिष्ठित किया और कहा कि अब यही सबके "गुरु" होंगे।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसे गुरगद्दी पर प्रतिष्ठित किया और "शबद-गुरु" के रूप में महत्ता प्रदान की। यह विशेष उल्लेखनीय तथ्य है कि अन्य धर्मों में तो समय-समय पर जाने कितने ही "आचार्य" और "गुरु" उभरते आये, उभरते रहेंगे, लेकिन सिख धर्म में दस गुरु साहिबान के पश्चात श्री गुरु ग्रंथ साहिब को छोड़कर कोई दूसरा 'गुरु' नहीं है। ऐसी पवित्रता, इतनी महत्ता और ऐसा ऊंचा स्थान किसी भी धर्म में, किसी भी "ग्रंथ" को मयस्सर नहीं हुआ।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सराहना करते हुए पाश्चात्य विद्वान **Ernest Ruys** ने लिखा है कि **"Milton's familiar saying about the Book, which is the precious life-blood of a Master Spirit, treasured up to a life beyond life, receives a new meaning by (Guru) Gobind Singh's committal of the sacred office to the Guru Granth (Sahib). The living spirit of the Ten Masters or Gurus passes finally into the pages of the ever-lasting inspired book, The Testament Of the Sikhs , Sikh Faith to revelation of the Divine Father to "the child lost in the world-fair" as Puran Singh has described. Its message was that of Coleridge :**

All thoughts, all passions, all delights
Whatever stirs this mortal frame
All are but Ministers of Love
And feed His sacred flame.

इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब का सम्पादन करके दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उसे जो महत्ता प्रदान की, विश्व के इतिहास में कोई दूसरी मिसाल नहीं है।

प्रसंग व सहायक पुस्तक :

The Ten Masters (English) by Pof. Puran Singh, Publisher Chief Khalsa Diwan, Amritsar Sept. 1969.



श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की शाश्वता

(पृष्ठ ६५ का शेष)

सशक्त है जिसके पास श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी जैसी अमूल्य नीधि है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अध्ययन से हमारे सभी मसले स्वत: सुलझते जाते हैं। बाणी सर्व-कल्याणमयी है, ऊंच-नीच, तेरा-मेरा, जात-पात जैसे तुच्छ भावों से सर्वथा रहित है। बड़े दुख और चिंता का विषय है कि मनुष्यता इच्छित स्तर पर 'सही गुरु' की पहचान नहीं कर पा रही है। इसलिए अल्पज्ञानी देहधारी गुरुओं के आगे घुटने टेकने को विवश है। उनके पास श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पावन स्वरूप होते हुए भी उनकी दशा कुएं के पास बैठे प्यासे एवं उस लाचार व्यक्ति सी है, जिसके पास पानी निकालने का साधन नहीं है। अगर हमें जीवन सफल बनाना है, ईश्वर का दीदार करना है, हलत-पलत संवारना है तो अमृत एवं ज्ञान के समुद्र श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी का गहन चिंतन करना होगा :

खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥
तोटि न आवै बधदो जाई ॥ *(पन्ना १८६)*



दस गुरु साहिबान द्वारा संचारित आदर्श सिख की दस विशेषताएं

*-डॉ. हरनाम सिंघ**

सिख दर्शन या विचारधारा का मूल आधार श्री गुरु ग्रंथ साहिब हैं। सिख मत के उद्‌भव के समय 'शान्त सिख' का जो व्यक्तित्व नज़र आता है, वही जब कालान्तर में 'योद्धा खालसे' में परिवर्तित हो जाता है तो कुछ लोगों को ऐसा आभास होता है कि शायद मूल दर्शन में अंतर आ गया? सिख इतिहास का अध्ययन करने से भी पता चलता है कि यही सांशयिक दृष्टि भ्रम तब भी सिखों में उत्पन्न हुआ था, जब पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी शहीद हुए थे तथा गुरगद्दी पर विराजमान षठम गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिखों की सेना बनाई तथा किलों को निर्मित करना प्रारंभ किया। उन्होंने युवा सिखों को कुश्तियां खेलने, शिकार करने, शस्त्र चलाने, शरीर बनाने और सैनिक कैम्प लगाकर अभ्यास करने हेतु प्रेरित करना प्रारंभ किया। कुछ बुजुर्ग सिखों को प्रतीत हुआ कि यह मार्ग सिखी मत के विपरीत है। उन्होंने षठे गुरु के पास सिख पंथ के सर्वाधिक सम्मानित विद्वान बाबा बुड्‌ढा जी को अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा। बाबा बुड्‌ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से विनती की कि वे इस साधन-पद्धति का त्याग कर दें, क्योंकि अनेक गुरसिखों को यह सिख मत के अनुकूल नहीं जान पड़ता? तब छठवें गुरु का जवाब था— "मैं कोई कार्य सिख मत के प्रतिकूल नहीं कर रहा हूं, वरन् समय अनुसार हालत सुधारने की कोशिश कर रहा हूं।"

ध्यानपूर्वक देखें तो यह सत्य दिखलाई पड़ता है। दरअसल आध्यात्मिकता को आधार बनाकर श्री गुरु नानक देव जी ने जिस विषमता और पाखंड को जड़ से उखाड़ फेंकने का संकल्प किया था, उसी की भिन्न, मूर्त योजना-पद्धति की सशक्त अभिव्यक्ति हमें श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दर्शन में दिखलाई पड़ती है। यदि श्री गुरु नानक देव जी का सामाजिक दर्शन जन-जागरण पद्धति पर आधारित था तो यह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय, तत्कालीन परिस्थितियों के कारण युद्ध-दर्शन में बदल जाता है। वाह्य परस्पर विरोधिता प्रतीति के बावजूद, आंतरिक भावना में एक सूत्रता के दर्शन होते हैं, रूप जरूर बदल जाता है परन्तु लक्ष्य या भाव वही रहता है। इसलिए गोकुल चंद नारंग ने लिखा है कि "अन्याय के खिलाफ जो तलवार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उठाई थी निःसंदेह उसका लोहा श्री गुरु नानक देव जी ने तैयार किया था, अतः शान्त सिख योद्धा, खालसा, ये दोनों व्यक्तित्व अलग-अलग नहीं है।"

सिख मत प्रवृत्ति वादी और सकारात्मक विचारधारा है। इस दर्शन में सिख साधक या व्यक्ति, गृहस्थ जीवन में ही विभिन्न आध्यात्मिक गुणों को धारण कर, अपने कर्त्तव्यों और दायित्वों का पालन करता है तथा इस व्यवहारिक जगत् में रहता है। उसके स्वरूप में १० गुरुओं के जीवन-दर्शन पर आधारित आध्यात्मिक एवं नैतिक विशेषताओं का होना जरूरी है। इन्हें हम सिख की आध्यात्मिक और नैतिक विशेषताएं मान सकते हैं :

*Head of Philosophy Deptt., Govt. Digvijay College, Rajnandgaon (C.G.).

१. प्रेम या प्यास : श्री गुरु नानक देव जी के अधिकांश पदों (शबदों) में सारी सृष्टि के लिए प्रेम और परमात्मा से मिलन की प्यास या तड़प, जगह-जगह वर्णित है। उन्होंने अमृत-बेला यानि रात के आखिरी प्रहर में परमात्मा के नाम का स्मरण करने तथा शबद-गायन करने की परम्परा को जन्म दिया था। सुबह की सुहावनी बेला में अपने प्यारे परमात्मा को पूरे प्राणों से याद करना असीम प्रेम का द्योतक है। वे फरमान करते हैं :

—रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी चकवी सूर ॥
खिनु पलु नीद न सोवई जाणै दूरि हजूरि ॥
(पन्ना ६०)

—अहिनिसि जागै नीद न सोवै ॥
सो जाणै जिसु वेदन होवै ॥
प्रेम के कान लगे तन भीतरि वैदु कि जाणै कारी जीउ ॥ *(पन्ना ९९३)*

इस प्रकार श्री गुरु नानक देव जी के जीवन से प्रेम या प्यास की विशेषता को समझना महत्वपूर्ण है।

२. हुक्म : सिख मत में गुरु-शिष्य परम्परा का प्रमुख स्थान है। गुरु परमत्मा के समतुल्य है, अत: गुरु की आज्ञा या आदेश ही परमात्मा का हुक्म होता है। अगर हम श्री गुरु अंगद देव जी के जीवन का अवलोकन करें तो उन्होंने अपना पूरा जीवन श्री गुरु नानक देव जी की आज्ञाओं का ही पालन किया है। उनका फरमान है :

—इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु ॥
इकन्हा हुकमि समाइ लए इकन्हा हुकमे करे विणासु ॥ *(पन्ना ४६३)*

—जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ ॥
ध्रिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा ॥
(पन्ना ८३)

द्वितीय गुरु श्री गुरु अंगद देव जी के जीवन से हुक्म या आज्ञा विशेषता को उठाया गया है।

३. सेवा : सिख के व्यक्तित्व के अनिवार्य लक्षणों में सेवा का विशेष महत्व है। सिख मत के अनुसार अपनी आय का दसवां हिस्सा (दसवंध) गरीबों और जरूरतमंदों की सेवा में खर्च करना चाहिए। *'गरीब का मुंह गुरु की गोलक'* होता है। गुरुद्वारों में सबके लिए लंगर इसी सेवा का प्रतीक है। सिख गुरुओं ने अपने जीवन में अनेक बाउलियां एवं कुएं खुदवाए, कोढ़ीखाने तथा दीवानखाने बनवाए। तृतीय पातशाह श्री गुरु अमरदास जी का जीवन भी इसी सेवा से ओत-प्रोत नज़र आता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित उनका फरमान है :

सतिगुर की सेवा सफलु है जे को करे चितु लाइ ॥
मनि चिंदिआ फलु पावणा हउमै विचहु जाइ ॥
(पन्ना ६४४)

४. समर्पण या शरण : चतुर्थ गुरु श्री गुरु रामदास जी, जिन्होंने श्री अमृत सरोवर की खुदवाई करवाई, के दर्शन को उनके पदों (शब्दों) द्वारा समझने का प्रयत्न किया जाए तो उनमें परमात्मा के प्रति समर्पण या शरण का भाव अनोखा व अद्वितीय है। वे फरमान करते हैं :

अखी काढि धरी चरणा तलि सभ धरती फिरि मत पाई ॥
जो पासि बहालहि ता तुझहि अराधी जे मारि कढहि भी धिआई ॥ *(पन्ना ७५७)*

इसी प्रकार :

अब हम चली ठाकुर पहि हारि ॥
जब हम सरणि प्रभू की आई राखु प्रभू भावै मारि ॥ *(पन्ना ५२७)*

५. भाणा या स्वीकरण : भाई कान्ह सिंघ नाभा अपने 'महान कोश इनसाइक्लोपीडिआ

ऑफ सिख लिट्रेचर' में 'भाणा' शब्द के अर्थ को लिखते हैं— "ईश्वर की इच्छा, वह बात जो परमात्मा को प्यारी।" श्री गुरु अरजन देव जी का भी कहना है कि "हे परमात्मा जो तू करता है, वह आदेश स्वीकार है, तू सच्चा साहिब है, तेरा भाणा ही तेरा सच्चा आदेश है। यही वह दार्शनिक विशेषता है जिसे धारण कर पंचम गुरु श्री गुरु अरजन देव जी अनेक यातनाओं को सहन करते हुए सिख इतिहास के प्रथम बलिदानी महापुरुष बन जाते हैं :

—जो तूं करहि सोई परवाणु ॥
साचे साहिब तेरा सचु फुरमाणु ॥ (पन्ना ३७६)
—तेरा कीआ मीठा लागै ॥
हरि नामु पदारथु नानकु मांगै ॥ (पन्ना ३९४)

६. संतुलन या सहजता : सिख मत में अध्यात्म और संसार का अद्‌भुत समन्वय है। षठम गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने इस मध्य मार्ग को सुदृढ़ रूप प्रदान किया। उन्होंने फौज का गठन करते हुए सिखों को समझाया कि अन्याय के खिलाफ, आध्यात्मिक सोच के साथ शारीरिक और मानसिक शक्ति का होना भी आवश्यक है, अत: सिख दर्शन में सन्यास को कभी भी महत्व प्रदान नहीं किया गया। इसी प्रकार :

मन किउ बैरागु करहिगा सतिगुरु मेरा पूरा ॥
मनसा का दाता सभ सुख निधानु अंम्रित सरि सद ही भरपूरा ॥ (पन्ना ३७५)

७. रहित या नियम: सप्तम गुरु श्री गुरु हरिराय साहिब तक सिख पंथ स्थापित होकर फैल चुका था। विभिन्न आचार-व्यवहारों की एक सिख जीवन-शैली निर्मित हो चुकी थी। सप्तम गुरु श्री गुरु हरिराय साहिब ने इस आचार-संहिता के पालन की सुदृढ़ता हेतु एक कठिन निर्णय को प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने पुत्र बाबा रामराय को पंथ-निकाला देकर, संबंध विच्छेद कर लिए, क्योंकि उसने गुरु-घर के नियमों के उल्लंघन का घोर अपराध किया था। उसने श्री गुरु नानक देव जी के एक पद को एक शब्द को बदल डाला था।

८. नम्रता : सिख के अष्ठम गुरु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब छोटी अवस्था में परलोक गमन कर गए। उनके जीवन-दर्शन के परिचय से नम्रता, सहज-स्वभाव के गुणों का पता चलता है। उन्होंने दिल्ली में फैली चेचक की बीमारी के समय सिखों को नम्रता के आचार प्रदान करते हुए सेवा करने का उपदेश दिया था। उनकी याद में दिल्ली में आज भी गुरुद्वारा बंगला साहिब सुशोभित है।

९. वैराग्य (हउमै का त्याग) : नवम् गुरु श्री गुरु तेग बहादर जी का श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित सारा दर्शन-वैराग्य का अनुपम व्याख्यान है, जो सिखों में अहंकार (हउमै) के त्याग को बल देता है। उनका पद (शबद) है :

रामु गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवारु ॥
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारु ॥
(पन्ना १४२९)

इसी प्रकार :

जाग लेहु रे मना जाग लेहु कहा गाफल सोइआ ॥
जो तनु उपजिआ संग ही सो भी संगि न होइआ ॥
मात पिता सुत बंध जन हितु जा सिउ कीना ॥
जीउ छूटिओ जब देह ते डारि अगनि मै दीना ॥ (पन्ना ७२६)

१०. शक्ति एवं कर्त्तव्य : नवम् गुरु की जब शहादत होती है तो सिख के संत-सिपाही व्यक्तित्व को संपूर्णता प्राप्त होती है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी जो सिखों के दशम् गुरु हैं, सिखों को एक शक्तिशाली रूप प्रदान कर समाज एवं देश के प्रति कर्त्तव्य के लिए, मृत्यु को अंगीकार करने वाले जज्बे से भर देते हैं। उन्होंने अपनी आत्म-कथा में अपने जन्म लेने के उद्‌देश्य का वर्णन किया है:

हम इह काज जगत मो आए ॥
धरम हेत गुरदेव पठाए ॥ *(बचित्र नाटक)*

इस प्रकार सिख विचारधारा में सिख के जिस स्वरूप की परिकल्पना की गई है वह इस जगत् में रहते हुए आंतरिक-आध्यात्मिक और वाह्य रूप से व्यवहारिक गुणों को धारण करने वाला व्यक्तित्व है। उसके तीन रूपों का वर्णन हमें सिख दर्शन में प्राप्त होता है। यदि वह उपर्युक्त वर्णित १० विशेषताओं को धारण करता है, सिख आचार-संहिता के अनुसार जीवन गुजारता है तो उसे 'गुरमुख' कहा जाता है। गुरमुख के संदर्भ में अनेक पद (शबद) प्राप्त होते हैं। श्री गुरु रामदास जी फरमान करते हैं:

गुरमुखि अंतरि सांति है मनि तनि नामि समाइ ॥
नामो चितवै नामु पड़ै नामि रहै लिव लाइ ॥
(पन्ना ६५३)

इसके विपरित जो अहंकारी है, जिसकी कथनी और करनी में अंतर है, जो परमात्मा के नाम का स्मरण नहीं करता, उसे 'मनमुख' की संज्ञा दी गई है, जिसके संदर्भ में श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है :

बिखु खाणा बिखु बोलणा बिखु की कार कमाइ ॥
जम दरि बाधे मारीअहि छूटसि साचै नाइ ॥
जिव आइआ तिव जाइसी कीआ लिखि लै जाइ ॥
मनमुखि मूलु गवाइआ दरगह मिलै सजाइ ॥
(पन्ना १३३१)

तृतीप रूप, जिसे सिख मत में "ब्रह्मज्ञानी" कहा गया है, वह जीवन-मुक्त पुरुष है। उसके लक्षण बतलाते हुए पंचम गुरु जी ने फरमाया है कि बाहर और भीतर से सच्चा होने के साथ वह सभी में परमात्मा के एकत्व के अभेद दर्शन करता है :

मनि साचा मुखि साचा सोइ ॥
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥
नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ ॥
(पन्ना २७२)

यह ब्रह्मज्ञानी बंधनों से मुक्त है, इसका भोजन ज्ञान है, इसका ध्यान ब्रह्म है, यह कभी मरता नहीं, यह आप निरंकार-रूप है, यही वह सर्वोच्च स्वरूप है जिसे हर सिख को प्राप्त करना है। सिख मत में स्पष्ट उल्लेख है कि सिख को जिस परम तत्व का स्वरूप ज्ञान करना है, वह हर जगह व्याप्त और उसके अंदर ही बसा हुआ है। उसी के प्रकाश से सब प्रकाशमान हैं :

—सभ महि जोति जोति है सोइ ॥
तिस कै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥
(पन्ना ६६३)

—मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु ॥
मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रंगु माणु ॥
(पन्ना ४४१)

—काहे रे बन खोजन जाई ॥
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥
(पन्ना ६८४)

सिख के इस स्वरूप के अलावा जिस आचरण रूपी व्यक्तित्व का वर्णन हमने किया है उसका सर्वाधिक स्पष्ट प्रमाण हमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना नंबर ९७२ पर प्राप्त होता है। यह भक्त नामदेव जी का पद (शबद) है कि एक सिख को इस जगत् में किस प्रकार जीवन गुजारना चाहिए, उसका वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है :

आनीले कागदु काटीले गूडी आकास मधे भरमीअले ॥
पंच जना सिउ बात बतऊआ चीतु सु डोरी राखीअले ॥१॥
मनु राम नामा बेधीअले ॥
जैसे कनिक कला चितु मांडीअले ॥१॥रहाउ॥
आनीले कुंभु भराईले ऊदक राज कुआरि पुरंदरीए ॥

हसत बिनोद बीचार करती है चीतु सु गागरि राखीअले ॥
मंदरु एकु दुआर दस जा के गऊ चरावन छाडीअले ॥
पांच कोस पर गऊ चरावत चीतु सु बछरा राखीअले ॥
कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन बालकु पालन पउढीअले ॥
अंतरि बाहरि काज बिरूधी चीतु सु बारिक राखीअले ॥ (पन्ना ९७२)

इस शबद में भक्त नामदेव जी द्वारा, भक्त त्रिलोचन जी के सम्मुख पांच दृष्टांतों को प्रस्तुत किया गया है, जो इस प्रकार हैं :

१. जिस प्रकार एक बालक, जो पतंग उड़ा रहा होता है और अपने मित्र से वार्तालाप भी कर रहा होता है, परन्तु उसका पूरा ध्यान पतंग की डोर पर होता है।

२. जिस प्रकार, बाजार की गहमा-गहमी में शोर के मध्य एक गहने बनाने वाला सुनार, अपना ध्यान गहने की कारीगरी पर केन्द्रित रखता है।

३. जिस प्रकार एक पनिहारिन, सिर पर गगरी में पानी भरकर, अपनी सहेलियों के साथ आ रही होती है, वह अपनी सहेलियों से हंसी-ठट्‌टा, बातचीत करती है, परन्तु सारा ध्यान गगरी के संतुलन पर होता है।

४. जिस प्रकार दूर चरने गई गाय के कान, अपने नवजात बछड़े की आवाज के प्रति सचेत होते हैं।

५. जिस प्रकार पालने पर सुलाए हुए नवजात बच्चे की आहट, कुनकुनाहट पर ध्यान एकाग्र किए हुए एक मां, घर के सारे कार्य करती है।

उसी प्राकर एक साधक (सिख) को सारा जीवन, इस जगत् के सारे कार्य करते हुए अपना ध्यान उस परमात्मा पर ही केन्द्रित करना चाहिए। इस प्रकार सिख मत में, एक सिख का स्वरूप व व्यक्तित्व, आध्यात्मिक और नैतिक दोनों से मिलकर बना हुआ है, जो मध्यमार्गी और संतुलन स्थापित करने वाला हमें प्राप्त होता है।



कविता

मां ने कहा था . . .

मां ने कहा था—बेटा!
संसार में आकर्षण बहुत हैं,
तुम भटक मत जाना।
निराश-हताश मत होना,
सदा ही आस-विश्वास के दीप जलाये रखना।
तू मेरा सपूत है, सपूत बनकर रहना,
कभी भी समाज-विरोधी, कार्य मत करना,
कपूत बनकर मुझे मत लजाना।
न किसी से डरना न किसी को डराना।
आत्मघाती कदम कभी मत उठाना।
देश के काम आना, देश का नाम रोशन करना,
इंसान हो इंसानियत निभाना।
मानव हो मानवता अपनाना।
मेरे लाल! मेरे दूध को मत लजाना।
मां ने कहा था-- बेटा तुमसे बहुत अरमान हैं।
बेटा! तूने परोपकारी बनना,
आत्म-स्वार्थ तक ही न सीमित रह जाना।
देश, समाज और इससे बढ़कर कुल विश्व को,
अपना कर्म-क्षेत्र बनाना।
दुखी मानवता का दुख-दर्द बंटाना।
जरूरतमंदों की जरूरत को समझना,
यूं यह जीवन सफल बनाना।



-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, अग्रवाल न्यूज एजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)-४७०७७५

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के प्रति सत्कार का व्यवहारिक रूप

*-डॉ. सरूप सिंघ**

मानव-मात्र के सर्वपक्षीप कल्याण के लिये अकाल पुरख परमात्मा की अपार कृपा से सच्चे पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के महानतम संपादन के प्रयत्नों ने इस संसार के चिंतत लोगों को युग-युगान्तर तक अटल रहने वाले और शब्द-गुरु के रूप में लासानी ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ईश्वरीय वरदान दिया, जिसे प्रारम्भ में 'आदि ग्रंथ साहिब' का नाम दिया गया। इस महान ग्रंथ के दमदमी बीड़ नामक पावन स्वरूप में ६ सिख गुरु साहिबान के अतिरिक्त भारत के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों, धर्मों, सम्प्रदायों, भाषाओं, और संस्थाओं से सम्बन्धित, परमात्मा की स्तुति में लीन १५ भक्तों, ११ अरशी भट्टों और गुरु-घर के निकट प्रेमियों की बाणी भी शोभायमान है, जो ३१ रागों की एक क्रमबद्ध और ५८७२ शब्दों के आकार रूप में "धुर की बाणी" के रूप में संसार में विद्यमान हुई। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का भाईचारक और आध्यात्मिक फलसफा, किसी एक फिरके, जाति, बिरादरी या भाईचारे की मलकीयत नहीं। श्री गुरु अरजन देव जी के बताए अनुसार श्री गुरु ग्रंथ साहिब नामक थाल में पड़ी चार अमूल्य वस्तुएं— सत्य, संतोष, विचार और नाम ऐसी वस्तुएं हैं, जो मानवता के प्रगास का आधार हैं, इसलिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी सर्वव्यापकता, सर्वांगता, सरप्रस्ती, मजहबो-मिल्लत और देश-काल की सारी सीमाएं लांघ कर हर समय के सर्वप्रकार के जीवों के लिये सदा-सदा के लिये अगुआई करती है। ऐसा संरक्षण हमारे सौभाग्य का परिचायक है। किसी को नाम लेकर आवाज दो तो वह आगे से जरूर बोलता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी अकाल पुरख के नामों, गुणों, प्रशंसा और शक्तियों का भिन्न-भिन्न प्रकार से वर्णन किया गया है। यदि हम एकाग्रमन होकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पाठ करें और उस बाणी में दिये उपदेशों पर चलें, तो यह भी ईश्वर का नाम लेकर पुकारने वाली ही बात हैं। हमारा निश्चय सच्चे दिल से पुकारने का होना चाहिये, फिर वह मधुरभाषी सज्जन हमारी आवाज सुनकर अवश्य बोलेगा, हमारे साथ बातें करेगा और अपना सहारा देकर हमें अपना आशीर्वाद प्रदान करेगा। बस हमें अपने अन्त:करण (आत्मा) का निरीक्षण करके यही देखना है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब से जुड़ते समय क्या हम उपरोक्त कही श्रद्धापूर्ण सत्कार-भावना वाली आवस्था में होते हैं। बहुत अवस्थाओं में दुख से यही कहना पड़ता है कि नहीं, क्योंकि सांसारिक पदार्थों की लालसा ने हमारी सारी शक्तियों, विकारों और रुचियों को ऐसे लगता है कि जैसे भगवान से बेमुख कर दिया हो, जिसके परिणामस्वरूप धर्म और ईश्वर के प्रति हमारा निश्चय बहुत कम हो गया है और जो थोड़ा-बहुत है भी वह भी बस, व्यापारिक ढंग का ही है। उसमें भी अंदर ही अंदर यही लालसा काम कर रही होती है कि गुरु का दरवाजा खटखटा कर नाम का दान मांगने के स्थान पर नाशवान परन्तु लोभायमान

**५९३, अर्बन अस्टेट, फेस-२, फोकल प्वाइंट, लुधियाना-१४१०१०*

माया के सुखों की प्राप्ति के लिये ही प्रार्थना की जाये। यदि लगन और नीज़ के अनुसार इस बात को अपने ऊपर घटित कर देखें तो हम देखेंगे कि युग-युगान्तर तक अटल श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बारे में भी (कुछ एक निष्ठावान सिखों को छोड़कर) हमारा स्नेह, प्यार, सत्कार बिल्कुल रस्मी और व्यापारिक किस्म का ही बन कर रह गया है। यह ठीक है कि बहुत से अमीर लोगों ने प्रतिष्ठा की भावना से श्री गुरु ग्रंथ साहिब का स्वरूप अपने निवास स्थानों में रखा है, सेवा के लिये अंशकालीन सेवक भी मौजूद हैं, परन्तु घर के लोगों को कई बार सप्ताह-सप्ताह भर गुरु महाराज का हुक्म प्राप्त करने की फुर्सत नहीं मिलती। हां, जिस दिन कोई दिन त्यौहार हो, घर में कोई खुशी, गमी का अवसर हो, व्यापार की दशा ठीक दिखाई न देती हो, उस दिन अवश्य ही परिवार के सदस्य गुरु महाराज की हजूरी में खड़े होकर अपनी मनोकामना पूरी करवाने के लिये अरदास करते देखे-सुने जा सकते हैं। उस अरदास में प्रार्थना की भावना कम होती है और बार-बार यही कहा जाता है कि सच्चे पातशाह जी! हमारा काम निर्विघ्न समाप्त हो जाये, यह बात पूरी हो जाये, बीमार स्वस्थ हो जाये, आदि-आदि। और सब कुछ इस प्रकार बोला जाता है, जैसे किसी मुआइदे की शर्तें दुहराई जा रही हों या कोई मांग-पत्र पढ़ा जा रहा हो।

"महिमा प्रकाश" के कर्त्ता श्री सरूप दास भल्ला के अनुसार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का आदेश है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब को नांदेड़ में १७०८ ई में गुरु-पद सौंपते हुये यह भी फरमाया कि मेरी आत्मा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में और शरीर पंथ में विलीन हो गया है, इसलिये श्री गुरु ग्रंथ साहिब के सन्मुख होते समय यह सोचना चाहिये कि हम महानतम शक्ति के समक्ष खड़े हैं। छोटे से हाकिम के सामने खड़ा होना हो तो हम हाथ जोड़ लेते हैं, हमें नम्रता के, सम्मान करने के सारे ढंग आ जाते हैं, खुशामदें करनी आ जाती हैं, परन्तु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जैसे ईश्वरीय प्रकाश के सत्कार में कई बार हम अनजान और गैर-जिम्मेदार लगने लग जाते हैं और पता नहीं चलता कि हमारी निष्ठा को उस समय क्या हो जाता है! हम कुछ धन गुरु के आगे अर्पित करके समझते हैं कि हमने उसे खुश कर दिया है। यह मारी गलतफहमी है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में माया-मोह का खण्डन किया गया है, इसलिये हमें धन की ओर कम अथवा गुरबाणी की भावना की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये। ऐसा 'गुरु' की शरण में पड़ कर ही संभव है।

यदि हमने सचमुच वाहिगुरु की शरण में आकर आत्मिक आनंद प्राप्त करना है तो हमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब की भावना से ही जुड़ना पड़ेगा, व्यर्थ के वहम, रीति-रिवाजों से कोई प्राप्ति नहीं हो सकती। हमारा अहंकार ही हमें मूल श्रोत का ज्ञान नहीं होने देता। इसलिए अपने अहंकार को मार कर गुरु की शरण में जाना जरूरी है। हमें अपना मत त्यागना पड़ेगा। हमारा बचाव इसी में है कि हम गुरु के उपदेश को ग्रहण करें। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का हर शब्द हमारे जीवन में से काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार जैसे दुष्ट प्रभावों को नष्ट करके, नाम का जाप, सेवा, संतोष आदि की ओर आकर्षित करता है। इसलिये यदि हम अपने प्रति ईमानदार हैं तो हमें अहंकार रूपी पक्षी को काबू करना ही होगा, जो काम और क्रोध रूपी पंखों और मोह रूपी टांगों के सहारे उड़ता और चलता-फिरता है। इस सब कुछ के

लिये हमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आत्मिक अनुभव के साथ एकरस होना पड़ेगा, नेक कमाई के लिये संघर्ष करना पड़ेगा, बांटकर खाना, दूसरों की सहायता करना, मानवता को भगवान का अपना स्वरूप समझ कर उसकी सेवा के लिये मैदान में कूदना पड़ेगा, सेवा और जप के सागर में गोते लगाने पड़ेंगे। सरोवर के किनारे खड़े होने पर यदि हमारी परछाईं सरोवर के पानी पर पड़े तो हमारे शरीर का स्नान तो नहीं हो सकता ना? इसलिये किनारे पर खड़े होकर परछाईं के माध्यम से रस्मी स्नान करने के स्थान पर सरोवर में उतरने से ही बात बनेगी। इसलिये यदि हम परमात्मा के दरबार में पहुंचना चाहते हैं और स्वीकृति चाहते हैं, तो हमें गुरबाणी के पाठ और विचार से अगली स्टेज पर पहुंचना होगा और गुरबाणी के अनुसार व्यवहार और प्यार करना सीखना होगा तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ऐसा विश्वास पैदा करना होगा जिसका वर्णन भक्त कबीर जी ने कथन किया हुआ है कि मैं अपने गुरु पर बलिहार जाता हूं जिसने मुझे गोबिंद अथवा परमात्मा के साथ मिला दिया है। श्री गुरु अरजन देव जी ने फरमाया है :

हउ वारिआ अपणे गुरू कउ
जिनि मेरा हरि सजणु मेलिआ सैणी ॥

(पन्ना ६५२)

ऐसा करना इसलिये भी आवश्यक है, क्योंकि किसी वस्तु का विचार हमारे मस्तिष्क तक पहुंचता है, परन्तु उसका श्रद्धापूर्वक प्यार-सत्कार हृदय के द्वारा रोम-रोम में समा जाता है। इसलिये प्रभु-प्राप्ति और मिलने के लिए प्यार की स्टेज भी आवश्यक है। परिणामस्वरूप हमें बाणी दिमाग के साथ-साथ मन से पढ़नी चाहिये। एक श्रद्धालु भक्त की यही रुचि होती है। इस भावना वाले मनुष्य से गुरु दूर नहीं हो सकता, बल्कि वह तो उसके अंग-संग रहता है। चतुराई से उसे किसी ने प्राप्त नहीं किया। कुछ लोग चतुराई के साथ गुरबाणी के अर्थ अपनी सोच और आवश्यकता के अनुसार निकाल लेते हैं। ऐसे लोगों से बचना आवश्यक है। परमात्मा ने तो हमारा वैराग्य देखना है, जो अंतर मन की तरंग है। दुनिया हमारे बाहरी प्रताप को देखती है, जिसका धर्म से कोई सरोकार नहीं। इसलिए हमें स्वयं सोचना चाहिए कि हम किस ओर बढ़ रहे हैं।

शब्द-गुरु से जुड़ने में ही हमारा कल्याण है और भटकना से मुक्ति भी। इसलिए हमें आत्म-निरीक्षण करके गुरु के दामन से बंध जाना चाहिये। ईमानदारी से श्री गुरु ग्रंथ साहिब की ओर मुड़ने में ही हमारा भला है, क्योंकि यह ऐसे अमूल्य प्रवचनों का खजाना है जिसकी प्राप्ति से हमारी तृष्णा समाप्त हो सकती है और हम संतुलित और अर्थपूर्ण जीवन जीने के योग्य हो सकते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की महान रचना एक सोचे-समझे कार्यक्रम का सार्थक रूप है। यह शब्द-गुरु सारी मानवता का गुरु और पथ-प्रदर्शक है, यही कारण है कि इसके सृजन में ३६ महापुरुषों का योगदान है जो भारत के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों, धर्मों, सम्प्रदायों, भाषाओं, विश्वासों और समाजों का प्रतिनिधित्व करते हैं। शब्द-गुरु ही हमारा शिक्षा-दाता है, जिसमें गुरु की शारीरिक हस्ती विराजमान है। गुरु नानक साहिब ने शब्द को ही अपना गुरु बताया है। उनमें और अकाल पुरख में किसी प्रकार का भी भेदभाव नहीं है। गुरु साहिब का यही प्रकाश दस गुरु साहिबान में प्रकाशमान होता हुआ अन्त में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विलीन हो गया। इसलिये श्री गुरु ग्रंथ साहिब

वाहिगुरु का शाब्दिक स्वरूप हैं या ऐसे समझें कि वह स्वयं अकाल पुरख का ही रूप हैं। ऐसे परमात्मा रूपी गुरु की संगत करना हमारा पल-पल का कर्म है। सब प्रकार की बख्शिशों, दया, दृष्टि और कृपा प्रदान करने वाले इस शब्द-गुरु की शरण में आकर ही अपनी भूल-क्षमा करवानी चाहिए और हमें पूर्ण विश्वास है कि पूर्ण सतिगुरु जी अवश्य ही हमारी नासमझी को दूर कर हमें सुमति प्रदान करेंगे। पुत्र कुपुत्र हो सकते हैं, माता-पिता कुमाता-कुपिता नहीं होते। असलियत तो यह है कि अब दुनिया के एक-दूसरे के नजदीक होने से हर किसी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बहुमूल्य सर्वपक्षीय महानता के कुछ-कुछ दर्शन होने शुरू हो गये हैं। विशेष कोशिशों से इस महान बाणी और इसके उपदेशों को कम्पयूटर के इन्टरनैट सिस्टम में पाये जाने से विश्व के हर घर में इन निर्मल प्रवचनों को पढ़ा, सुना, समझा जा सकता है। मनुष्य जो शारीरिक पक्ष से विकसित और सुख-आराम का धारणी बेशक हो गया हो पर आत्मिक पक्ष से उपराम है, तनाव में है, परेशानी में है, अपने आप में ही उलझा पड़ा है। जैसे-जैसे वह इस उलझन, इस भटकन में से निकलने के प्रयत्न करता है उतना ही अपने आप को इसमें और ग्रसित हुआ अनुभव करता है। उसकी इस मन्दहाली को देखते हुये ही बीसवीं सदी का नाम 'समस्याओं की सदी' रखा गया जिससे मनुष्य को आत्मिक तौर पर बेचैनियां और आर्थिक तौर पर परेशानियां ही नसीब हुईं। मनोविज्ञानी इस सब कुछ के लिये मनुष्य की पैसे के पीछे भटकने की रुचि को ही दोष देते हैं जिसने आत्मिक तौर पर उसे पछाड़ दिया है। इस हालत में भटके हुये मानव को आत्मिक शांति और मानसिक आनंद की बहुत आवश्यकता है जो उसको भरपूर मात्रा में केवल और केवल गुरु ग्रंथ साहिब से ही मिल सकते हैं। इसलिये यह कहने में कई अतिकथनी नहीं होगी कि इस २१वीं सदी के मनुष्य को आत्मिक शांति के लिये श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ही सहारा लेना पड़ेगा क्योंकि गुरु रूपी यह इलाही ग्रंथ समूची मानवता के कल्याणार्थ प्रकाशमान हुआ है और सारे मनुष्य जगत का सही मार्गदर्शन करने की सामर्थ्य रखता है। इसलिये समूह मानवी भाईचारा जितनी जल्दी श्री गुरु ग्रंथ साहिब की तरफ प्रेरित होगा, इसका दामन पकड़ेगा, उतना ही हमारा जीवन-मार्ग सरल और आनंदमयी होगा। इस सौभाग्य वाली घड़ी को नजदीक लाने के लिए आओ! जो हम सदियों से जुगो-जुग अटल गुरु का दामन पकड़े हुए हैं, अपने शुभ अमलों, नेक व्यवहारों, निर्मल किरदारों का सदका ऐसा विस्मादमयी वातावरण सजा दें कि जो भी किसी न किसी रूप में हमारे सम्पर्क में आये, उसको अहसास होना शुरू हो जाये कि ये नानक नाम-लेवा सिख श्री गुरु ग्रंथ साहिब की टेक लेकर जीने के कारण एक विलक्षण किस्म के पवित्र इन्सान हैं जिनको जीवन को चलते रखने के लिये इनकी रगों में गुरबाणी के अमृत की धारा प्रबल रूप में निरंतर चल रही है। 

सतिगुर की बाणी सति सरूपु है गुरबाणी बणीऐ ॥
सतिगुर की रीसै होरि कचु पिचु बोलदे से कूड़िआर कूड़े झड़ि पड़ीऐ ॥
(पन्ना ३०४)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का महत्व

*–कवीशर स्वर्ण सिंघ भौर**

गुरु साहिबान द्वारा एक से दूसरे को गुरगद्दी देने के समय विरोध तो दूसरे गुरु जी के समय शुरू हुआ परंतु प्रिथी चंद ने गुरगद्दी न मिलने के कारण विरोध का अत्यंत कठोर रूप दिखाया। यह विरोध कई स्तरों पर था। प्रिथी चंद का पुत्र मेहरबान विद्वान था। उसने 'नानक' नाम तले कच्ची बाणी को रचना आरंभ किया। यह बहुत खतरनाक बात थी। कहां यह कच्ची बाणी और कहां 'धुर की बाणी'! श्री आदि ग्रंथ साहिब में दर्ज करने के लिए एकत्र की गई बाणी वे अमृतमयी वचन थे जो अकाल पुरख के बख्शे हुए थे। पावन फरमान है:

—हउ आपहु बोलि न जाणदा मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ ॥
हरि भगति खजाना बखसिआ गुरि नानकि कीआ पसाउ जीउ ॥ (पन्ना ७६३)
—ता मै कहिआ कहणु जा तुझै कहाइआ ॥ (पन्ना ५६६)

श्री आदि ग्रंथ साहिब की संपादना के समय लाहौर के रहने वाले भक्त कान्हा, सूफी फकीर शाह हुसैन, भक्त छज्जू और भक्त पीलू भी अपनी रची रचनाएं लेकर संपादित किये जा रहे पावन ग्रंथ में अंकित कराने के लिए श्री अमृतसर आये। गुरु साहिब ने इनकी रचनाएं सुनीं और उनसे स्पष्ट रूप में कह दिया कि ये गुरमति की कसौटी पर उपयुक्त नहीं हैं। वे सभी ऐसा सुनकर निराश होकर चले गए। जाने से पूर्व भक्त कान्हा जिसने गुरु साहिब की शान के विरुद्ध अभद्र शब्दावली का भी प्रयोग किया था, वह लाहौर वापिस जाते हुए रास्ते में घोड़े से गिर कर मृत्यु का ग्रास बना।

इस महान ग्रंथ में जिन भक्तों की पावन बाणी अंकित है वे भक्तजन उत्तर प्रदेश, बंगाल, महाराष्ट्र, राजस्थान, सिंध आदि प्रांतों के रहने वाले थे। श्री गुरु अरजन देव जी महाराज ने इस पावन ग्रंथ के बारे में स्वयं कथन किया है:

थाल विचि तिंनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो ॥
अंम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो ॥
जे को खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो ॥
एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरि धारो ॥
तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रहम पसारो ॥ (पन्ना १४२९)

दशम गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री आदि ग्रंथ साहिब का पुन: संपादन भाई मनी सिंघ जी की लिखारी के रूप में सेवाएं लेते हुए किया और इस पावन ग्रंथ में श्री गुरु तेग बहादर साहिब की पावन बाणी दर्ज की तो श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री रामदास जी, श्री गुरु अरजन देव जी और श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी समेत कुल छ: गुरु साहिबान की बाणी दर्ज

**गांव व डाक सरली कलां, तहसील खडूर साहिब, जिला तरनतारन (पंजाब)।*

है। भक्त साहिबान में भक्त कबीर जी, भक्त नामदेव जी, भक्त रविदास जी, भक्त सैण जी, भक्त त्रिलोचन जी, भक्त धन्ना जी, भक्त जैदेव जी, भक्त पीपा जी, भक्त सूरदास जी, भक्त फरीद जी, भक्त परमानंद जी, भक्त सधना जी, भक्त बेणी जी, भक्त रामानंद जी, भक्त भीखण जी और गुरसिखों। ११ भट्ट साहिबान हैं जिनकी बाणी को इस पावन ग्रंथ में दर्ज होने का सम्मान प्राप्त हुआ है-- भट्ट भिखा जी, भट्ट कल सहार जी, भट्ट कीरत जी, भट्ट सल जी, भट्ट भल जी, भट्ट नल जी, भट्ट बल जी, भट्ट गयंद जी, भट्ट जालप जी, भट्ट मथरा जी, भट्ट हरिबंस जी। सारे बाणीकारों की कुल गिनती ३६ है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन पन्ना १३८९ से १४०९ तक सभी भट्ट साहिबान के १२३ सवैये दर्ज हैं। इन भट्ट साहिबान के पूर्वज भट्ट भिखा जी हैं। ये सभी भट्ट श्री गोइंदवाल साहिब में गुरु-घर की शरण में आये थे। तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी के समय ये भट्ट यहां आये। भट्ट भिखा जी ने कहा है:

रहिओ संत हउ टोलि साध बहुतेरे डिठे ॥
संनिआसी तपसीअह मुखहु ए पंडित मिठे ॥
बरसु एकु हउ फिरिओ किनै नहु परचउ लायउ ॥
कहतिअह कहती सुणी रहत को खुसी न आयउ ॥
हरि नामु छोडि दूजै लगे तिन्ह के गुण हउ किआ कहउ ॥
गुरु दयि मिलायउ भिखिआ
जिव तू रखहि तिव रहउ ॥ (पन्ना १३९५-९६)

भट्ट भिखा जी को सतिगुरु जी के दर्शन करके शांति मिली। भट्ट भिखा जी ने सतिगुरु का यश गायन करके अपने मन को निर्मल किया। भट्ट भिखा जी परमार्थ के पथिक भी थे। उनके पुत्रों और भतीजों में लगन लग गई। उन्होंने बाणी रचकर और अन्य भी कई प्रकार से गुरु-घर की सेवा की। भट्ट कीरत जी छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के समय मुगलों के साथ सिखों की हुई लड़ाई में शूरवीरता के जौहर दिखाते हुए शहीद हुए थे। इन भट्टों की संतान में से कई सिख बने और सिंघ सजे और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के समय मुगलों के विरुद्ध लड़ी गई लड़ाइयों में शूरवीरता दिखाते हुए शहीद हुए। भाई केसो सिंघ, भाई हरी सिंघ, भाई देवा सिंघ आदि आलोवाल के स्थान पर नाज़म असमत खां के हुक्म से धरती में गाढ़कर शहीद किये गए। इन शहीद भट्टों का जिक्र महान विद्वान खोजी प्रोफेसर प्यारा सिंघ पदम ने किया है।

श्री गुरु अरजन देव जी ने *"पोथी परमेसर का थानु"* कथन करके और अत्यंत ऊंचे सत्कार की निज उदाहरण से सिखों को श्री आदि ग्रंथ साहिब का सत्कार करना सिखाया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी कई क्षेत्रों में मनुष्य-मात्र की अगुआई करती है। सेहत विज्ञान के क्षेत्र में भी यह पावन बाणी मनुष्य को सही दिशा देती है। यह पावन बाणी हमें बताती है कि मनुष्य के शरीर में से अधिक रोग काम और क्रोध की बुरी भावनाओं से उत्पन्न होते हैं जो अत्यंत नुकसानदेय हैं, जैसे :

कामु क्रोधु काइआ कउ गालै ॥
जिउ कंचन सोहागा ढालै ॥ (पन्ना ९३२)

गुरबाणी प्रभु-नाम जपने के साथ-साथ ईमानदारी की किरत करने, बांट कर खाने को उत्तम मानती है। पावन फरमान है :

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥

नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)

हमें दिशा-निर्देश है कि हमें अपनी धर्म की कमाई में से गर्जमंदों अथवा जरूरतमंदों को भी कुछ अवश्य देना चाहिए। सच्ची किरत-कमाई से जहां हमारा संसार में ठीक जीवन-यापन होता है वहां प्रभु के दर-घर में भी हमारी पूछ-प्रतीत होती है, हमें जीवन का सही रास्ता मिल जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पावन बाणी हमें दिशा देती है कि माया मात्र जीवन-यापन करने और जरूरतमंदों की सहायता के लिए लाभदायक है। माया का लोभ अथवा तृष्णा बुरी तथा नुकसानदेय है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सरबत्त के भले की कामना की गई है :

—जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥
(पन्ना ८५३)

—सभे जीअ समालि अपणी मिहर करु ॥
अंनु पाणी मुचु उपाइ दुख दालदु भंनि तरु ॥
अरदासि सुणी दातारि होई सिसटि ठरु ॥
लेवहु कंठि लगाइ अपदा सभ हरु ॥
(पन्ना १२५१)

बाणी ब्रह्मज्ञान का भंडार है। यह पिता-दादे की ओर से बख्शा गया अमूल्य खजाना है:

पीऊ दादे का खोलि डिठा खजाना ॥
ता मेरै मनि भइआ निधाना ॥
रतन लाल जा का कछू न मोलु ॥
भरे भंडार अखूट अतोल ॥
खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥
तोटि न आवै वधदो जाई ॥ (पन्ना १८६)

किसी अच्छी से अच्छी स्वादिष्ट संसारी वस्तु हमें बार-बार खाने से पहले वाली संतुष्टि नहीं देती। यही एक पावन बाणी है जिसको जितनी बार भी हम सुनते हैं इसका रस बढ़ता ही जाता है। यह बाणी हमें सहज स्वभाव ही प्रभु-नाम में विलीन कर देती है :

सोरठि सो रसु पीजीऐ कबहू न फीका होइ ॥
नानक राम नाम गुन गाईअहि दरगह निरमल सोइ ॥ (पन्ना १४२५)

सभी जीवों का सांझा पिता स्वयं प्रभु परमात्मा सृजनहार है। एक ही मिट्टी से हाथी, चींटी, पशु, पक्षी, मनुष्य-मात्र और वनस्पति उपजी है, यह तथ्य भी हमें बाणी समझाती है। हमें बाणी बताती है कि परमात्मा सभी में व्याप्त है :

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै ॥
राम बिना को बोलै रे ॥
एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे ॥
असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु समाना रे ॥ (पन्ना ९८८)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय सिख धर्म बहुत प्रफुल्लित हुआ। गुरु जी ने खालसा पंथ सजाया और सिखी की चढ़ती कला सुनिश्चित की, वक्त के अत्याचारी प्रबंध के विरुद्ध जोरदार संघर्ष किया। १४६९ ई. में पैदा हुआ धर्म विश्वव्यापी धर्म बना। गुरु जी ने तलवंडी साबो में आकर कमरकसा खोला। इस प्रकार यह धरती दमदमा साहिब कहलाई। इसका मूल श्री गुरु ग्रंथ साहिब हैं। तलवंडी साबो में गुरु जी ने भाई मनी सिंघ जी की सेवाएं लेते हुए आदि ग्रंथ साहिब का पुन: संपादन किया :

अब दरबार दमदमा जहां।
तंबू लगवाकै गुर तहां।
मनी सिंघ को लिखन बठैकै।
गुरु नानक का धिआन धरै कै।

नित प्रति गुरू उचारी जैसे।
बाणी लिखी मनी सिंघ तैसे।
(पंथ प्रकाश, कृत ज्ञानी ज्ञान सिंघ, पन्ना ३१९)

यहां गुरु जी ने भाई डल्ले को अमृत की पाहुल दी। भाई भगतू जी के रिश्तेदारों और भाई तखतू, भाई बखतू, भाई रामा, भाई रूपे के पौत्रों— भाई धरम सिंघ, भाई परम सिंघ आदि को अमृत की दात प्राप्त हुई जिसका जिक्र ज्ञानी ज्ञान सिंघ कृत 'पंथ प्रकाश' में मिलता है :

संगत लगी गुरू ढिग आवन।
सतगुरु अंम्रत लगे छकावन।
भाई भगतू के सब नाती।
सजे सिंघ आकर बखिआती।
तखतू, बखतू, राम म्रिगेस।
फते सिंघ बुढा सिंघ वेस।
पुन भाई रूपे के पोते।
धरम परम सिंघ आए ओते।
राम सिंघ पुन सिंघ तलोका।
सजे फूल के सिंघ बिसोका।
डल्ले आदिक साबो केहैं।
सिंघ सजे छक सुधा तबेहैं।
और बिअंत सिख मलवई।
खंडे पाहुल गुरु तै लई ॥१३॥ (पृष्ठ ३१६)

श्री दमदमा साहिब में गुरु जी ने गुरबाणी की टकसाल चलाई। इस स्थान की सेवा बाबा दीप सिंघ जी को सौंपी। बाबा दीप सिंघ जी ने पावन दमदमी स्वरूप के चार उतारे किये जो चारों तख्त साहिबान पर सुशोभित हुए। दशम गुरु जी द्वारा पुनः संपादित पावन दमदमी बीड़ के स्वरूप का ही हर गुरुद्वारा साहिब में प्रकाश होता है। गुरु जी ने ज्योति जोति समाने से एक दिन पूर्व तख्त सचखंड श्री हजूर अबिचल नगर साहिब, नांदेड़ के पावन स्थान पर सन् १७०८ ई को इस पावन स्वरूप को गुरु-पदवी प्रदान की और देहधारी गुरु-परंपरा को समाप्त कर दिया तथा फरमान किया कि हमारा शरीर पंथ में और आत्मा ग्रंथ में सदैव विद्यमान रहेंगे। जिसको हमारे दीदार करने की चाह हो वह श्रद्धा व विश्वास के साथ पंथ और ग्रंथ में हमारे दीदार करे, उसको हमारे दीदार होंगे :

आगिआ भई अकाल की तबै चलायो पंथ।
सब सिक्खन को हुकम है गुरू मानीओ ग्रंथ।
गुरू ग्रंथ को मानीओ प्रगट गुरां की देह।
जो प्रभु को मिलबो चहे खोज सबद मैं लेह।
सब गुरू परगट भए पूरन हरि अवतार।
जगमग जोत बिराजही श्री गुरु ग्रंथ मझार।
जो दरसयो चहि गुरू को सो दरसै गुरु ग्रंथ।
पढै सुनै सारथ लहै परमारथ को पंथ।
वाहिगुरू गुरु ग्रंथ जी उभै जहाज उदार।
जो सरधा सेवहै सो उतरै भव पार।
(पंथ प्रकाश, पृष्ठ ३५३)

खेद की बात है कि आज भी बहुत ज्यादा अंधविश्वासी लोग ऐसे हैं जो सिख स्वरूप में भी देहधारी गुरुडम के पीछे भाग रहे हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ३०० साला गुरुता-गद्दी का अवसर ऐसा अवसर है जिस पर हम सभी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब का दामन पकड़ना चाहिए और सही मायनों में गुरु का सजाया सिख पंथ तथा खालसा पंथ बनना चाहिए। आओ! अरदास करें :

सतिगुर आइओ सरणि तुहारी ॥
मिलै सूखु नामु हरि सोभा चिंता लाहि हमारी ॥
(पन्ना ७१३)



ੴ : परमात्मा एक है

-स. गुरबख्श सिंघ 'प्यासा'*

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि मनुष्य की आस्था का उद्गम-बिन्दु भय है। प्रारम्भ में प्रकृति के भिन्न-भिन्न रूप मनुष्य की आस्था के प्रतीक बने एवं उसके द्वारा पूजे जाने लगे। जो आज भी किसी न किसी रूप में विद्यमान हैं। कालांतर में ज्ञान के बढ़ने के साथ वह इस निर्णय पर पहुंचा कि इस संसार को चलाने वाली कोई अदृश्य शक्ति है जो मानवी समझ से परे है। एक ऐसे सूत्रधार की कल्पना, जो कल से परे है, जो निराकार होते हुए भी नियंता है।

सनातन धर्म में वह शक्ति 'ब्रह्म' कहलायी, तो इस्लाम में 'अल्लाह'। ईसाई मत में उसे **'God'** माना गया। सनातन धर्म में उस शक्ति को 'ओंकार' का नाम दिया गया। काल के प्रवाह में ऐसा मोड़ आया कि उस निराकार को आकार-बद्ध कर दिया गया। करता (कर्ता), भरता और हरता के रूप में अलग-अलग रूपों में विभक्त कर दिया गया। फिर बहुदेववाद और अवतारवाद ने अपनी जड़ें जमा लीं। जैसे-जैसे देवताओं की संख्या बढ़ती गयी आस्था और विश्वास बंटते गये।

इसी तरह अन्य धर्मों में भी 'एक' की भावना क्षीण होती गयी। धार्मिक संप्रदाय मानव-मानव को जोड़ने के स्थान पर तोड़ने की भूमिका निभाने लगे। धर्म के नाम पर असंख्य निर्दोष प्राणियों का खून बहाया गया। ऐसे लगने लगा जैसे 'एकै' की नदी, अलगाव के मरुस्थल में लुप्त हो गयी हो और चारों ओर धर्म के स्थान पर अधर्म तांडव-रत हो।

श्री गुरु नानक देव जी ने मनुष्य की इस अधोगति का गहराई से अध्ययन किया। उस समय के मुख्य मत-मतांतरों का जायजा लेने और विचार-विमर्श करने के बाद वे इस नतीजे पर पहुंचे कि मानव की इस दारुण अवस्था का मुख्य कारण, उसका 'एक' से दूर होते जाना है। चाहे कुछ धार्मिक मतों में सूत्र रूप में उस 'एक' का विधान तो है, परन्तु व्यवहारिक रूप में धार्मिक मत, मात्र कर्म-काण्ड, आडम्बर और स्वार्थ-सिद्धि के पर्याय बन कर रह गये हैं। इसलिए उस **'ੴ'** का सर्वकालिक अर्थ दृढ़ करवाने के लिए **'ੳ** से पहले १' के अंक द्वारा स्थाई-मूल्य प्रदान करने के लिए **'ੴ'** को '१' के रूप में प्रख्यान किया और इस **'ੴ'** को सिख धर्म की धुरी के रूप में स्थापित किया एवं मूल-मंत्र में इस प्रकार परिभाषित किया:

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

'ੴ' के प्रति एक अन्य शब्द में आपका फरमान है:

एकंकारु अवरु नही दूजा नानक एकु समाई ॥
(पन्ना ९३०)

इसी प्रकार पांचवें सतिगुरु श्री गुरु अरजन देव जी का पावन वचन है:

एकंकारु एकु पासारा एकै अपर अपारा ॥
एकु बिसथीरनु एकु संपूरनु एकै प्रान अधारा ॥
(पन्ना ८२१)

*22, Prabhu Park Society, Near- Asopalav Society, Old Chhani Road, Vadodara

पारब्रह्म का निर्गुण स्वरूप मनुष्य की बुद्धि से परे है, इसलिए उसे अगम, अगोचर और अपरंपर कहा गया है, इसीलिए उसे सत्य के रूप में दृढ़ करवाया है। उसने अपने सर्गुण स्वरूप द्वारा इस संसार की रचना की है। परन्तु वह रचनाकार होकर भी अपनी रचना से निर्लेप है। श्री गुरु अरजन देव जी ने इस भाव को इस प्रकार व्यक्त किया है:

निरंकार आकार आपि निरगुन सरगुन एक ॥
एकहि एक बखाननो नानक एक अनेक ॥
(पन्ना २५०)

सही अर्थों में सिख धर्म की विलक्षणता का मूलाधार यह **'ੴ'** ही है।

श्री गुरु अरजन देव जी ने जब सर्व-सांझे श्री आदि ग्रंथ साहिब की संपादना की तो प्राप्त रचनाओं की चयन की कसौटी यह **'ੴ'** ही था। १२वीं से १७वीं शताब्दी में फैले इसके बाणीकारों ने इसी 'एकै' का ही यशोगान किया है। इसी ज्ञान-सागर को ही श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने १७०८ ई में देहधारी गुरु-प्रथा को विराम देते हुए सर्व-मानवता के कल्याणार्थ "शब्द-गुरु" के रूप में पदासीन किया।

उस निर्गुण सत्य-स्वरूप **'ੴ'** के अन्य प्रचलित नाम उसके किरतम अर्थात गुणवाचक नाम हैं।

यह एक अटल सत्य है कि वह सबका पिता है और जब वह सबका पिता है, हम सब में उसी का नूर है तो फिर ऊंच-नीच, जात-पात एवं लिंग के आधार पर यह भेदभाव क्यों? और ये धर्म**!** यह तो सत्य-स्वरूप को जानने और सत्याचारी बन कर उसमें अभेद होने के साधन मात्र हैं। धर्म का अर्थ ही है जो धारण किया जा सके, जिसके आलोक में हम अपने आप को पहचान सकें, अपने मूल से जुड़ सकें। धर्म की इससे सरल और व्यवहारिक परिभाषा क्या हो सकती है? श्री गुरु अरजन देव जी के शब्दानुसार:

सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥
हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥ (पन्ना २६६)

यह थोथे कर्मकाण्ड धर्म नहीं, आडम्बर हैं। इस **'एकै'** की भावना को हृदयंगम करने के लिए संगत और पंगत का प्रावधान किया। **'संगत'** जहां बिना किसी भेदभाव के उसके नाम-सुमिरन, कथा-कीर्तन द्वारा उससे जुड़कर सदाचारी एवं सत्याचारी बनने की प्रेरणा मिलती रहे और **'पंगत'** अर्थात सांझा लंगर, जिसमें सब एक पंगत में बैठकर भोजन ग्रहण कर सकें जिससे सदियों से चली आ रही छुआ-छूत की बीमारी दूर हो सके और बंधुत्व की भावना पनप सके।

इसके अतिरिक्त नि:स्वार्थ सेवा को महत्त्व प्रदान किया गया। लोकाई की सेवा को प्रभु की सेवा माना गया क्योंकि वह सृष्टि-कर्ता घट-घट में समाया हुआ है। उसको पाने के लिए हउमै (अहम) का त्याग करना होगा और उसकी रजा को सर्वोपरि मानना होगा। ये थे सहज जीवन जीने के व्यवहारिक सूत्र, जीवन-मुक्त होने के अचूक साधन।

यह **'ੴ'** ऐसा दिशा-सूचक यंत्र है जिसकी उंगली थामने से दिशा-भ्रमित होने का कोई अंदेशा (भय) नहीं, ईर्ष्या, द्वेष एवं घृणा के पनपने का कोई प्रश्न ही नहीं। जहां परोपकार की भावना होगी वहां स्वार्थ कैसे सिर उठायेगा? सरबत्त के भले के संकल्प से ही स्थाई सुख एवं शान्ति संभव है।

आज यदि हम आत्म-निरीक्षण करें तो पायेंगे कि हमने मानव होने का धर्म नहीं निभाया। यदि पड़ोस में आग लगी हो तो हम

(शेष पृष्ठ ९२ पर)

पारिवारिक तनाव का मूल कारण विकृत अहम्

-श्रीमती प्रतिभा शर्मा, श्री खुशी राम शर्मा*

मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥
(पन्ना ४७०)

श्री गुरु नानक देव जी का यह महावाक जीवन की मूल सच्चाई की ओर इंगित करता है कि नम्रता सभी गुणों का मूल तत्व है। जिस मन में नम्रता बस जाती है वह उज्जवल, शांत और सुखमय हो जाता है। नम्रता, जीवन के प्रति हमारे विश्वास को दृढ़ करती है। हमारे मन में आस्था और सहजता का संचार होता है। हमारे आत्मिक पटल का इतना विस्थार होता है कि हम सारे जगत को अपना समझने लगते हैं, फिर परोपकार वृत्ति जागृत होती है, समभाव और सहभाव से हमारा व्यवहार प्रकाशमान हो जाता है। जिस वृक्ष को फल लगा होता है वही झुकता है। जिस व्यक्ति के पास यह गुण होता है उसी के व्यवहार में शालीनता होती है। भक्त कबीर जी ने कहा है कि मनुष्य को जीवन में अपना समस्त अहम् छोड़कर परमात्मा के प्रति पूर्ण समर्पण करना योग्य है। सभी में वह प्रभु परिलक्षित है :

कबीर तूं तूं करता तू हुआ मुझ महि रहा न हूं ॥
जब आपा पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू ॥
(पन्ना १३७५)

श्री गुरु नानक देव जी ने आसा की वार में हमें समझाया है:

सभु को निवै आप कउ पर कउ निवै न कोइ ॥
धरि ताराजू तोलीऐ निवै सु गउरा होइ ॥
(पन्ना ४७०)

अर्थात् जो व्यक्ति नम्र है वही गौरवमान होता है।

अहम्-भाव नम्रता का विरोधी भाव है। जहां विकृत अहम् है वहां नम्रता नहीं हो सकती। ऐसा नहीं कि अहम् का जीवन में कोई स्थान ही नहीं है। आधुनिक मनोविश्लेषकों, जिनमें फराइड, ऐडलर और युंग प्रमुख हैं, का मत है कि अहम् हमारे मन की मूल शक्ति है। परन्तु इसका विकृत रूप बेकाबू शक्ति रखते होते हुए विनाशकारी है। इसकी स्थिति अग्नि जैसी है। अग्नि जब ज्योति रूप में प्रज्वलित होती है तो हमें प्रकाश देती है, चूल्हे में जलती है तो परिवार के लिए कल्याणकारी होती है, अगर घर अथवा मकान को लगती है तो सब कुछ पल भर में जला कर राख कर देती है। यही स्थिति अहम् की है। अहम् जब अहंकारी हो जाता है तो विनाश का कारण बनता है। विद्वान और ज्ञानवान रावण का अहम् जब अहंकार रूप में विकृत हो गया तो उसका सारा ज्ञान और विद्वता का नाश हो गया। उसका अपना परिवार और वह स्वयं अहंकार की ज्वाला में जल कर राख हो गया।

आजकल मध्यवर्गीय तथा उच्चवर्गीय परिवारों में कलह, कलेश का मुख्य कारण अहम् का विकृत रूप ही है। आज भी अधिकतर मर्द प्रधान समाज होने के नाते आदमी हमेशा ही अपने आप को बड़ा समझता आया है। इससे वो अहम्-भाव के मनोविकारों का शिकार हो रहा है। सामंतवादी युग का यह सामाजिक और पारिवारिक मनोविज्ञान आज भी आदमी को जीने नहीं देता। औरत चाहे कितनी भी ठीक हो, चाहे कितनी भी समझदारी की बात करे, मर्द यह कह कर दबा देता है कि तू औरत है। तुझे क्या पता है? तू रोटी आदि तैयार कर। मर्दों के मामलों में औरतों का क्या काम? ऐसी बात सुनकर औरत प्राय: चुप हो जाती है। परंतु उसकी

*गुरु नानक मार्केट, जालंधर रोड़, बटाला (गुरदासपुर)-१४३५०५

चुप्पी का प्रभाव परिवार के वातावरण को बिगाड़े बिना नहीं रह सकता।

आधुनिक युग स्त्री के सशस्तीकरण का युग है। सामन्तवादी सोच का स्थान लोकतांत्रिक विचारों ने ले लिया है। कुछ बदली परिस्थितियों में औरत घर के बाहर खुले में सांस ले रही है। घर की आर्थिकता में उसका काफी योगदान है परन्तु फिर भी आदमी की सामन्तवादी सोच औरत की स्वतंत्रता और उसके अधिकारों को सहन् नहीं कर पाती। शिक्षा, ज्ञान और आर्थिक स्वतंत्रता के कारण औरत के मनोभावों में बहुत बदलाव आ गया है। उसकी स्वतंत्र विचारधारा उसके व्यवहार में परिलक्षित हो जाती है। स्वतंत्र व्यक्तित्व विकास अपनी पहचान की मांग करता है जिससे उसके अंदर भी अहम् का विकृत रूप जागृत होने लगता है। अहम् और अहंकार से तने हुए दो व्यक्तित्वों (पति-पत्नी) का आपसी टकराव आरंभ हो जाता है जो परिवार में तनाव का कारण बनता है।

पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव भी किसी सीमा तक इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है। पश्चिम, विशेषकर अमेरिका में पति-पत्नी और बच्चों को समाज की मूल इकाई नहीं समझा जाता। वहां तो व्यक्ति स्वतंत्र रूप से समाज की प्राथमिक इकाई है, जबकि हमारे पूर्वी समाज में ऐसा नहीं है। परिवार ही हमारे समाज की मूल इकाई है। पश्चिम के इस प्रभाव के कारण भी पति-पत्नी के आपसी रिश्तों में तनाव आता है। यह तनाव धीरे-धीरे बच्चों के मन में भी संचार कर जाता है। यूं बच्चे भी मानसिक दबाव के शिकार हो जाते हैं। शिक्षा का यह प्राथमिक नियम है कि अध्यापक जो बोलता है, विद्यार्थी उसे चाहे न सुने पर वह जो कहता है विद्यार्थी उसे ध्यान से देखता है, उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। यही नियम परिवार में भी लागू होता है। बच्चे चाहे जितने भी छोटे हों, मां-बाप के व्यवहार को नजदीक से देखते हैं। पति-पत्नी में जो मनमुटाव होता है उसका असर बच्चों पर पड़े बिना नहीं रह सकता। घर में एक मानसिक युद्ध की स्थिति बनी रहती है। रिश्तों की भावात्मक सांझ और मानसिक समरसता का स्थान आपसी वैर-विरोध ले लेता है, जो देखने में तो सूक्ष्म होता है पर उसका प्रभाव बहुत गहरा और स्थूल होता है।

कई बार बुजुर्ग भी अपने अहम्-अहंकार के कारण परिवार के शांत वातावरण को दूषित कर देते हैं। उनका व्यवहार ऐसा होता है जैसे वे घर के मुख्य अधिकारी हैं। इसी सोच में बुजुर्गों और बच्चों में मानसिक कलह-कलेश जन्म लेता है।

पारिवारिक शांति के लिए यह जरूरी है कि हम सहजवादी बनें। परिवार के सभी सदस्यों के मन में सहभाव, समभाव, अस्तित्व के भाव बनें जिससे वे एक-दूसरे को समझें, जानें और एक-दूसरे के होकर रहें।

घर के कार्यों को साझे तौर पर करते रहना बहुत जरूरी है। दूसरे को विश्वास में लेकर चलते रहने से मन का तनाव दूर हो जाता है। इसके साथ-साथ नम्रता का होना बहुत जरूरी है। घर में सभी छोटे-बड़े चाहे नौकर ही क्यों न हों, के प्रति हमारा व्यवहार प्रेमभाव से परिपूर्ण होना चाहिए। किसी को छोटा नहीं समझना चाहिए।

प्रेम एक ऐसा भाव है जो विकृत अहम् के डंक को तोड़कर हमारे मन में सहजता का संचार करता है। प्रेम वास्तव में हमारे निजी, सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन का मूल आधार है। दो कवियों के महावचनों के साथ मैं इस निबंध का अंत करता हूं। मध्यकालीन हिंदी कवि रहीम ने कहा है :

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाए।
टूटे तो जुड़े नाहीं, जुड़े गांठ पड़ जाए।

महाकवि रवीन्द्र नाथ टैगोर ने कहा कि मुझे हैरानी होती है कि लोग नफरत के लिए समय कहां से निकाल लेते हैं जबकि जिंदगी तो प्रेम करने के लिए ही बहुत थोड़ी है!





विवाह और दहेज

-डॉ. दादूराम शर्मा 'कोविद'*

'परिणय' तो है दो हृदयों की प्रणय-ग्रंथि,
'पाणि ग्रहण' सुख-दुख में साथ होना है।
बांधता 'विवाह' दो, कुलों को प्रेम-सूत्र में है,
अपनों की सेवा में अहं को निज खोना है।
कर्त्तव्यों की वेदिका पर, स्वार्थों की बलि चढ़ा,
स्नेह-सलिल से, मल मनों के धोना है।
सभी स्वजनों के मन-माणिक्यों को सप्रयत्न,
अनुराग के अटूट सूत्र में पिरोना है।
'दहेज' क्या है? पिता द्वारा पुत्री को स्नेहमयी,
सहर्ष दिया गया, प्रणय-उपहार है।
या सामाजिक व्यवस्था में, पैतृक सम्पत्ति पर,
बिटिया का होता जो, सहज अधिकार है।
दहेज नहीं वर द्वारा वधू के पिता को,
लूटने का धारदार कोई हथियार है।
विवाह नहीं वर की खरीद का आयोजन,
यह एक पवित्र सामाजिक संस्कार है।
स्मरण है मुझे जब मेरा था विवाह हुआ,
जो भी मिलता सस्नेह, सबको स्वीकार था।
दहेज के नाम पर, होता न था सौदा कहीं,
न वर था बिकाऊ, न विवाह ही बाजार था।
कन्या का जन्म तब, नहीं था अभिशाप कोई,
बिटिया का बाप भी, न आज-सा लाचार था।
मुफ्त का धन पाने की, मन में दुरिच्छा जगी,
निर्लोभता का मिटा, जो पुरातन संस्कार था।
सत्कारी जातीं नारियां थीं, जहां कभी वहीं आज,
दहेज-लोभी दानव, वधुओं को जला रहे।
ध्वस्त कर मानवता की समस्त मर्यादाएं,
दानवता दर्शा रहे, बढ़ा रहे दृढ़ा रहे।
वे भी किसी कन्या के हैं, मां-बाप, भाई-बहन,
लोभ में हो अंधे, इस तथ्य को भुला रहे।
अपनी लाडली के भी, वैवाहिक जीवन में,
स्वयं अमंगल को, अविवेकी बुला रहे।
वर बन बिकने को, खड़े हो बाजार में जो
पौरुष को तुम्हारे निर्लज्जो! धिक्कार है!
पाओ निज बाहुबल से, पाना जो चाहते हो,
टपकती क्यों दूसरों का, धन देख लार है?
कलेजे का टुकड़ा दे, करते जो कृतार्थ तुम्हें,
और देते जीवन का, सुदृढ़ आधार है।
पाकर अर्द्धांगिनी, होंगे पूर्ण तुम,
गौरव मिले पिता का, ये अमूल्य उपहार है।
सासो! जरा सोचो, तुम भी मां हो किसी बेटी की,
ननदो! तुम भी, कहीं वधू बन जाओगी।
बो रहीं जो विष-बीज, बहू और भाभी हेतु,
आगे चल उसका फल, तुम भी तो पाओगी।
कहोगी किससे तब, वेदना मन की कहो?
अपने कुकर्मों पर, बैठी पछताओगी!
"भारतीय नारी है, ममता-करुणा की मूर्ति",
क्या इस मान्यता पर पानी फेर जाओगी?
साध्य बना जो धन, साधन फिर बन जाए,
मानसों को जोड़े फिर, प्रेम की सुधा-धार।
सोई मनुष्यता, फिर जाग उठे शक्ति या,
विनाशक दानवता का, कर दे संहार।
पति मानें पत्नियों को, अपने प्राणों से प्रिय,
बहुएं पाएं बेटी-सा, सास-ससुर से प्यार।
नरक बन रही धरा, स्वर्ग बने फिर से,
ये भेंट ले खोले, यह सदी प्रगति-द्वार। 

*प्राध्यापक, महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१

गुरबाणी राग परिचय-१३

रागु जैतसरी, रागु टोडी तथा रागु बैराड़ी

*-स. कुलदीप सिंघ**

राग जैतसरी, राग टोडी तथा राग बैराड़ी का अध्ययन एक साथ किया जा सकता है। इन तीनों रागों में बाणी का विस्तार २५ पन्नों में है। इनमें श्री गुरु नानक देव जी तथा श्री गुरु अमरदास जी की बाणी नहीं है।

गुरमति संगीत के अनुसार जैतसरी अन्य रागों से भिन्न रागिनी है। इसमें देसी टोडी, गौरी और विभास राग का मिश्रण है। भाई काहन सिंघ नाभा के कोश में दिये मत के अनुसार जैतसरी पूरबी थाट की औढ़व सम्पूर्ण रागिनी है।

जैतसरी राग में कुल तीस शब्द हैं, जिनमें श्री गुरु रामदास जी के ११, श्री गुरु अरजन देव जी के १६ तथा श्री गुरु तेग बहादर जी के ३ शब्द हैं। श्री गुरु रामदास जी के घर १ में अंकित ६ शब्द हैं। प्रथम दो शब्दों में नाम-रत्न का विवेचन है। गुरु के द्वारा मस्तक पर हाथ रखने से मेरे हृदय में नाम-रत्न बस गया है। नाम-रत्न की प्राप्ति से कई जन्मों के कृत कर्मों के ऋण से उऋण हो गया हूं और पाप टल गये हैं। नाम रूपी रत्न या हीरे की कीमत एक भक्त-ग्राहक ही जानता है, नहीं तो इसका मूल्य एक तिनके के बराबर है। जब गुरु इसका साधू या गुरमुख-ग्राहक देखता है तब इस रत्न के मूल्य का अंकन नहीं होता। प्रभु ने प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में इस रत्न को रखा हुआ है। गुरु के मिलने पर इस हीरे की परख होती है:

मेरै मनि गुपत हीरु हरि राखा ॥
दीन दइआलि मिलाइओ गुरु साधू गुरि मिलिऐ हीरु पराखा ॥ *(पन्ना ६९६)*

मानव मन माया में उलझा रहता है। वह अपने स्वार्थ के जो-जो कर्म करता है उनसे स्वयं ही बंध जाता है। वह प्रभु की खोज अपने अंदर नहीं करता, वन में खोजने को दौड़ता है। वह प्रभु-रत्न की हृदय में उपस्थिति से अनजान रहता है और जन्म व्यर्थ गंवा देता है :

रतनु रामु घट ही के भीतरि ता को गिआनु न पाइओ ॥
जन नानक भगवंत भजन बिनु बिरथा जनमु गवाइओ ॥ *(पन्ना ७०३)*

राग जैतसरी में श्री गुरु अरजन देव जी के ३ छंद हैं, जिनमें से दो छंदों में प्रत्येक पद के साथ श्लोकों का अंकन है। श्लोक (दोहे) के अर्थ की व्याख्या की गई है। जैतसरी राग की वार में भी इसी प्रकार की शैली है। इस वार में २० पउड़ी छंद हैं। यह वार श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित है। प्रत्येक पउड़ी के साथ दो-दो श्लोक दिये गये हैं। इन श्लोकों की रचना भी श्री गुरु अरजन देव जी ने की है। प्रथम श्लोक की भाषा संस्कृतनिष्ठ है जबकि दूसरे श्लोक की भाषा मुलतान क्षेत्र की पंजाबी है। श्लोकों के भाव की व्याख्या पउड़ी छंद में की गई है।

उक्त कथन के उदाहरण के रूप में पउड़ी क्रमांक ११ में संस्कृत श्लोक में विषय-रस

**C/o S. Gurmeet Singh, H-230/MDC/Sec-5, Shikhar Apartment, Panchkula*

(बिख-रस) और नाम-रस की तुलना की गई है। सतसंग में मिला नाम-रस मीठा है। इसकी पुष्टि मुलतान की पंजाबी भाषा में है तथा व्याख्या पउड़ी छंद में है :

हरि बिनु कछू न लागई भगतन कउ मीठा ॥
आन सुआद सभि फीकिआ करि निरनउ डीठा ॥ (पन्ना ७०८)

परमात्मा के नाम के बिना भक्तों को कोई चीज मीठी नहीं लगती। उन्होंने छानबीन करके देख लिया है कि नाम के बिना सारे स्वाद फीके हैं।

राग जैतसरी के बाद राग टोडी की बाणी अंकित है। राग माला के अनुसार टोडी दीपक राग की रागिनी है। इस राग का गायन आसावरी और आसा को मिलाकर दीपक राग की छाया में होता है।

टोडी राग में कुल ३५ शब्द हैं, जिनमें ३० शब्द श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित हैं। एक शब्द श्री गुरु रामदास जी तथा एक शब्द श्री गुरु तेग बहादर जी का है। अंत में तीन शब्द भक्त नामदेव जी के हैं।

राग टोडी के आरंभ में श्री गुरु रामदास जी का प्रभु-दर्शन की अभिलाषा सम्बंधी शब्द है। फिर उसी सन्दर्भ में श्री गुरु अरजन देव जी ठाकुर से नाम का ही दान मांगते हैं, हे प्रभु! मुझे आपका गुण-कीर्तन मिले, क्योंकि इसके सिवा कुछ मेरे साथ नहीं जायेगा।

मागउ दानु ठाकुर नाम ॥
अवरु कछू मेरै संगि न चालै मिलै क्रिपा गुण गाम ॥ (पन्ना ७१३)

गोबिंद के भजन के बिना माया तिनकों की आग, मेघ की छाया और बाढ़ के पानी के समान है। हे माई! यह माया तो निरा छल है:

माई माइआ छलु ॥
त्रिण की अगनि मेघ की छाइआ गोबिद भजन बिनु हड़ का जलु ॥ (पन्ना ७१७)

राग टोडी के बाद राग बैराड़ी में रचित बाणी अंकित है। बैराड़ी सिरीरागु की रागिनी है। यह रागिनी सिरी और सारंग के मिलने से बनती है। बैराड़ी राग में श्री गुरु रामदास जी के छ: शब्द तथा श्री गुरु अरजन देव जी का एक शब्द है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पूर्वार्द्ध सरस व सरल शब्द के साथ पूर्ण होता है :

संत जना मिलि हरि जसु गाइओ ॥
कोटि जनम के दूख गवाइओ ॥१॥रहाउ॥
जो चाहत सोई मनि पाइओ ॥
करि किरपा हरि नामु दिवाइओ ॥१॥
सरब सूख हरि नामि वडाई ॥
गुर प्रसादि नानक मति पाई ॥ (पन्ना ७२०)



तू आपि सचा तेरी बाणी सची आपे अलखु अथाहा हे ॥
(पन्ना १०५७)
गुरबाणी वरती जग अंतरि इसु बाणी ते हरि नामु पाइदा ॥
(पन्ना १०६६)

गुरबाणी चिंतनधारा-२४

जापु साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ मनजीत कौर**

इंद्रान इंद्र ॥ बालान बाल ॥
रंकान रंक ॥ कालान काल ॥९०॥

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी उस ईश्वर की स्तुति करते हुए उसे सर्वोच्च हस्ती मानते हैं। गुरु पातशाह का फरमान है कि वह परमात्मा देवताओं के राजा इन्द्र का भी राजा है अर्थात् वह राजाओं में भी सर्वोत्तम राजा है। गुरदेव उसको संबोधन करते हैं कि तू बलशालियों से भी बालशाली है अर्थात् तू श्रेष्ठतम है। तू कंगालों से भी कंगाल है अर्थात कैसा आश्चर्य है कि कहां तो वह परमात्मा बादशाहों का भी बादशाह है और कहां वह कंगालों में भी महाकंगाल है। गुरदेव के चिन्तनानुसार कंगालों में भी उसी परमात्मा का ही निवास है। यहां उस ईश्वर की सर्वव्यापकता का भी संकेत है। कालान काल अर्थात् वह ईश्वर मौत का भी काल है। मौत भी उसके अधीन है। उसी की बनाई हुई है और उसी के हुक्म में है।

अनभूत अंग ॥ आभा अभंग ॥
गति मिति अपार ॥ गुन गन उदार ॥९१॥

उपरोक्त बंद में गुरु कलगीधर पातशाह उस अकाल पुरख के विलक्षण एवं अमित स्वरूप का वर्णन करते हुए स्पष्ट करते हैं कि वाहिगुरु जगत-रचना के तत्वों से निराला है अर्थात् वह पांच तत्वों से निर्मित नहीं है। उसका प्रकाश कभी भी क्षीण होने वाला नहीं है अर्थात उसकी ज्योति अखण्ड है। उस ईश्वर की गति तथा मिति अवर्णनीय है, कथन से परे है क्योंकि उसकी अवस्था तथा लम्बाई बेअंत है। कोई भी यह कहने में सक्षम नहीं है कि वह कैसा है और कितना बड़ा है? वह अनंत गुणों का मालिक व उदारचित है अर्थात् खुले दिल वाला है। वह दातें बख्शने में किसी तरह की कंजूसी नहीं करता। उस परमात्मा का अंत नहीं पाया जा सकता। गुरबाणी में अन्यत्र भी प्रमाण है :

ब्रहमा बिसनु रुद्र तिस की सेवा ॥
अंतु न पावहि अलख अभेवा ॥ (पन्ना १०५३)

मुनि गन प्रनाम ॥ निरभै निकाम ॥
अति दुति प्रचंड ॥ मिति गति अखंड ॥९२॥

हे वाहिगुरु! मुनियों के समूह तेरे समक्ष नतमस्तक हैं अर्थात् ऋषि-मुनि, तपस्वी तेरे चरणों में नमस्कार करते हैं। तू निर्भय तथा निष्काम है अर्थात् तू भय से रहित तथा कामना से भी मुक्त है। 'अति दुति प्रचंड'—अति (अत्यधिक), दुति (प्रकाश) तथा प्रचंड (तेज) अर्थात् उस ईश्वर का प्रताप इतना महान एवं प्रभावशाली है कि उसके तेज का सामना नहीं किया जा सकता। वह जितना बड़ा और महान है उससे कम उसे कोई नहीं कर सकता अर्थात् उस अवस्था को कम करके आंका नहीं जा सकता। तेरी मर्यादा निरन्तर एक रस चलती रहती है। उसमें कोई किसी प्रकार की बाधा या रुकावट नहीं आ सकती।

उपरोक्त बंद में 'अति दुति प्रचंड' स्वरूप

***२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन: ०१४१-२६५०३७०*

अर्थात् उस ईश्वर का तेज प्रताप इतना प्रभावशाली व चमक वाला है कि उसे झेला नहीं जा सकता।

आओ! इसे एक रोजमर्रा के उदाहरण से समझने का यत्न करें। किसी वाहन के सड़क पर चलते हुए अगर उसकी लाईट सीधी आंखों पर पड़े तो आंखें बंद हो जाती हैं क्योंकि आंखें उस रोशनी से चौंधिया जाती हैं। जैसे सूर्य जब शिखर पर होता है तो एक पल भी आंखों द्वारा उस ओर देखा नहीं जा सकता। वह ईश्वर तो कोटिश-कोटिश सूर्यों से भी ज्यादा तेज प्रकाश वाला है। उस ईश्वर के तेज को कैसे सहारा जा सकता है? अर्थात् उसका सामना करने का किसमें बल है?

आलिस्य करम ॥ आद्रिस्य धरम ॥
सरबा भरणाढय ॥ अनडंड बाढय ॥९३॥

इस बंद में गुरु पातशाह उस परमात्मा के कुछ और विलक्षण गुणों का वर्णन करते हुए अपनी अपार श्रद्धा व प्रेम-भाव को अभिव्यक्त करते हैं कि वह परमात्मा (आलिस्य करम)! अर्थात् जिसके कर्म किसी विशेष परिश्रम से रहित हैं। उस वाहिगुरु को अपने कर्मों में किसी विशेष प्रयोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती। जैसा कि किसी भी विशेष कार्य को पूरा करने के लिए विशेष उद्यम की आवश्यकता पड़ती है लेकिन उस ईश्वर के साथ कुछ भी ऐसा नहीं है क्योंकि वह अनगिनत विशेष कार्य हर पल करता है बिना किसी विशेष मेहनत या प्रयोजन के। उसके सभी कर्म आलस्य-विहीन हैं। उसका धर्म आदर्श रूप है अर्थात् उस निरंकार का कर्त्तव्य बोध एवं फर्ज निभाने का ढंग निराला है अर्थात् दुनिया के लिए अनुपम व अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करता है। हे ईश्वर! तू समस्त सजावटों और आभूषणों से परिपूर्ण है परंतु किसी की क्या मजाल कि तेरे इस सुसज्जित स्वरूप को बुरी नजर से देखने का दु:साहस करे। तू सबका पालन-पोषण करने वाला है। अगर कोई स्त्री सुंदर कीमती आभूषण धारण करती है तो देखने वालों की कुदृष्टि उस पर पड़ सकती है तथा कोई भी उसे हथियाने के मंद इरादे से उस पर वार कर सकता है यहां तक कि उसके प्राणों तक को खतरा हो सकता है। लेकिन समस्त गहनों से सुसज्जित उस ईश्वर पर कुदृष्टि डालने वाला कोई नहीं है और न ही उसे किसी तरह का कोई नुकसान पहुंचा सकता है। तुझे कोई चेतावनी नहीं दे सकता, तू किसी द्वारा दंडित नहीं किया जा सकता।

चाचरी छंद ॥ त्व प्रसादि ॥
गोबिंदे ॥ मुकंदे ॥ उदारे ॥ अपारे ॥९४॥

गोबिंदे अर्थात् सारी सृष्टि के जीवों का पालनकर्त्ता। मुकंदे अर्थात् सबको मुक्ति देने वाला मुक्तिदाता, उदारे—उदारचित्त, विशाल हृदय वाला। अपारे—बेअंत स्वरूप।

चाचरी छंद में उस निरंकार की कृपा से रचित इस बंद में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी उस अकाल पुरख के चरणों में विनती करते हुए स्पष्ट करते हैं कि वह ईश्वर सारी सृष्टि का पालनहार जीवों को मुक्त (कर्म बंधनों से आजाद) करने वाला है। खुले दिल वाला सबको दातें बख्शने वाला, बेअंत, अपार, समस्त सीमाओं से परे, नेति-नेति स्वरूप है, अत: हे प्रभु तेरा अंत कोई नहीं पा सकता।

हरीअं ॥ करीअं ॥ न्रिनामे ॥ अकामे ॥९५॥

उस परमेश्वर के विविध गुणों का वर्णन करते हुए गुरु कलगीधर पिता फरमान करते हैं कि वह परमात्मा 'हरीअं' अर्थात् नाश करने

वाला, 'करीअं' अर्थात् पालन करने वाला, 'न्रिनामे'—नाम-रहित तथा 'अकामे'—कामना-रहित स्वरूप वाला है।

हे वाहिगुरु! तू सब जीवों का विनाश करने वाला भी है तथा सबकी रचना करने वाला भी है अर्थात् तू ही जीवों का निर्माण करता है, उनकी सृजना तथा विनाश तेरे ही हाथ में हैं। तेरा कोई विशेष नाम नहीं है और किसी तरह की कामना तुझे छू भी नहीं सकती। हे निरंकार! तू निष्काम है।

भुजंग प्रयात छंद ॥
चत्र चक्क्र करता ॥ चत्र चक्क्र हरता ॥
चत्र चक्क्र दाने ॥ चत्र चक्क्र जाने ॥९६॥

भुजंग प्रयात छंद के इस बंद में दशमेश पिता उस परमात्मा का गुणगान करते हुए उसकी सर्वव्यापकता का वर्णन करते हैं कि हे प्रभु! तू सम्पूर्ण सृष्टि के जीवों को पैदा करने वाला है। चत्र अर्थात् चारों, चक्क्र अर्थात् दिशाएं। जिसका आशय है चारों दिशाओं के जीव अर्थात् समस्त रचना तेरे द्वारा ही निर्मित है। समस्त जीवों का नाश करने वाला भी तू है। तू ही सभी जीवों को दातें देने वाला है तथा सबके दिलों की जानने वाला अंतरयामी है।

अक्सर कहा जाता है "दिल दरिआ समुंदरों डूंघे, कौण दिलां दीआं जाणे?" अर्थात् दिलों की गहराई तो समुद्र की तरह असीम है जिसे नापा नहीं जा सकता। परन्तु वह परमात्मा सभी जीवों के दिलों की बात भी जानने वाला है इसलिए उसे अंतरयामी भी कहा गया है। इस तथ्य को गुरबाणी आशय से समझने का यत्न करें, जैसा कि सुखमनी साहिब में पंचम पातशाह का पावन फरमान है :

जिह प्रसादि तेरे सगल छिद्र ढाके ॥
मन सरनी परु ठाकुर प्रभ ता कै ॥
(पन्ना २७०)

अर्थात् जिसकी कृपा के द्वारा तेरे समस्त दोष ढके हुए हैं। हे मन! तू उस ईश्वर की शरण में रह। विचारणीय तथ्य जीव के मन में क्या चल रहा है, इसे दुनिया में कोई नहीं जान सकता जब तक मनुष्य अपनी करनी या विचारों द्वारा स्वयं अभिव्यक्त नहीं कर देता, जब तक कोई स्वयं अपने कर्मों द्वारा अपने अंदर के भावों को प्रकट नहीं कर देता। लेकिन मूढ़ मनुष्य यह भी भूल जाता है कि उस ईश्वर ने कैसी रहमत जीवों पर की हुई है; ईश्वर में यह सामर्थ्य है कि वह मनुष्य का तन, मन, बुद्धि सब कुछ बनाने वाला है और वह उसके अन्त:करण में क्या चल रहा है यह भी उससे नहीं छिपा हुआ। इंसान पाप-कर्मों की ओर लिप्त क्यों होता है? जब उसके जेहन में यह बात घर कर जाती है—एह जग मिट्ठा अगला किन डिट्ठा? अर्थात् इस संसार के झूठे रंगों-रसों को ही हकीकत मान कर उस ईश्वर के घर को भुला बैठता है और निरंतर बुरे कर्मों में लगा रहता है। इसके विपरीत जिस हृदय रूपी घर में ईश्वर की कृपा से यह विश्वास दृढ़ हो जाता है कि सर्वव्यापक अन्तरयामी परमेश्वर सर्वत्र में समाया हुआ है और सबके दिलों की जानने वाला भी है, उसी की करनी निरन्तर श्रेष्ठ होती जाती है। उस हृदय में अच्छे संस्कारों का निर्माण होता है और इस दुर्लभ मानव जीवन की सार्थकता सिद्ध हो जाती है।

चत्र चक्क्र वरती ॥ चत्र चक्क्र भरती ॥
चत्र चक्क्र पाले ॥ चत्र चक्क्र काले ॥९७॥

इस बंद में गुरु पातशाह उस ईश्वर की सर्वव्यापकता की ओर संकेत करते हुए फरमान

करते हैं कि हे परवरदिगार! तू प्रकृति के कण-कण में विद्यमान है, तू सर्वत्र में समाया हुआ है। तू ही सब प्राणियों का पालन-पोषण करने वाला है। तू समस्त जीवों की रक्षा करने वाला है तथा इन्हें नाश करने वाला भी तू ही है। वस्तुतः निराकार होते हुए भी उसकी सर्वत्र उपस्थिति है, वह सब में मौजूद है।

चत्तर चक्क्र पासे ॥ चत्तर चक्क्र वासे ॥
चत्तर चक्क्र मानयै ॥ चत्तर चक्क्र दानयै ॥९८॥

हे परमेश्वर! तू चारों दिशाओं से न्यारा है और सब में समाया हुआ भी है। सारा जगत तेरी ही आराधना करता है अर्थात् सृष्टि का प्रत्येक प्राणी तेरी ही पूजा करता है और तू ही सारे जीवों को दातें (रिज़क) बख्शने वाला है। संसार में सभी जीवों को समस्त पदार्थ प्रदान करने वाला एक तू ही है।

इस बंद में 'पासे' शब्द का अर्थ कुछ विद्वानों द्वारा न्यारा (अलग) अर्थ में लिया गया है और कुछ के द्वारा 'पासे' का अर्थ पास में अर्थात् निकट अर्थ में लिया गया है। वास्तविक अर्थ को तो गुरु जी ही जानते हैं परंतु विद्वानों द्वारा किए ये दोनों ही अर्थ उस ईश्वर की सर्वव्यापकता एवं विलक्षणता के द्योतक हैं। वह सबको सब कुछ देने में समर्थ है क्योंकि उसके भंडार सदैव भरे रहते हैं जैसा कि पंचम पातशाह की बाणी का प्रमाण है :

तूं साझा साहिबु बापु हमारा ॥
नउ निधि तेरै अखुट भंडारा ॥
जिसु तूं देहि सु त्रिपति अघावै सोई भगतु तुमारा जीउ ॥
सभु को आसै तेरी बैठा ॥
घट घट अंतरि तूंहै वुठा ॥
(पन्ना ९७)

चाचरी छंद

न सत्तरै ॥ न मित्तरै ॥
न भरमं ॥ न भित्तरै ॥९९॥

हे ईश्वर! तेरा कोई शत्रु नहीं है अर्थात् तू निरवैर है। तेरी किसी से भी शत्रुता नहीं है। न ही कोई तेरा विशेष मित्र है। तेरे लिए सब जीव समान हैं। न तुझे कोई भ्रम-भुलेखा है, न ही तेरे अंदर कोई दुविधा है और न ही तुझे किसी का भय है।

इस बंद में दुविधा वाले मन पर विचार करने की कोशिश करें। दुविधा से आशय दो-चित, मन अर्थात् किसी परिस्थिति विशेष में डगमगा जाने वाला हृदय। जैसे दो-फाड़ हुआ बीज चाहे वह कितनी भी अच्छी किस्म का क्यों न हो अंकुरित नहीं हो सकता तथा उसके पल्वित-पुष्पित होने की तो गुंजाइश ही नहीं रहती, इसी तरह एक पर विश्वास व भरोसा न रखने वाला मन भी सदैव भटकाव में रहता है। गुरबाणी इस सन्दर्भ में हमारा दिशा-निर्देश करती है जैसा कि पंचम पातशाह 'सुखमनी साहिब' में एक पर भरोसा रखने वाले की अवस्था को बयान करते हैं कि एक ईश्वर पर विश्वास करने वाले को दुख-दरिद्र तो क्या आएगा, उसका तो आवागमन का चक्कर ही समाप्त हो जाता है, यथा :

एक ऊपरि जिसु जन की आसा ॥
तिस की कटीऐ जम की फासा ॥ (पन्ना २८१)

एक अद्वितीय ईश्वर का नाम जपने वाले हृदय का विश्वास भी एक पर बन जाता है, जिससे वह समस्त दुखों-क्लेशों से मुक्त हो जाता है, जिससे आवागमन के बंधनों से भी स्वतन्त्र हो जाता है।



गुरु गाथा-३

उजड़ जाओ ! बसते रहो !

*-डॉ. अमृत कौर**

एक बार श्री गुरु नानक देव जी भ्रमण करते हुए एक गांव में पहुंचे। गांव के लोग बड़े सज्जन और परोपकारी जीव थे। उन्होंने गुरु जी की बहुत सेवा की, आदर-सम्मान किया। चलते समय गुरु जी ने आशीर्वाद दिया "उजड़ जाओ!"

अब गुरु जी दूसरे गांव पहुंचे। वहां के लोग अत्यन्त दुष्ट थे। उन्होंने गुरु जी को बुरा-भला कहा। अतिथि-सत्कार से वे कोसों दूर थे। चलते समय गुरु जी ने आशीर्वाद दिया "बसते रहो!"। रबाबी भाई मरदाना जी उनके प्रिय मित्र, उनकी यात्राओं के सदीवी साथी, यह बात सुन कर चकरा गये और पूछने लगे, "गुरु जी एक बात मुझे समझ में नहीं आई। जिन लोगों ने आप से दुर्व्यवाह किया, जो दुष्ट प्रकृति के हैं, उन्हें आप ने आशीर्वाद दिया "बसते रहो; जो सज्जन प्रकृति के हैं, जिन्होंने आपकी सेवा की, आदर-सम्मान किया, उन्हें आपने कहा उजड़ जाओ। मुझे तो आपका यह रहस्य समझ नहीं आया।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "भाई! जो दुष्ट प्रकृति के हैं उनका एक स्थान पर रहना ही ठीक है। नहीं तो इधर-उधर जाकर दुर्गुणों का प्रसार करेंगे, वातावरण को दूषित करेंगे। जो सज्जन स्वभाव के हैं, वे इधर-उधर जाकर अपने सद्गुणों के प्रसार से वातावरण को स्वच्छ व सुगन्धित बनाएंगे। अत: उनका 'उजड़ जाना' ही उचित है।"



**१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, ज़ीरकपुर-१४०५०३*

ੴ: परमात्मा एक है

(पृष्ठ ८२ का शेष)

उसके ताप से कैसे बच पायेंगे? क्या हम इस वास्तविकता के अनुरूप व्यवहार कर रहे हैं?

जहां तक कथन की बात है, हम सभी मानते हैं कि सृष्टि-कर्ता एक है; परन्तु व्यवहारिक रूप में सबका ईश्वर अलग है। यह मानसिकता हमारी कथनी और करनी में प्राय: छलकती रहती है जिससे भड़के दावानल से मनुष्यता त्राहि-त्राहि कर उठती है। क्या पर-पीड़ा से ही हमें सुख की अनुभूति होती है?

लगता है पहरूए ढीले पड़ गये हैं और उन्होंने जनसाधारण को अंधी सुरंग में भटकने के लिए छोड़ दिया है।

कब चेतेंगे हम? जब सारा उपवन जल कर राख़ हो जाएगा?

अभी भी देर नहीं हुई। जब जागें, तभी सवेरा। कहते हैं, सच्चे मन से की गयी गुहार कभी व्यर्थ नहीं जाती। वह परम-पिता हमारे मन की व्यथा जरूर सुनेगा और उसकी कृपा-दृष्टि द्वारा ही हम इस दलदल से निकल पायेंगे। फिर सब ओर प्रेम ही लहलहायेगा। बस आवश्यकता है, दिल में उस परम-पिता का भय और भाव बसाने की; तभी हम उसके सुपुत्र कहलाने के अधिकारी हो सकेंगे और उसके कृपा-पात्र भी।



दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-१३

महान विद्वान एवं शहीद : कवि धरम सिंह

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

कवि धरम सिंघ श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवियों में विशेष स्थान रखते थे। आप बड़े ही गंभीर, सिदकी, रहत के पूरे सिख, उच्च कोटि के विद्वान एवं शिक्षक और सहृदय कवि थे। यही नहीं आप ने धर्म एवं मानवता के लिए गुरु-कार्य में शहादत भी दी और महान शहीदों की परम्परा का अंग बने।

कवि धरम सिंघ का जन्म पंजाब के मुजफ्फरगढ़ जिले के एक गांव खैरपुर सादात में एक किसान के घर संभवत: १६६०-६५ के आस-पास हुआ। आपके पिता भाई छबील सिंघ गुरु-घर के बड़े श्रद्धालु थे। आपके तीन और भाई— भाई जेठा, भाई सद्दा एवं भाई गुरदास भी गुरु-सेवा में ही समर्पित थे। महान सिख भाई मनी सिंघ भी आपके इलाके के थे। इसलिए आपका भाई मनी सिंघ जी से विशेष प्रेम एवं लगाव था।

कवि धरम सिंघ की विद्वता के विषय में दो बड़े स्पष्ट संकेत मिलते हैं। पहला यह कि आपके बारे में प्रसिद्ध है कि आप साहिबजादा जुझार सिंघ को पढ़ाया करते थे और दूसरा यह कि प्रसिद्ध कवि सोहन आपका शिष्य था। आपसे ही प्रेरणा पाकर कवि सोहन ने प्रसिद्ध कृति 'गुर बिलास' की रचना की थी। कवि धरम सिंघ का अपना कवि-कर्म भी बड़ा उच्च कोटि का है। आपके तीन ग्रंथ अब भी उपलब्ध हैं— पंचतंत्र, कोक संवाद, कथा राजे भरथरी हरी की।

जैसा कि शीर्षकों से स्पष्ट है ये ग्रंथ पुरातन ग्रंथों के आधार पर रचे गये हैं। 'कोक संवाद' में कवि धरम सिंघ का मौलिक कवि-रूप भी मिलता है। इस ग्रंथ के १४ अध्यायों से पूर्व 'मंगलाचरण' के अन्तर्गत सवैयों की रचना की गई है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के अनंदपुर साहिब से चले जाने के बाद कवि धरम सिंघ निरन्तर भाई मनी सिंघ जी के साथ रहे। १७०८ ई में गुरु साहिब के ज्योति-जोत समाने के बाद आप भाई मनी सिंघ जी के साथ झंग जिले के गांव बागां वाले में आ गये और यहां स्थित गुरुधाम में रहने लगे। यहां आप दशमेश पिता की वीरता के प्रसंग गा-गा कर संगत को सुनाते। इस प्रकार कवि धरम सिंघ का नाम गुरु-शोभा गाने वाले भाटों में भी शामिल हो गया।

'भाटों के इतिहास' में कवि धरम सिंघ की शहादत का उल्लेख मिलता है। सिखों के विरुद्ध चल रहे मुगल सल्तनत के दमन-चक्र में अनेक सिंघ शहीद हो रहे थे। उसी दौरान १७११ ई में गांव अल्लोवाल (लाहौर के निकट) सात भाटों को जिंदा जमीन में गाड़ कर शहीद किया गया था। इन सात भाटों में से एक कवि धरम सिंघ थे।

इस प्रकार अपनी विद्वता, मेधा एवं प्रतिभा से जीवन-भर गुरु की सेवा करने वाले कवि धरम सिंघ ने धर्म एवं मानवता की रक्षा के लिए आत्म-बलिदान भी दिया। 

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना।*



ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने श्री अकाल तख़्त साहिब के कार्यवाहक जत्थेदार के रूप में सेवा संभाली

अमृतसर : ७ अगस्त। श्री हरिमंदर साहिब के मुख्य ग्रंथी सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ श्री अकाल तख़्त साहिब के नए जत्थेदार के रूप में श्री अकाल तख़्त साहिब पर आयोजित विशाल धार्मिक समारोह में मर्यादानुसार धार्मिक रस्म पूरी की गई तथा उन्होंने जत्थेदार के रूप में पदभार संभाल लिया। श्री अकाल तख़्त साहिब पर आज सुबह धार्मिक दीवान सजाए गए, गुरबाणी-कीर्तन तथा अरदास के उपरांत श्री हरिमंदर साहिब के ग्रंथी ज्ञानी जसविंदर सिंघ ने शिरोमणि कमेटी की कार्यकारिणी कमेटी द्वारा ज्ञानी गुरबचन सिंघ को श्री अकाल तख़्त साहिब का जत्थेदार बनाए जाने सम्बंधी पारित प्रस्ताव पढ़ कर संगत को सुनाया तथा इस प्रस्ताव पर समूह संगत ने 'जयकारों' के रूप में सहमति प्रदान की। इसके पश्चात मर्यादानुसार श्री हरिमंदर साहिब के ऐडीशनल ग्रंथी ज्ञानी मोहन सिंघ तथा अन्य ग्रंथी साहिबान ने ज्ञानी गुरबचन सिंघ को दस्तार व सिरोपा भेंट किया। उसके बाद दूसरे चारों तख़्त साहिबान के जत्थेदार साहिबान तथा श्री अकाल तख़्त साहिब के मुख्य ग्रंथी की ओर से दस्तारें भेंट की गईं। फिर शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने दस्तार भेंट की। तत्पश्चात टकसालों, सिख जत्थेबंदियों, संप्रदायों, राजनीतिक दलों, सभा-सोसायटियों, शिरोमणि कमेटी सदस्यों, तथा अन्य सभी धार्मिक सभाओं आदि ने भारी मात्रा में मुबारकबाद एवं सम्मान व्यक्त करते हुए नव-निर्वाचित जत्थेदार ज्ञानी गुरबचन सिंघ को दस्तारें भेंट कीं। इस अवसर पर शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष ने ज्ञानी गुरबचन सिंघ को कर्यावाहक जत्थेदार के रूप में सेवा संभालने पर मुबारकबाद देते हुए कहा कि श्री गुरु रामदास जी के पावन दर पर नेक नीति, श्रद्धा तथा सत्कार के साथ की गई सेवा का सदका आज सिंघ साहिब जी को यह महान सेवा बख़्शिश हुई है। उन्होंने कहा कि गुरु कृपा करें, जत्थेदार साहिब को सिख पंथ को दरपेश चुनौतियों का सामना करने के योग्य बनाएं। उन्होंने जोर देकर कहा कि शिरोमणि गु: प्र: कमेटी सिख जगत की चुनी हुई सिरमौर प्रतिनिधि संस्था है और इसके द्वारा किया गया फैसला सिख-पंथ का फैसला है और जो इसके फैसलों की विरोधता करते हैं उन्हें समझा जाएगा कि वे सिख-पंथ-विरोधी ताकतों का साथ दे रहे हैं। उन्होंने इस महान संस्था की अथॉरिटी को चुनौती देने वालों से अपील की कि वे निजी स्वार्थों को त्याग कर कौम के बड़े हितों के लिए जत्थेदार साहिब को सहयोग दें। उन्होंने कहा कि पंथ में जो किसी भी प्रकार की भिन्नताएं हैं, पंथ के हितों की खातिर *'होइ इकत्र मिलहु मेरे भाई दुबिधा दूरि करहु लिव लाइ'* महावाक की रोशनी में मिल-बैठ कर हल की जानी चाहिएं। उन्होंने इस समारोह में पहुंची सभी जत्थेबंदियों, सम्प्रदायों तथा सिख सोसायटियों के साथ समूह संगत का भी धन्यवाद किया।

'इका बाणी इकु गुरु इको सबदु वीचारि' का सिद्धांत सिख कौम की शक्ति है

अमृतसर : ७ अगस्त। सिख पंथ को समय के बराबर बनाने और समकालीन चुनौतियों का सामना करने के लिए एक बड़े यत्न की जरूरत है। मेरी दिली इच्छा है कि सिख कौम की न्यारी हस्ती दुनिया की बाकी कौमों के लिए प्रेरणा-स्रोत बनी रहे। गुरबाणी के पावन फरमान *'इका बाणी इकु गुरु इको सबदु वीचारि'* के अनुसार एक बाणी, एक गुरु तथा एक विचारधारा और एक मर्यादा का सिद्धांत सिख कौम की शक्ति है। इन विचारों का प्रकटावा श्री अकाल तख्त साहिब के नव-निर्वाचित कार्यवाहक जत्थेदार ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने सेवा-संभालने के शुभ अवसर पर पंथ के बड़े प्रतिनिधि इकट्ठ को सम्बोधित करते हुए किया।

जत्थेदार ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने कहा कि छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने श्री हरिमंदर साहिब के ठीक सामने श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना की ताकि समकालीन राजनैतिक दलों को सिख धर्म के अस्तित्व का अहसास होता रहे। श्री अकाल तख्त साहिब से समय-समय पर गुरु-घर के विरोधियों एवं सामाजिक-राजनैतिक बेइंसाफियों के विरुद्ध, और गुरुद्वारों के प्रबंध-सुधार तथा सिखी के प्रचार-प्रसार के लिए लहरें उठती रहीं। तब से लेकर वर्तमान समय तक सिखों की प्रभु-सत्ता-सम्पन्न राजनैतिक सोच के प्रतीक श्री अकाल तख्त साहिब के प्रति समकालीन हकूमतों का नज़रिया हमेशा विरोध वाला रहा। इतिहास साक्षी है कि सिख-पंथ ने श्री अकाल तख्त साहिब से हुए हर हुक्म के आगे सिर झुकाते हुए पंथक मान-मर्यादा को सृजने हेतु अपनी जानों की भी परवाह नहीं की। उन्होंने कहा कि इस समय सिख-पंथ के सामने पतितपन, नशों का सेवन, कन्या-भ्रूण हत्या के साथ-साथ सिख-विरोधी शक्तियों और डेरावाद को उत्साहित करने जैसी कई गंभीर समस्याएं हैं। धार्मिक चेतना की कमी के कारण कई अल्पज्ञ सिख भाई इन डेरेदारों के चुंगल में फंस रहे हैं। उन्होंने समूह सिख संगत, सभा-सोसायटियों, सिंघ सभायों तथा सम्प्रदायों से अपील की कि वे इस नाजुक समय में श्री अकाल तख्त साहिब को पूर्णत: समर्पित होते हुए दास को पूर्व सहयोग दें ताकि वे अपने जिम्मे लगी सेवा गुरु के भय में तथा सिख सिद्धांतों एंव, मर्यादा की रोशनी में निभा सकें।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को दोफाड़ करना बड़ा महंगा पड़ेगा

अमृतसर : ७ अगस्त। केन्द्र की कांग्रेस सरकार के इशारे पर हरियाणा की हुड्डा सरकार द्वारा चट्ठा कमेटी से हरियाणा राज्य के ऐतिहासिक गुरुधामों की अलग प्रबंधक कमेटी सम्बंधी रिपोर्ट शीघ्र पेश करने के लिए फरमान ने कांग्रेस की औकात विश्व भर की सिख संगतों के सामने रख दी है। उक्त शब्दों का प्रकटावा करते हुए शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि हमें पहले से ही आशंका थी कि यदि कांग्रेस सरकार